उत्तर प्रदेश
राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय
प्रयागराज

M.COM-204

विपणन प्रबन्धन

खण्ड
1

उत्पाद एवं मूल्य निर्णयन (Product & Pricing Decision)

इकाई- 3

नवीन उत्पादों का विकास 3

इकाई- 4

ब्राण्ड तथा पैकेजिंग (बण्डन बनाना) 21

इकाई- 5

मूल्य निर्धारण - विधियाँ तथा युक्तियाँ 48

परामर्श-समिति

प्रो0 नागेश्वर राव	कुलपति - अध्यक्ष
डॉ0 हरीशचन्द्र जायसवाल	वरिष्ठ परामर्शदाता - कार्यक्रम संयोजक
श्री एम0 एल0 कनौजिया	कुलसचिव - सचिव

संरचनात्मक सम्पादन

डॉ0 मंजूलिका श्रीवास्तव — निदेशक, दूरस्थ शिक्षा परिषद्, नई दिल्ली

विषयगत सम्पादन

प्रो0 मूल मोतिहार — प्रोफेसर, मोनिरबा, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

लेखक

डॉ0 देवेश रंजन त्रिपाठी — असिस्टेन्ट प्रोफेसर, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

प्रस्तुत पाठ्य सामग्री में विषय से सम्बन्धित सभी तथ्य एवं विचार मौलिक रूप से लेखक के स्वयं के है।

© उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज - 2024

ISBN -

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज सर्वाधिकार सुरक्षित। इस पाठ्य सामग्री का कोई भी अंश उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय की लिखित अनुमति लिए बिना मिमियोग्राफ अथवा किसी अन्य साधन से पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नही है।

प्रकाशक- उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज की ओर से विनय कुमार, कुलसचिव द्वारा मुद्रित एवं प्रकाशित वर्ष - 2024.

मुद्रक - के0 सी0 प्रिटिंग एण्ड एलाइड वर्क्स , पंचवटी , मथुरा - 281003.

इकाई 3 : नवीन उत्पादों का विकास

इकाई की रूपरेखा

3.0 उद्देश्य

3.1 प्रस्तावना

3.2 नवीन उत्पाद विकास का अर्थ तथा क्षेत्र

3.3 नवीन उत्पाद विकास के सिद्धान्त

3.4 नवीन उत्पाद विकास के लिए आवश्यक संगठन

3.5 नवीन उत्पाद विकास के चरण

3.6 नवीन उत्पादों की असफलता

3.7 भारत में नवीन उत्पाद विकास की स्थिति

3.8 सारांश

3.9 उपयोगी शब्दकोष

3.10 स्व-परख प्रश्नावली

3.0 उद्देश्य

इस इकाई के आत्मसात् करने के पश्चात् आप विद्यार्थीगण यह समझने में सक्षम हो सकेंगे कि -

- नवीन उत्पाद विकास का अर्थ तथा कार्य क्षेत्र क्या है?
- नवीन उत्पाद विकास के विभिन्न सिद्धान्त क्या है?
- इस तरह के उत्पाद विकसित करने के लिये कैसा संगठन चाहिए?
- नवीन उत्पाद विकास के विभिन्न चरण,
- नवीन उत्पाद असफलता के कारक, तथा
- भारत में नवीन उत्पाद विकास की स्थिति।

3.1 प्रस्तावना

इकाई दो में हमने उत्पाद का अर्थ, उत्पाद मिश्रण, उत्पाद जीवन चक्र तथा इससे सम्बन्धित विभिन्न पहलुओं को विस्तार से समझा। वस्तुतः किसी भी कम्पनी को बाजार

में अपनी उपस्थिति बनाये रखने के लिये नये-नये उत्पादों के प्रवर्तन का विस्तृत कार्यक्रम बनाना नितान्त आवश्यक होता है परन्तु किसी भी नए उत्पाद की दस्तक अपने आप ही नहीं होती वरन् उक्त कम्पनी को इसके लिए विशेष प्रयत्न करने होते हैं तथा विभिन्न सिद्धान्तों का अनुपालन करते हुए कई योजनाओं का निर्माण करना पड़ता है। वर्तमान इकाई में हम विस्तार से नये उत्पाद के विकास के सम्बन्ध में अध्ययन एवं विश्लेषण करेंगे।

3.2 नवीन उत्पाद का विकास अर्थ तथा क्षेत्र

किसी भी उत्पाद के निर्माण करने से पूर्व उसके बारे में चिन्तन तथा परामर्श किया जाता है इसके बाद ही नियोजन किया जाता है। नियोजन के पश्चात् उत्पाद विकास का चरण आता है जिसका तात्पर्य है उत्पाद के बारे में इस बात की खोज् करना है कि उसका उत्पादन यांत्रिक एवं वाणिज्यिक आधार पर सम्भव है या नहीं अर्थात् इसका निर्माण व्यावहारिक है अथवा नहीं। उत्पाद विकास के सम्बन्ध में विद्वानों के विचार इस प्रकार हैं:-

(1) प्रो0 स्टाण्टन के मतानुसार "उत्पाद के बारे में अनुसन्धान, इन्जीनियरिंग व डिजाइन से सम्बन्धित तकनीकी क्रियाओं को करना ही उत्पाद-विकास कहलाता है।

(2) श्री लिपसन के मतानुसार उत्पाद-विकास वह प्रक्रिया है जिसमें सामान्यतः एक वर्ष की दी हुई अवधि के लिए उत्पाद रेखा में नवीन उत्पाद जोड़ी जाती है, चालू उत्पाद हटायी जाती हैं तथा संशोधित की जाती है।

लेकिन कुछ विद्वानगण उत्पाद परिवर्तन को भी उत्पाद विकास के अन्तर्गत रखते हैं तथा उनके अनुसार वर्तमान उत्पाद की शक्ल आकार, पैकेजिंग, डिजायन, गुण इत्यादि में किंचिंत परिवर्तन करना भी उत्पाद विकास कहलाता है। यह परिवर्तन विक्रेताओं को सन्तुष्ट करने के लिए किया जाता है। वर्तमान में इसी विचारधारा को मान्यता प्रदान की जा रही है। अतः उत्पाद विकास का अर्थ उत्पाद रेखा में नवीन उत्पादों को जोड़ने तथा वर्तमान उपलब्ध उत्पादों के डिजाइनों, आकारों, उपयोगों व पैकेंजिंग आदि में सुधार करने या उत्पादों को उत्पाद रेखा से त्यागने से है।

यही बात किसी संस्था के जन-संसाधनों के अकुशल इस्तेमाल के बारे में व्यक्त की जा सकती है। यदि उत्पादों का नियोजन सही तरीके से न किया जाए और वे बाजार में असफल हो जाएँ, तो सारा प्रयत्न व्यर्थ हो जाएगा। फिर भी यह सत्य है कि कई उत्पादों के साथ ऐसा ही होता है। इसलिये अधिक सावधानी के कार्य करने की

आवश्यकता होती है। आवश्यकता इस बात की भी है कि कंपनी पहले अपने सम्भावित उपभोक्ताओं की आवश्यकता-अपेक्षाओं का मूल्यांकन करे और तभी उपर्युक्त तकनीक के द्वारा उन्हें अधिक से अधिक संतुष्ट करने वाले उत्पाद बाजार में उतारें।

कोई कंपनी तभी बाजार में टिक पाएगी और विकास कर सकेगी जब उसके लाभार्जन में उत्तरोत्तर वृद्धि होती जाये। यह केवल नए उत्पादों की रचना तथा उनके विपणन हेतु अनुकूल कार्यक्रमों के द्वारा ही संभव हो सकती है। परन्तु नए उत्पादों का प्रवर्तन अत्यन्त खर्चीली प्रक्रिया है। अतः उचित शोध, एवं बाजार के गहन अध्ययन के पश्चात् ही सदैव नए उत्पाद की योजना प्रारम्भ करनी चाहिए अन्यथा उत्पाद के असफल होने का खतरा बढ़ जाता है तथा कम्पनी को हानि उठानी पड़ती है।

उपभोक्ता उत्पाद को पसंद करने में अधिक संवेदनशील एवं चयनशील होता जा रहा है। बढ़ती हुए प्रतिस्पर्धा के कारण कम्पनियों के नए-नए उत्पादों के आयोजन एवं प्रवर्तन के अतिरिक्त अन्य कोई विकल्प सुझाई नहीं दे रहा है। अतः अगर हम विश्वविद्यालय प्रबन्ध विद्वान पीटर ड्रकर की दृष्टि से इन्हें देखें तो :- किसी व्यावसायिक संगठन का मुख्य प्रयोजन ग्राहक बनाना होता है, अतः उसके मूल कार्य दो ही होते हैं- विपणन तथा नए उत्पादों का प्रवर्तन। अंततः हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि नव उत्पाद विकास किसी भी व्यवसाय में टिके रहने की आवश्यक शर्त है।

इस प्रकार अब तक आप विद्यार्थीगण यह बात हो समझ ही गए होंगे कि नव उत्पाद विकास के लिए समुचित योजना की महत्वूपर्ण भूमिका होती है। प्रायः यह होता है कि कई उत्पाद बाजार में बिक नहीं पाते, इसलिए कम्पनी की बिक्री को उत्तरोत्तर बढ़ाने के लिए नए उत्पादों को लाना परम आवश्यक हो जाता है। बजाज जैसी बड़ी कम्पनी के भी कुछ उत्पाद असफल हो चुके हैं, फिर भी यह कम्पनी देश की शीर्षस्थ कम्पनियों में से एक है क्योंकि यह अपने उत्पादों में निरन्तर वृद्धि लाती रहती है तथा विविधीकरण के द्वारा नए-नए उत्पाद बाजार में प्रस्तुत करती रहती हैं किसी भी उत्पाद संकल्पना को उत्पाद-निर्माण का रूप देने से पहले इसका पूर्व परीक्षण बहुत जरूरी होता है। साथ ही, नए उत्पाद का विकास करने एवं इसे बाजार में प्रस्तुत करने की समुचित युक्तियों एवं रीतियों को भी तय करना अत्यावश्यक होता है।

नव उत्पाद के विकास में खोज, निरीक्षण, परीक्षण, विकास एवं व्यावसायिक स्तर पर उत्पादन व विक्रय शामिल है। इसलिए इसमें उत्पाद के प्रकार संबंधी निर्णय, इसका विकास, उपभोक्ताओं तक उसकी पूर्ति जिससे वह संतुष्ट हो, ये सभी बातें आ जाती हैं। इस प्रकार की विपणन विचारधारा द्वारा उत्पादों का तर्कसम्मत, स्तरीय एवं प्रमाणिक होना सुनिश्चित हो जाता है और इससे कंपनी को बाजार में अपने प्रतियोगियों

से आगे बने रहने में मदद मिलती है।

इस तरह नए उत्पादों का जन्म नवीन विचारों से आरम्भ होता है, इसके पश्चात् इसकी समुचित जाँच, व्यवसायिक तथा तकनीकी संभावनाओं पर विचार किया जाता है, इसकी विक्रय-क्षमता, उपभोक्ता स्वीकृति इसके उत्कृष्ट उत्पादन तथा बाजार में सफलता आदि पक्षों पर विचार किया जाता है। इसे नए उत्पाद विकास की योजना का उपभोक्तामुखी दृष्टिकोण भी कह सकते हैं।

उपरोक्त विवेचन से आप यह समझ ही गए होंगे कि किसी नवीन उत्पाद का विकास एवं प्रस्तुती अत्यंत परिष्कृत एवं दुरूह प्रक्रिया है जिसके लिए दीर्घकालीन आयोजन की आवश्यकता होती है। इसमें व्यय भी बहुत होता है। किसी उत्पाद के विकसित हो जाने के बाद इसकी विपणन लागत भी बहुत होती है। इतना होने के बाद भी निरन्तर आशंका बनी रहती है कि उत्पाद बाजार में सफल होगा अथवा नहीं। इसलिए यह आवश्यक होता है कि कम्पनी अपना प्रत्येक कदम सोच विचार कर ही उठाए और प्रत्येक के संबंध में सावधानी पूर्वक एवं सुव्यवस्थित रूप से निर्णय ले।

उत्पाद विकास का क्षेत्र

उत्पाद विकास का क्षेत्र अत्यन्त व्यापक है। इसमें उत्पाद से सम्बन्धित समस्त पहलू आ जाते हैं जैसे उत्पाद का आकार, प्रकार, डिजायन, मूल्य, रंग, ब्राण्ड आदि। साथ ही साथ वे सभी बातें भी इसके क्षेत्र के अन्तर्गत आती है जिनसे उत्पाद के बाजार पर प्रभाव पड़ता है। इसमें मुख्यतया निम्न बातें आती हैं :-

(अ) किसी उत्पाद का निर्माण करने से पहले निर्माता को यह निर्णय करना पड़ता है कि वह किस उत्पाद का निर्माण करना चाहता है जिससे कि उसी के अनुरूप, संसाधनों को जुटाया जा सके। इस प्रकार उत्पाद निर्णय विकास का प्रथन सोपान है।

(ब) उत्पाद विकास के क्षेत्र में उत्पाद की डिजायन भी आती है। यहाँ डिजायन के अर्थ में उस उत्पाद का ढाँचा, शक्ल, रंग-रूप, गन्ध, आदि से है। आकार का अर्थ उत्पाद की आकृति से है। यह आकृति कई प्रकार की हो सकती है जैसे छोटी बड़ी व मध्यम।

(स) उत्पाद के विकास में उत्पाद का नाम भी आता है। उत्पाद के नाम से अर्थ उत्पाद का नाम तय करना है। यह नाम ऐसा होना चाहिए जिसको आसानी से याद रखा जा सके तथा जो वस्तु की गुणवत्ता व निर्माता के नाम को प्रदर्शित करता हो जैसे-टाटा, मारूति आदि।

(द) यदि उत्पाद का बाजार निर्माण बाजार है तब रंग आदि का ध्यान रखने की ज्यादा आवश्यकता नहीं है लेकिन यदि इनके विपरीत स्थिति है तो उपभोक्ता की रूचि का भी ध्यान रखना होगा। वास्तव में उत्पाद का रंग उत्पाद को बेचने में बहुत सहायक होता है। भारत में अधिकांश उत्पादों के सम्बन्ध में अभी निर्माता बाजार ही है लेकिन कुछ उत्पादों के सम्बन्ध में परिवर्तन होता दिखायी दे रहा है।

(ग) उत्पाद का मूल्य, उत्पाद विकास में एक बहुत ही महत्वूपर्ण घटक है। यदि मूल्य-नियोजन में कोई गलती या भूल हो जाती है तो व्यवसायी का सारा प्रयत्न विफल हो जाता है। अतः मूल्य नियोजित करते समय उत्पाद की माँग व उसकी चयनशीलता, प्रतियोगिता, उपभोक्ता की देयक क्षमता, उत्पाद का वर्गीकरण, वितरण-तरीका उत्पाद के मूल्य पर सरकारी प्रतिबन्ध, आदि का सदैव ध्यान रखना चाहिए।

(प) उत्पाद विकास में उत्पाद का ब्राण्ड, उसकी पैकेजिंग व लेबिल भी निश्चित करना पड़ता है। ब्राण्ड एक प्रकार का प्रतीक है जिसका प्रयोग उत्पाद का नाम याद रखने के लिए किया जाता है जिससे कि ग्राहक उस उत्पाद को आसानी से पहचान कर खरीद सके। अपने भारत में इसके बहुत से अधिक उदाहरण मिलते हैं, जैसे सफोला वनस्पति तेल, चेरी जूतों की पॉलिस् इत्यादि। पैकेजिंग उत्पाद को सुरक्षित लाने-ले-जाने मे सुविधा देने, उसको खराब होने से रोकने, मध्यस्थों द्वारा की जाने वाली जालसाजी रोकने व उत्पाद के विज्ञापन के लिए किया जाता है। भारत में अधिकांश उत्पाद डिब्बों में पैक किये हुए मिलते हैं।

उत्पादों पर एक लेबिल और लगाया जाता है जिससे उसके पैकेजिंग व उत्पाद में जालसाजी न की जा सके। यह लेबिल साधारणतया अच्छे कागज का होता है। जिसमें उत्पाद के गुण, उसमें मिली हुई उप उत्पादों की मात्रा, ब्राण्ड आदि मुद्रित रहता है।

(ब) उत्पाद के नवीन उपयोगों की खोज भी उत्पाद विकास के क्षेत्र में आता है। नये प्रयोगों का अर्थ है उत्पाद किन-किन नवीन कार्यों में आ सकती है? इस कार्य के लिए अनुसन्धान किया जाता है जो उपभोक्ता व उत्पाद दोनों के सम्बन्ध में हो सकता है।

(भ) उत्पाद विकास का शायद यह महत्पूर्ण कार्य है। उपभोक्ता को गारण्टी दी जाती है कि यदि उत्पाद जल्दी खराब होता है तो बदल दी जायेगी या उसको मुफ्त बना कर दिया जायेगा। इस प्रकार की गारण्टी भी एक सेना है जो विक्रय के पश्चात् की जाती है। गारण्टी का उद्देश्य उपभोक्ता को इस बात का विश्वास दिलाना है कि उनको मूल्य का फल दिया जा रहा है। इस प्रकार उत्पाद विकास

का कार्य बेचने पर ही समाप्त नहीं हो जाता है। बल्कि उपभोक्ता को सन्तोष प्रदान करने के बाद में भी निरन्तर चलता ही रहता है।

3.3 नवीन उत्पाद के सिद्धान्त

विपणन क्षेत्र में उत्पाद विकास के तीन सिद्धान्त बताये गये हैं जो वर्तमान आधुनिक उत्पाद विकास के कार्यक्रमों के आधारभूत एवं अभिन्न अंग बन चुके हैं। इन सिद्धान्तों का विस्तृत विवरण इस प्रकार से है।

(1) प्रमाणीकरण का सिद्धान्त - प्रमाप यह मापदण्ड है जो वास्तविक परिणामों की जाँच हेतु आधार प्रदान करता है। दूसरे शब्दों में प्रमापीकरण उन भौतिक एवं रासायनिक गुणों को स्थापित करने की प्रक्रिया है जो अन्य मदों की तुलना का आधार होते हैं। उत्पादों के विकास में प्रमापीकरण से तात्पर्य उसके आकार, रूप, रंग, मात्रा, किस्म व भौतिक व रासायनिक गुणों से है जो एक उत्पाद में विध्मान होने चाहिए।

भारत में प्रमापीकरण का प्रारम्भ 1947 में भारतीय मानक संस्था की स्थापना से प्रारम्भ हुई। इस समय इस संस्थान की 2000 से अधिक विषय समितियाँ स्थापित है जिनके सदस्यों की संख्या 40 हजार से भी अधिक है। इन विषय समितियों का कार्य मानक निश्चित करना है। भारतीय मानक संस्था ने अब तक 12000 से अधिक मानक निर्धारित किये हैं जिनका उपयोग संस्था के लिए ऐच्छिक है। यहाँ 20 हजार संस्थाएँ ऐसी है जो मानक के उपयोग करने के लिए लाइसेन्स प्राप्त कर चुकी है तथा जो 5000 करोड़ रूपये के मूल्य के उत्पादों का उत्पादन प्रतिवर्ष कर रही है।

(2) सरलीकरण का सिद्धान्त - सरलीकरण का सिद्धान्त अनावश्यक उत्पाद भिन्नताओं, आकार-प्रकार, किस्म, डिजायन आदि में कमी करता है। विपणन कार्यक्रमों को सरल बनाता है भण्डार व्ययों व उत्पाद तथा वितरण व्ययों में कमी लाता है तथा उत्पाद देर से करता है।

(3) विशिष्टीकरण का सिद्धान्त - विशिष्टीकरण का सिद्धान्त उत्पाद विकास के क्षेत्र में अनावश्यक उत्पाद विविधीकरण को समाप्त करने पर जोर देता है तथा विशिष्ट क्षेत्र में नेतृत्व देता है जिससे कर्मचारी कुशलता से बढोत्तरी होती है तथा व्ययों में मितव्ययता आती है। इससे ग्राहकों भी अपने आपको सन्तुष्ट महसूस करता है।

उपरोक्त सिद्धान्त अलग-अलग है किन्तु वे एक-दूसरे से जुड़े हुए हैं। सरलीकरण के अभाव में न तो प्रमापीकरण हो सकता है और न विशिष्टीकरण। इसलिये प्रमापीकरण के अभाव में न तो सरलीकरण हो सकता है और न प्रमापीकरण। इस प्रकार उत्पादों के विकास में इन तीनों सिद्धान्तों का ही अनुसरण किया जाना उचित होता है।

3.4 नवीन उत्पाद विकास के लिए संगठन-

विपणन विकास के लिये संगठन विभिन्न संस्थाओं में अलग-अलग प्रकार के होते हैं लेकिन इन संगठनों में कुछ सामान्तर समानताऐं दृष्टिगत होती है। प्रायः जब भी कोई विचार सामने आता है तब उसकी अनुमति व स्वीकृति व्यवसाय के उच्च प्रबन्धक द्वारा की जाती है। यह विचार एक नये उत्पाद के निर्माण के सम्बन्ध में या पुराने उत्पाद में परिवर्तन के सम्बन्ध में हो सकता है। विचार की स्वीकृति मिल जाने पर उत्पाद विकास विभाग द्वारा प्रारम्भिक जाँच की जाती है तथा उत्पाद सम्बन्धी विशेषताओं को इकट्ठा किया जाता है। । यह सभी सूचनाएँ अभियांत्रिक विभाग को एक प्रारूप बनाने के लिए भेज दिया जाता है। यह संकाय एक प्रारूप बनाकर निर्माण विभाग को भेज देता है। अब निर्माण संकाय उत्पाद का अल्प मात्रा में निर्माण करता है। तत्पश्चात् विक्रय या विपणन परीक्षण विभाग को परीक्षण हेतु हस्तगत करता है। यह संकाय एक निश्चित क्षेत्र में उत्पाद का विक्रय करता है और इस सम्बन्ध में उपभोक्ता एवं मध्यस्थों आदि सभी की प्रतिक्रियाओं को उल्लेखित करता है और इसके अनुसार आवश्यक फेर-बदल हेतु अभियांत्रिक संकाय को एक बार फिर परिवर्तन करने के लिए कहा जाता है। यह संकाय उससे परिवर्तन कर निर्माण विभाग को सौंप देता है जो उस उत्पाद के वाणिज्यीकरण का आधार निर्माण करता है।

NMDC-130

ग्राहकों को उत्पाद के बारे में जानकारी देने व उन्हें खरीदने के लिए लालायित करने के उद्देश्य से विज्ञापन एवं विक्रय-संवर्द्धन अनुभाग भी कार्यवाही करता है और अन्त में उत्पाद उपभोक्ता तक पहुँचता है। यदि उपभोक्ताओं द्वारा फिर भी उत्पादों में बदलाव की माँग की जाती है तो एक बार फिर विपणन अनुसन्धान कर वहीं तरीका अपनाया जाता है। एक संस्था में साधारणतया उत्पाद विकास के लिए निम्न प्रकार का सगठन उपर्युक्त होता है।

किन्तु विभिन्न व्यवसाय में यह अलग-अलग प्रकार का हो सकता है। इस संगठन में विपणन प्रबन्धक को उत्तरदायी बनाया गया है। लेकिन सदैव ऐसा ही हो यह सम्भव नहीं है। कुछ संस्थाएँ इसके लिए उत्पाद प्रबन्धक की भी नियुक्त का प्रावधान करती है।

3.5 नवीन उत्पाद विकास के चरण -

जैसा कि हमने अध्ययन किया है कि इस बात का पता लगाना कि नये विचार को यान्त्रिक एवं वाणिज्यीकरण की दृष्टि से कार्यरूप में परिणित किया जा सकता है। अथवा नहीं, नये उत्पाद का विकास कहलाता है। इसके लिए विभिन्न चरणों से गुजरना पड़ता है। यह सभी चरण उत्पाद की प्रक्रिया में भी अपनाये जाते हैं किसी उत्पाद के विकास या पुराने उत्पाद के नवीनीकरण में अग्रलिखित अवस्थाएँ हो सकती है :-

(1) नया विचार, (2) विचारों की छानबीन, (3) व्यापारिक अध्ययन, (4) उत्पाद विकास, (5) परीक्षाणात्मक विपणन, (6) उत्पाद का वाणिज्यीकरण।

आइये अब इन विभिन्न चरणों को क्रमशः समझने का प्रयास करते हैं :-

(1) नया विचार

नवीन उत्पाद के सम्बन्ध में विभिन्न स्त्रोतों से नये-नये विचार एवं सुझाव आते हैं फिर इन विचारों एवं सुझावों को उत्पाद के रूप में परिवर्तित किया जाता है। सामान्यतया सभी विचारों एवं सुझावों को परिवर्तित नहीं किया जा सकता है। केवल उस विचार एवं सुझाव को ही परिवर्तित करते हैं जो सबसे उत्तम होता है। इसके लिए विचारों का संग्रहण बड़ी मात्रा में किया जाता है। ऐसा कहा गया है कि जितने अधिक विचार होंगे उतनी ही अधिक सम्भावना व प्राथमिकता होगी एक अच्छे विचार के चुने जाने की।

MDC-130

बहुत-सी कम्पनियाँ विचारों को एकत्र करने का सुव्यवस्थित तथा औपचारिक प्रबन्ध नहीं करती हैं जबकि कुछ इस पर अधिक ध्यान केन्द्रित करती हैं और उनके एकत्र करने का उचित मार्ग का निर्धारण करती है। इसका कारण यह है कि विचारों की उपत्ति सदैव नहीं होती और साथ ही विचारों के विस्मृत हो जाने की सम्भावना अधिक रहती है। ग्राहक, तकनीक व प्रतियोगिता सदा ही विचारों को उत्पन्न करते रहते हैं लेकिन उन विचारों में से बहुत कम विचार निर्माता तक पहुँच पाते हैं। निर्माता के सहयोगी, जिनमें विक्रयकर्ता प्रमुख हैं, भी विचारों का सृजन करते हैं लेकिन वे भी अधिकतर भूल जाते हैं। अतः वे निर्माता जो विचारों को एकत्रित करते रहते हैं। इस कार्य के लिए एक अधिकारी की नियुक्ति कर देते हैं जिसका कार्य-विचारों की तलाश करना, विचारों के लिए कर्मचारियों व अन्य को प्रोत्साहित करना, व उन विचारों को सम्बन्धित विभागों को प्रेषित करना होता है। इस प्रकार नवीन उत्पाद सम्बन्धी विचारों का उद्भव विभिन्न स्त्रोतों से होता है उनमें से कुछ प्रमुख इस प्रकार हैं -

(अ) **निर्माता के विक्रयकर्ता** - एक निर्माता के विक्रेता का सीधा सम्बन्ध उपभोक्ताओं से होता है। जब उपभोक्ताओं द्वारा उत्पाद के प्रति अधिक रूचिकर व्यवहार नहीं किया जाता तब उनके द्वारा इस बात का पता लगाने का प्रयत्न किया जाता है कि ग्राहक क्या चाहता है? ग्राहक द्वारा उत्पाद के सम्बन्ध में जिन परिवर्तनों की माँग की जाती है विक्रेता उन परिवर्तनों को अपने निर्माता तक पहुँचा देता है। कभी-कभी स्वयं विक्रेता से शिकायत करते हैं, जैसे वह पैकेट बहुत बड़ा है, हाथ में ले जाने मे सुविधाजनक नहीं है। ऐसी शिकायतों से नये-नये विचार एवं सुझाव मिल जाते हैं। जिनका उपयोग भविष्य में किया जा सकता है।

(ब) **प्रतियोगिता** - प्रतियोगिता के द्वारा भी प्रायः नये विचारों का उद्भव होता है जिनका माध्यम, मध्यस्थ, विक्रेता व विक्रयकर्ता हो सकते हैं। एक कुशल निर्माता प्रतियोगी उत्पादों का अध्ययन एवं विश्लेण अपने विशेषज्ञों द्वारा करता है जिससे उसको नये-नये विचार एवं उत्पाद मिलते रहे।

(स) **वैज्ञानिक** - बड़े-बड़े उत्पाद निर्माता अपने यहाँ प्रयोगशालाएँ रखते हैं तथा उनको चलने के लिए उच्च श्रेणी के वैज्ञानिकों को भी शामिल करते हैं। इन वैज्ञानिकों के द्वारा भी, विचार एवं सुझाव प्रस्तुत किये जाते हैं। कभी-कभी ग्राहकों को निर्माता द्वारा अपने यहाँ आमन्त्रित भी किया जाता है और उनसे उत्पाद के सुधार हेतु विचार व्यक्त करने को कहा जाता है। इन्हीं विचारों की सहायता से नये उत्पाद के निर्माण एवं पुराने उत्पाद के सुधार में सहायता मिलती है।

NMDC-00

(द) **विश्वविद्यालय एवं सरकारी अनुसन्धान** - कभी-कभी उत्पाद सम्बन्धी विचारों का अदान प्रदान शिक्षण संस्थाओं प्रयोगशालाओं के द्वारा भी होता है जो नवीन उत्पाद निर्माण में सहायक होते हैं।

(2) विचारों की छानबीन -

उत्पाद संबंधी सुझावों एवं विचारों को एकत्र करने के पश्चात् उनकी उपयुक्तता तय करने के लिए जाँच की जाती है अर्थात् इस चरण में इकट्ठा किए गए उत्पाद विचारों की आलोचनात्मक विवेचना की जाती है। कम उपयोगी सुझावों को छोड़ दिया जाता है क्योंकि उनको आगे बढ़ने का अर्थ होगा समय और साधनों का गलत दिशा निवेश करना। जाँच एवं मूल्यांकन द्वारा यह पता चलता है कि कौन-कौन से सुझाव आगे स्वीकार करने योग्य हैं तथा किनकों त्याग देना चाहिए।

प्रत्येक सुझाव कम्पनी के उद्देश्यों एवं विपणन लक्ष्यों के अनुरूप होना आवश्यक हैं, और साथ ही, कंपनी की क्षमताओं और सामर्थ्य के अनुसार भी। उदाहरण के तौर पर एक सुझाव प्रौद्योगिक की दृष्टि से ठीक हो सकता है परन्तु इसके क्रियान्वयन में आने वाले भारी निवेश को कंपनी संभवतः न वहन कर सके। इसी प्रकार उचित मूल्य पर स्तरीय उत्पादों को बेचने वाली कंपनी के लिए ऊँची कीमत का नवीन उत्पाद बनाकर बेच पाना संभव न हो क्योंकि इसमें उनकी छवि बाधक होगी। अत सभी सुझावों को मान लेने की अपेक्षा केवल ऐसे सुझावों को ही आगे कार्रवाई के लिए रखा जाए जो कंपनी एवं विपणन संबंधी अपेक्षाओं के अनुरूप हो तथा लाभ कमाने में सक्षम हो।

कम्पनियाँ समस्त सुझावों पर एक साथ काम नहीं कर सकती इसीलिए जाँच का मूल उद्देश्य होता है केवल ऐसे सुझावों को मानना जो सर्वाधिक संभावनापूर्ण लगे। इस प्रयोजन से बाजार क्षमता, लाभप्रदता, संभावित विक्रय की मात्रा, कच्चे माल की उपलब्धता उत्पादन सुविधा, वर्तमान प्लांटों और मशीनों के उपयोग की संभावना, विक्रय की मात्रा, कच्चे माल की उपलब्धता, उत्पादन सुविधा, वर्तमान प्लांटों और मशीनों के उपयोग की संभावना, विक्रय दल और वितरण चैनल, प्रस्तावित परियोजना में कंपनी द्वारा लगाए जा सकने वाले वित्तीय संसाधन आदि कारकों का विश्लेषण करना होता है।

MDC-130

विचारों की जाँच करते समय संसाधन संबंधी आवश्यकताओं और संगठन की इस संबंध में क्षमताओं को सदैव ध्यान में रखा जाना चाहिए। अंततः यदि कंपनी उत्पादन-विचार को स्वीकृत करती देती है, तब निम्नलिखित प्रक्रियाएँ प्रारम्भ होती हैं -

1) विकास परियोजना की स्थापना

2) यदि कुछ परिवर्तनों के सुझाव मिलें हो तो उन्हें प्रारूप में समाहित करना।

3) प्रयोगशाला द्वारा सघन जाँच

4) प्रयोगशाला विपणन नीति के विकास के बाद प्रारूप को परीक्षण के लिए बाजार में प्रस्तुत करना।

(3) व्यापारिक अध्ययन

इस चरण में उद्देश्य इस तथ्य का पता लगाना है कि नये उत्पाद के सम्बन्ध में अग्रम बिक्री, लाभ व उसके प्रतिफल का प्रतिशत कितना होगा? इसका उद्देश्य यह भी तय करना है कि यह सब निर्माता के उद्देश्य के अनुरूप है या नहीं? यदि यह सब अनुरूप है तो नये उत्पाद के निर्माण के लिए प्रयत्न किया जायेगा अन्यथा उस उत्पाद का छोड़ दिया जायेगा। इस कार्य के लिए भविष्य की बिक्री, लागतें एवं लाभों का अनुमान लगाया जा सकता है।

(1) **अग्रिम बिक्री का अनुमान** - अग्रिम बिक्री का सही अनुमान लगाना तो असम्भव है किन्तु उत्पादों का पुराना इतिहास व बाजार की सोच का सावधानीपूर्वक विश्लेषण करके कुछ अनुमान लगाये जा सकते हैं। इस कार्य के लिए कई मॉडल बनाये जा सकते हैं जिनका आधार बार-बार उत्पाद खरीद, व बार-बार खरीद न करना हो सकते हैं। वे उत्पाद जो बार-बार नहीं खरीदे जाते हैं उस श्रेणी में कार, फ्रिज, टेलीविजन, सी०डी०, धुलाई मशीन, ए०सी० आदि हैं तथा दियासलाई, अगरबत्ती, साबुन उस श्रेणी में आते हैं जिनका बार-बार क्रय किया जाता है।

आगामी बिक्री के अनुमान में पहला कार्य पहली बिक्री का अनुमान है यदि उत्पाद की पुनः बिक्री भी होनी हो तो उसका भी पूर्वानुमान लगा दिया जाता है। पुनः बिक्री को स्थानान्तरण बिक्री भी कहते हैं। जब तक कि उत्पाद बाजार में पहली बार न आ जाय, साधारणतया स्थानान्तरण बिक्री का अनुमान लगाना कठिन है लेकिन जो उत्पाद बार-बार खरीदे जाते हैं उनका अनुमान एक विक्रेता द्वारा लगाया जा सकता है। इस बात का भी अनुमान लगाया जाना चाहिए कि स्थानान्तरण बिक्री घटने वाली है या बढ़ने वाली है तथा उसकी दर क्या होगी ?

NMDC-130

(2) **आगामी लागतों का अनुमान** - बहुत से निर्माता विक्रय का अनुमान लगाने के बाद ही लागत का अनुमान लगाते हैं और उसका कारण यह है कि यह कच्चे माल की लागत एवं मजदूरी उत्पादन की मात्रा पर निर्भर करती है। विपणन व्यय का अनुमान भी विक्रय अनुमान के बाद ही लगाया जाता है। लेकिन विपणन व्यय का दुहरा कार्य है, एक ओर तो यह लागत है व दूसरी ओर वह विक्रय को बढ़ाने वाला है। अतः इसका अध्ययन दोनों दृष्टिकोणों के करना आवश्यक होता है।

(3) **आगामी लाभों का अनुमान** - जब माँग या किसी का अनुमान लग जाता है तब निर्माता उत्पाद के कुल बाजार में अपने हिस्से की गणना भी कर सकता है। अब निर्माता विभिन्न बाजार-कार्यक्रम बनाकर लाभ यात्रा का भी अनुमान लगा सकता है।

वास्तव में, व्यावसायिक अध्ययन का मुख्य उद्देश्य एक ऐसे प्रारूप को प्रस्तुत करना है। जिससे यह ज्ञात हो सके कि एक निश्चित समय में अमुक उत्पाद विचार, लाभों, लागतों और विक्रय पर किसी प्रकार डालेगा। इसी बात को दूसरे शब्दों में कह सकते हैं कि वह विचार विशेष कम्पनी व लाभों पर किस प्रकार प्रभाव डालेगा।

(4) उत्पाद विकास

वह विचार जो अप तक सभी दृष्टिकोणों से ठोस एवं उचित प्रतीत होता है, अनुस्थान एवं विकास विभाग को इस उद्देश्य से सौंपा जाता है कि वह अब यह पता लगाये कि क्या वह विचार तकनीकी-वाणिज्यिक दृष्टि से कार्यरूप में परिणित किये जा सकते है? यह कदम काफी विचारणीय है इसका कारण यह है कि अभी तक विचार केवल एक विचार था लेकिन अब उसकी साकार रूप दिया जा रहा है। उत्पाद के विकास में निम्न चार अवस्थाएँ हो सकती हैं :-

(1) प्रारूप का विकास करना :-

जब भी कोई विचार व्यापारिक अध्यायन की अवस्था को पार करता है तब उसे तकनीकी विभाग को हस्तान्तरित कर दिया जाता है। जिससे कि वह ऐसा प्रारूप तैयार करे जो मितव्ययता से निर्मित हो, ग्राहकों को सन्तुष्टि प्रदान करने वाला हो व कठिनाई मुक्त हो। ऐसे कई प्रारूप निर्मित किया जाते है तब कहीं एक सन्तोषजनक प्रारूप का चयन किया जाता है।

(2) उपभोक्ता रूचि परीक्षण :-

MDC-130

जब तकनीकि विभाग द्वारा कई प्रारूप बनाकर तैयार कर दिये जाते हैं तब यह पता लगाया जाता है कि कौन सा प्रारूप अधिक प्रभावी है? इसके लिये उपभोक्ता रूचि परीक्षण किया जाता है। इसका अर्थ है कि उपभोक्ता उन प्रारूपों में से कौन सा प्रारूप पसन्द करता है? इसके लिए उपभोक्ता को आमन्त्रित किया जाता है और उसकी रूचि को अंकित किया जाता है।

इस कार्य के लिए युगल तुलनाएँ, बहुगुणी छाँट व क्रम निर्धारण विधि अपनायी जाती है। यह ध्यान रखनें योग्य हैं कि ये सभी एक साथ नहीं अपनायी जा सकती है बल्कि इनमें से कोई एक विधि ही अपनायी जाती है। जिसके द्वारा जिस प्रारूप को सबसे अधिक पसन्द किया जाता है उसी प्रारूप का चयन अन्तिम रूप से कर लिया जाता है।

(3) **ब्राण्ड** - उत्पाद विकास में उपभोक्ता रूचि के निर्धारण के बाद ब्राण्ड का नाम पेटेण्ट/कापीराइट / ट्रेडमार्क आदि के रजिस्ट्रेशन की समस्या आती है जिसका निर्णय भी नवीन उत्पाद की सफलता को प्रभावित करता है।

(4) **पैकेजिंग** - ब्राण्ड /ट्रेडमार्क / पेटेण्ट के निर्णय के बाद पैकिंग की समस्या आ जाती है जिसका निराकरण भी निर्माता द्वारा किया जाता है।

(5) परीक्षणात्मक विपणन

उत्पाद और प्रयोगात्मक विपणन नीति तैयार हो जाने पर उत्पाद का व्यावसायिक पैमाने पर उत्पादन प्रारम्भ किया जा सकता है। कोई भी विक्रेता अनावश्यक जोखिम उठाना शायद ही पसंद करे इसलिए वह उत्पाद की सफलता की ओर से आश्वस्त होना चाहता है। इसी उद्देश्य से नए उत्पाद का पहले परीक्षणात्मक विपणन किया जाता है ताकि उपभोक्ता की प्रतिक्रिया का पता लगा सके और यदि आवश्यक हो तो उत्पाद में अथवा विपणन मिश्रण में परिवर्तन कर लिए जाएं। अतः परीक्षण विपणन वह अनुसन्धानात्मक प्रक्रिया है जिससे प्रस्तुत उत्पाद को एक या दो चुने हुए स्थानों में विक्रय के लिए उपलब्ध कराया जाता है और उसके प्रति उपभोक्ता व व्यवसाय की प्रतिक्रिया को देखा, सूचीबद्ध और विश्लेषित किया जाता है। उद्देश्य यह होता है कि प्रस्तावित विपणन कार्यक्रम को एक चुने हुए प्रतिनिधि बाजार खंड में उन वास्तविक परिस्थितियों में परखा जाए जो उत्पाद को बाजार में आने पर मिलेगी।

परीक्षणात्मक विपणन के दौरान निम्नलिखित महत्वपूर्ण जानकारी प्राप्त होती है-

(1) बिक्री की उच्चतम सीमा का पूर्वानुमान।

(2) नवीन उत्पादों में रूचि रखने वाले उपभोक्ताओं के सम्बन्ध में जानकारी।

NMBA-130

(3) लक्षित उपभोक्ताओं के अनुमानित व्यवहार से उनकी वास्तविक प्रतिक्रिया का मिलान करना।

(4) उपभोक्ताओं द्वारा नए उत्पादों के गुणों विशिष्टताओं की स्वीकृति।

(5) विज्ञापन द्वारा उत्पाद संबंधी संदेश व दावों के प्रभावों का मूल्यांकन परीक्षण।

(6) लक्षित एवं चुने हुए उपभोक्ता समूहों को नए उत्पाद के वितरण को सुनिश्चित करने हेतु अपनाई गई वितरण व्यवस्था का मूल्यांकन।

(7) प्रस्तावित उत्पादन के माँग की पुनरावृत्ति का पूर्वानुमान।

6. **उत्पाद वाणिज्यीकरण :-** परीक्षणात्मक विपणन के परिणामों के फलस्वरूप उत्पाद में आवश्यक सुधार किये जाते हैं। इन सुधारों के अनुरूप ही विज्ञापन एवं वितरण की युक्तियाँ का निर्धारण किया जाता है जिससे उत्पाद बाजार में प्रतिस्पर्धा के लिए तैयार हो जाता है। तत्पश्चात् उत्पाद का व्यवसायिक उत्पादन प्रारम्भ कर दिया जाता है। इस प्रक्रिया में इस बात का ध्यान रखा जाता है कि उत्पाद को एक बाजार के लिए प्रस्तुत किया जाये अथवा कई बाजारों के लिए।

3.6 नवीन उत्पादों की सफलता -

प्रत्येक स्तर पर सोच-विचार एवं स्पष्ट नीति-निर्धारण के पश्चात् यह सम्भव है कि बाजार में प्रस्तुत सभी उत्पाद सफल न हो पाएँ। प्रायः इनमें से बहुत से असफल हो जाते हैं ओर इन्हें वापस लेना पड़ता है। अतः यह आवश्यक नहीं कि बाजार में प्रस्तुत प्रत्येक उत्पाद सफल ही हो। अब यह प्रश्न उठता है कि उत्पाद बाजार में असफल क्यों हो जाते हैं? प्रसिद्ध विद्वान श्री फिलिप कोटलर ने इसके लिए निम्नलिखित छह कारण स्पष्ट किये हैं-

(1) **उत्पाद सम्बन्धी अवगुणः**- उत्पाद में कोई अवगुण हो सकते हैं जिनके कारण उत्पाद बाजार में असफल हो जाता है। उदाहरण के तौर पर बाजार की आवश्यकता अथवा पसंद की ओर ध्यान न देना आदि।

(2) **मूल्य सम्बन्धी अवगुण** :- किसी उत्पाद के असपल होने में मूल्य का भी काफी योगदान होता है। कभी-कभी प्रारम्भ में लागत का उचित अनुमान न होने के कारण भी उत्पाद के मूल्य अत्यधिक निर्धारित हो जाते हैं। मध्यस्थों को उचित लाभ नहीं मिल पाता है। क्रेता की देय क्षमता का ठीक-ठीक अनुमान न लगने से अधिक मूल्य निर्धारित हो जाते हैं। उत्पाद के मूल्य उसकी गुणवत्ता के देखते हुए अधिक हो जाते हैं। इन सभी कारणों से उत्पाद असफल हो जाता है।

(3) **संवर्द्धन सम्बन्धी अवगुणः**-संवर्द्धन सम्बन्धी प्रयत्नों के उचित दिशा में न होने पर भी उत्पाद असफल हो जाता है। जैसे विज्ञापन में गलत अपीलों का प्रयोग, गलत बाजार-खण्डों में विज्ञापन कराना, संवर्द्धन व वितरण में सहयोग न होना, विक्रय-शक्ति में प्रशिक्षण का प्रभाव, आदि।

(4) **वितरण सम्बन्धी अवगुण** :- उत्पादन को बेचने के लिए मध्ययों का उचित सहयोग प्राप्त न होना, उत्पाद का उचित समय पर या उत्पाद का वितरण व्यवस्था सुव्यवस्थित न होना आदि के कारण भी उत्पाद असफल हो जाते हैं।

(5) **प्रतियोगिता के कारणः**- प्रतियोगिता संस्थाओं के द्वारा उत्पाद मूल्य, संवर्द्धन व वितरण में प्रतियोगिता की जाती है जिससे नये उत्पाद का निर्माता आक्रमणकारी नीति न अपनाकर सुरक्षात्मक नीति अपनाता है। यह नीति उत्पाद असफलता होने में सहायक सिद्ध होता है।

(6) **समयाभाव का कारण** :- उत्पाद विक्रय हेतु उचित समय पर बाजारों में आनी चाहिए। यदि उसके आने में विलम्ब हो या समय पूर्व ही बाजार में आ जाय तो संयुक्त परिस्थितियों में वस्तु के असफल होने की सम्भावनाएँ बढ़ जाती

है। जैसे नये माडल की कोई कार यदि समय से पहले बाजार मे आ जाती है तो प्रतियोगी वैसा ही डिजाइन तथा कर लेता है और प्रतियोगिता की जाती है।

(7) **ऊँची लागत** :- यदि नया उत्पाद बनाने वाली संस्था की लागत अन्य प्रतियोगी संस्था की लागत से अधिक आती है तो नया उत्पाद असफल हो जाता है क्योंकि उसका विक्रय मूल्य प्रतियोगी उत्पाद से अधिक होता है।

(8) **अपर्याप्त विपणन प्रयत्न** :- कुछ संस्थाओं के उत्पाद विपणन प्रयत्नों में कमी के कारण असफल हो जाती है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि असफलता के एक नहीं अनेकानेक कारण विद्दमान है। इनसे बचने के लिए प्रबन्धक में बहुत ही अधिक चतुराई व निपुणता की आवश्यकता होती है जिससे कि विपणन-योजना को ठीक रूप से बनाया जा सके। यह भी आवश्यक है कि संगठन इस प्रकार बनाया जाय कि वह उत्पाद नवीनीकरण व अन्य कार्यों में मार्ग-दर्शन ही नहीं अपितु सहयोग भी स्थापित कर सके।

अतः निर्माता को विपणन के क्षेत्र में दो बातों का ध्यान रखना चाहिए (i) अपने ग्राहक को समझना, व (ii) अपने उत्पाद को जानना।

नवीन उत्पादों की असफलता की रोकथाम हेतु निम्न उपाय किये जा सकते हैं-

(1) **विचारों व उत्पादों की जाँच** - विचारों एवं उत्पादों की जाँच तर्कपूर्ण एवं सर्तकता के साथ करनी चाहिए।

(2) **संगठन परिवर्तन** - यदि संगठन दोषपूर्ण है तो उसमें परिवर्तन करना चाहिए।

(3) **वितरण प्रणाली एवं संवर्द्धन में परिवर्तन** - यदि इस बात की आवश्यकता प्रतीत हो कि वितरण प्रणाली एवं संवर्द्धन में परिवर्तन करना है तो ऐसा परिवर्तन अवश्य ही होना चाहिए।

(4) **अनुसन्धान व विकास** - अनुसन्धान एवं विकास प्रयत्नों पर अधिक बल दिया जाना चाहिए।

(5) **गुणवत्ता नियन्त्रण एवं उत्पाद सुधार** - उत्पाद नियन्त्रण एवं उत्पाद के सुधार किया जाना चाहिए।

(6) **प्रशिक्षण** - नवीन उत्पाद कार्यक्रम के अन्तर्गत जो कर्मचारी एवं अधिकारी कार्य कर रहे हैं उनको उचित प्रशिक्षण की व्यावस्था होनी चाहिए।

जब कभी भी नवीन उत्पाद बाजार में प्रस्तुत किया जायें तो इन निम्न सुझावों को ध्यान में अवश्य ही रखना चाहिए।

(1) ग्राहक सन्तुष्टि

(2) उत्पाद कार्य सन्तोषजनक हो,

(3) उत्पाद की ब्राण्ड एवं उसकी पैकेजिंग हो,

(4) उत्पाद का उत्पादन कम लागत पर हो,

(5) वितरण व्यवस्था उचित हो,

(6) विक्रय के बाद सुव्यवस्थित सेवा प्रदान की जाये।

स्व परख प्रश्न

प्रश्न 1. उत्पाद विकास के क्षेत्र को स्पष्ट करें ?

....

....

....

प्रश्न 2. किसी नए उत्पाद के विकास में मुख्य चरणों का ब्यौरा दीदिए।

....

....

....

NMDC-130

प्रश्न 3. निम्नलिखित कथन सही है या गलत :-

(i) उपभोक्ताओं की बदलती हुई पसंद को देखते हुए उत्पादों में नव-प्रवर्तन को अपनाना आवश्यक नहीं होता है।

(ii) विकास के स्तर पर जिन उत्पादों का परीक्षण भलीभाँति कर लिया जाता है वे बाजार में सदा ही सफल नहीं होता है।

(iii) नए उत्पाद विचारों का जन्म केवल उपभोक्ताओं द्वारा दिए गए विचारों एवं सुझावों द्वारा ही होता है।

(iv) किसी उत्पाद की व्यवसायिक क्षमता का पता व्यावसायिक परीक्षण के द्वारा नही चलता है।

(v) परीक्षणात्मक विपणन के दौरान उत्पाद को लक्ष्य बाजार के केवल एक खंड में ही प्रस्तुत करके नहीं परखा जाता है।

3.7 भारत में नवीन उत्पाद विकास -

सामान्यतः उत्पाद विकास के दो रूप परिलक्षित होते हैं - नवीन उत्पाद का विकास व उत्पाद सुधार इस प्रकार उत्पाद विकास से तात्पर्य प्रक्रियाओं के लिए नवीन उत्पाद के विकास का कार्य करती है या वर्तमान चालू उत्पाद में आवश्यक परिवर्तन करके उत्पाद को नये रूप में बाजार में प्रस्तुत करती है। भारतीय बाजार में विकास की धारा निरन्तर बहती रही है। अतः शायद ही कोई भारतीय उद्योग ऐसा हो उससे अछूता रहा हो। उदाहरण के लिए टी0वी0 उद्योग कुछ दशक पूर्व केवल टी0वी0 टेपरिकार्डर बनाते थे, आज डी0वी0डी0 और कम्प्यूटर बना रहे हैं। इसी करण टेलीफोन उद्योग का भी काफी विकास निरन्तर होता आया है।

अब यहाँ आफटरशेव क्रीम, ठण्डा, पाउडर, शैम्पू केश काले करने के लिये लोशन, अनेक उत्पाद बनने व बिकने लगे हैं। दवा उद्योग जो पहले कुछ ही गिनी चुनी दवा का उत्पादन करता था अब अनेक जीवन रक्षक दवाइयों का निर्माणकर रहा है। खाद्य उद्योग भी इस विकास में किसी से पीछे नहीं रहा है। आज हम सूखा दूध, मक्खन, प्रोटीनयुक्त पदार्थ, मुरब्बा, आचार, इडली, दोसा आदि बनाने के पदार्थ प्राप्त कर सकते हैं। परिवहन उद्योग पहले वाहनों का आयात करता था लेकिन आज निर्यात करता है। यहाँ से मोटरसाइकिल, कार व ट्रक आदि निर्यात किये जा रहे हैं। यहाँ प्रतिवर्ष कारों व मोटर साइकिलों के नवीन मॉडल सामने आ जाते हैं यह यब विकास के ही कारण है। पहले हम वायुयान विदेशों से ही आयात करते थे। अब हम स्वयं इसके निर्माण में सक्षम है। टेलीफोन उद्योग है तथा आज भारत के 10 लाख गाँव टेलीफोन के विभिन्न उत्पादों द्वारा एक दूसरे के सम्पर्क में है।

इस प्रकार यहाँ पिछले 40 वर्षों में उत्पाद विकास का काफी विस्तार हुआ है और आशा है कि ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना में भी इससे निरन्तर वृद्धि होती रहेगी।

3.8 सारांश -

नवीन उत्पाद विकास वह प्रक्रिया है जिससे प्रायः एक वर्ष की दी हुई अवधि के लिए उत्पाद रेखा में नवीन उत्पाद जोड़े जाते हैं। वर्तमान में चल रहे हैं उत्पाद को हटाया जाता है या संशोधित कर दिया जाता है इसका विकास छः चरणों से गुजर कर होता है ये हैं- 1. नये विचार एवं सुझाव, 2. विचारों की गहन जाँच, 3. व्यापारिक अध्ययन, 4. उत्पाद विकास, 5. परीक्षाणात्मक विपणन, 6. उत्पाद का वाणिज्यीकरण। प्रत्येक चरण का उद्देश्य यह अध्ययन करना होता है कि नवीन उत्पाद के विचार एवं सुझाव को प्रारूप में परिवर्तित किया जाये अथवा नही, इस प्रक्रिया द्वारा कम्पनी यह सुनिश्चित

करती है केवल उन विचारों अथवा प्रक्रियाओं के विकास पर ही समय एवं धन निवेशित किया जाये तो व्यवसायिक भाग दिया जाये।

3.9 उपयोगी शब्दकोष -

1. **परीक्षणात्मक विपणन** - ऐसी अवस्था जब उत्पाद की विक्रय क्षमता का वास्तविक बाजार स्थितियों में परीक्षण किया जाता है। ताकि उपभोक्ताओं और वितरकों को इसके प्रति प्रतिक्रिया का पता लगाा जा सके और उत्पाद को बाजार में प्रस्तुत करने और इसके व्यवसायिक उत्पादन के बारे में निर्णय लिया जा सके।

2. **नवीन उत्पाद** - ऐसा उत्पाद जो नई संभावनाओं के द्वारा खोलता हो तथा किसी चालू उत्पाद का स्थान ले लेता है या चालू उत्पाद के लिए बाजार की सुविधा को बढ़ा देता है।

3.10 स्व-परख प्रश्नावली -

प्रश्न-1. उत्पाद विकास का अर्थ समझाइए? इसके प्रमुख सिद्धान्तों एवं लाभों का वर्णन कीजिए।

प्रश्न-2. उत्पादन विकास पर लेख लिखे ?

प्रश्न-3. उन चरणों को विश्लेषित कीजिए जिन्हें किसी नवीन उत्पाद विकास के निमित्त उठाया जाना चाहिए?

प्रश्न-4. उत्पाद विकास के विभिन्न सिद्धान्तों का विश्लेषण कीजिए?

प्रश्न-5. उत्पाद विविधीकरण का अर्थ समझाइए? यह विपणन विभक्तीकरण के किस प्रकार भिन्न है, किन परिस्थितियों में इनमें से प्रत्येक उपयुक्त होगा।

इकाई 4 : ब्राण्ड तथा पैकेजिंग (बण्डल बनाना)

इकाई की रूपरेखा

4.0 उद्देश्य

4.1 प्रस्तावना

4.2 परिचय परिभाषा तथा महत्व

4.3 ब्राण्ड तथा व्यापारिक चिन्ह (ट्रेड मार्क) में अन्तर

4.4 एक प्रभावी ब्राण्ड के गुण

4.5 ब्राण्ड के प्रकार

4.6 ब्राण्ड नीतियाँ, परीक्षण, लाभ तथा हानियाँ

4.7 क्या ब्राण्ड आवश्यक है?

4.8 पैकेजिंग परिचय तथा कार्य

4.9 पैकेजिंग तथा पैकिंग

4.10 पैकेजिंग प्रकार एवं युक्तियाँ

4.11 पैकिंग लाभ तथा महत्व

4.12 सारांश

4.13 उपयोगी शब्दकोष

4.14 स्व-परख प्रश्नावली

NMDC-132

4.0 उद्देश्य

इस इकाई के आत्मसात् करने के पश्चात् आप विद्यार्थीगण यह समझने में सक्षम हो सकेंगे कि -

- ब्राण्ड व्यापारिक चिन्ह तथा पैकेजिंग का प्रभावपूर्ण अर्थ, तथा इसकी व्याख्या,
- ब्राण्ड सुनिश्चित करने के तरीके एवं एक सफल ब्राण्ड के गुण,
- ब्राण्ड निर्णय सम्बन्धी युक्ति-नितियाँ, प्रकार एवं अन्य लाभ तथा,
- पैकेजिंग सम्बन्धी विभिन्न आयाम।

4.1 प्रस्तावना

अभी तक आप विद्यार्थीगण उत्पाद मिश्र के विभिन्न पहलुओं जैसे उत्पाद का

अर्थ, प्रकार, शृंखला, नव उत्पाद विकास प्रक्रिया, तथा उत्पाद जीवन चक्र का विस्तृत अध्ययन कर चुके हैं। ब्राण्ड जिसको हिन्दी में उत्पाद चिन्हीकरण तथा पैकेजिंग जिसको बण्डल बनाना कहते हैं इन दोनों शब्दों का प्रयोग हम अध्ययन सुविधा के लिए ब्राण्ड तथा पैकेजिंग शब्दों के रूप में करेंगे। ये दोनों ही उत्पाद परिचय के दो प्रमुख स्तम्भ हैं। इस इकाई में ब्राण्ड निर्धारण तथा पैकेजिंग का अर्थ तथा इसके महत्व की चर्चा होगी। साथ ही हम ब्राण्ड, पैकेजिंग, निर्णय के लाभ, हानि और इसके चयन के विभिन्न पहलुओं का भी विस्तृत अध्ययन करने का प्रयास करेंगे।

4.2 ब्राण्ड : परिचय, परिभाषा तथा महत्व

अधिकांश उपभोक्ता-उत्पादों तथा बहुत से औद्योगिक उत्पादों को बाजार में अपनी पहचान स्थापित करने हेतु एक विशेष पहचान की आवश्यकता होती है जिसे वे ब्रांड की सहायता से पूर्ण करते हैं। ब्राण्ड किसी ग्राहक को तुरंत उस नाम की याद दिलाता है तथा यह समान श्रेणी के प्रतियोगी उत्पादों से उस उत्पाद की एक अलग पहचान स्थापित करता है। ब्राण्ड निर्धारण की नीतियाँ-युक्तियाँ निर्धारण करना एक निर्णायक कदम हैं। इसमें उत्पाद के लिए एक विशिष्ट नाम का निर्णय किया जाता है, जो उत्पाद को बाजार में प्रस्तुत करता है। प्राचीन काल में जब ब्रांड निर्धारण की संकल्पना अविकसित थी, तब प्रायः परिवार के नाम का प्रयोग किया जाता था। उनमें से कुछ भी प्रचलित है जैसे टाटा, बिड़ला। ब्रांड निर्धारण की दूसरी सामान्य विधि कंपनी द्वारा उत्पादित का नामोल्लेख करना था। इसके दो प्रसिद्ध उदाहरण मारूति तथा एल0जी0 इलेक्ट्रानिक्स है। ऐसा महसूस होता है कि ब्रांड का कार्य उत्पाद के मूल स्रोत परिभाषित करने का रहा है किन्तु यह बात महत्वपूर्ण है कि हाल के वर्षो में ब्रांड नाम संबंधी के लिये सर्वाधिक आवश्यक तत्वों में से एक तत्व रहा है। बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के आने से तथा ज्यो-ज्यों भारत में उत्पाद प्रतियोगिता कठिन होती जा रही है वैसे ही यह अधिक प्रभावशाली निर्णय के रूप में अवतरित होता जा रहा है। आइये अब यह देखें कि वास्तव में ब्रांड नाम है क्या ?

जब विभिन्न उत्पाद निर्माताओं द्वारा निर्मित उत्पाद एक ही रूप रंग, विशेषता आकार प्रकार एवं मूल्य की होती है तब निर्माता यह चाहता है कि उसके उत्पाद पर कोई विशेष प्रकार का चिन्ह स्थापित किया जाये जिसको देखकर उपभोक्ता उत्पाद को सरलता से पहचान सके तब इस प्रक्रिया को हम उत्पाद परिचय कहते हैं।

एक निर्माता को उत्पाद परिचय से लाभ होता है। उसका उत्पाद अन्य उत्पाद निर्माताओं से भिन्न प्रतीत होता है तथा उसे अपना उत्पाद बेचने में सरलता होती हैं इस कार्य के लिए उपभोक्ता को पहले से ही विज्ञापन व विक्रय संवर्द्धन जैसे महत्वपूर्ण

MDC 30

साधनों का प्रयोग कर बता दिया जाता है। उत्पाद परिचय विभिन्न साधनों से किया जाता है लेकिन इसके मुख्यतः दो रूप हो सकते हैं - ब्राण्ड या चिन्ह तथा उत्पाद पैकेजिंग।

वास्तव में ब्रान्ड एक नाम, शब्द, चिन्ह, प्रतीक, निशान या इनका संयुक्त स्वरूप हो सकता है जिसका उपयोग एक विक्रेता द्वारा बेचे जाने वाले किसी उत्पाद या सेवा की अलग पहचान रखने के लिए होता है जिससे उस उत्पाद या सेवा को अन्य प्रतियोगियों के उत्पादों व सेवाओं से अलग दिखाया जा सके।

अतः उपर्युक्त विवेचन ब्राण्ड के कार्यों को सुस्पष्ट करते हैं। इसी प्रकार ब्राण्ड, नाम का वह हिस्सा है जिसकी रचना एक शब्द, एक अक्षर या अक्षरों के एक समूह से होती है जिसे सुगमता से उच्चरित किया जा सके। अगर ब्राण्ड नाम की इस संकल्पना की तुलना ब्राण्ड की परिभाषा से की जाये तो यह पता चलता है कि दोनों के कार्य समान हैं। फिर भी ब्राण्ड नाम उन साधनों में से एक है जिनका उपयोग ब्रांड अपनी पहचान को अलग स्थापित करने के लिए करता है। ब्रांड नाम एक शब्द या शब्दों / अक्षरों का समूह है जिसका उच्चारण किया जा सके, जैसे-घड़ी साबुन, कोलगेट मंजन आदि। इसी प्रकार अपने ब्रांड चिन्ह के विषय में भी प्रायः सुना होगा क्योंकि ब्रांड नाम का उपयोग अपने उत्पाद को प्रतियोगी उत्पाद समूहों की श्रृंखला से अलग पहचान स्थापना के लिए किया जाता है। ब्रांड नाम की अलग पहचान होना आवश्यक है। इससे ब्रांड चिन्ह की संकल्पना का जन्म होता है। ब्रांड चिन्ह एक ऐसा प्रतीक है जिसका उपयोग पहचान स्थापना के लिए किया जाता है। यह एक प्रतीक, एक डिजाइन, विशिष्ट शब्द या इनका मिश्रण भी हो सकता है। दूसरे अर्थों में, यह कोई नाम नहीं है बल्कि पहचान के लिए अपनाया गया है। उदाहरण के लिए उ0 प्र0 सरकार का प्रतीक चिन्ह जिसमें दो मछलियाँ तथा धनुष-बाण को रखा गया है। इसी के साथ-साथ प्रसिद्ध मारूति कार का विशेष तरीके से लिखा गया अंग्रेजी वर्णमाला का "एम0' जिसे देखकर ही मारूति कार की पहचान की जा सकती है।

प्रायः ब्रांड नाम तथा व्यापारिक चिन्ह एक ही अर्थ में प्रयुक्त किये जाते हैं वास्तविकता यह है कि इन दोनों शब्दों में अंतर है। व्यापारिक चिन्ह ब्रांड का कानूनी रूप है। ब्रांड औद्योगिक सम्पत्ति अधिकारों के अंतर्गत आता है और इस तरह दूसरों द्वारा इसके प्रयोग को निषेध किया जा सकता है। अमेरिकी विपणन परिषद् व्यापारिक चिन्ह को परिभाषित करते हुए स्पष्ट करती है कि व्यापारिक चिन्ह एक ब्रांड हैं, जिसे कानूनी संरक्षण प्राप्त है, क्योंकि कानून के अन्तर्गत इसे किसी एक विक्रेता से अधिकृत कर लिया है। अतः हम ट्रेड मार्क की परिभाषा में यह कह सकते हैं कि ब्रांड वह है, जिसे कानूनी

संरक्षण प्रदान किया जाता है और इसलिए इस पर विक्रेता का ही एकमात्र अधिकार होता है।

अतः व्यापार चिन्ह वास्तव में एक विधिक शब्द है। सभी व्यापार चिन्ह एक ब्रांड होते हैं किन्तु किसी ब्रांड को व्यापार चिन्ह तभी कहा जा सकता है जब इसे विधिक रूप से संरक्षित किया गया हो तथा इस पर किसी एक ही विक्रेता का अधिकार हो। चूँकि ब्रांड पंजीकृत करा दिया जाता है इसलिए यह व्यापार चिन्ह हो जाता है तथा इस प्रकार के व्यापार चिन्ह का प्रदर्शन वृत्त के घेरे के रूप में, नाम में, कुछ शब्दों में, या आकृति में, अथवा इन सबको मिलाकर हो सकता है। भारत वर्ष में ब्राण्ड का प्रयोग लगभग सभी निर्माताओं के द्वारा किया जाता है जैसे हिन्दुस्तान लीवर लिमिटेड, एसोसिएटेड समेण्ड कम्पनी का "ए0सी0सी0 सीमेन्ट" साधारणतः ब्राण्ड व व्यापारिक चिन्ह में कोई अन्तर नहीं माना जाता है लेकिन वास्तव में दोनों में महत्वपूर्ण अन्तर होता है और दोनों के अर्थ भी अलग-अलग प्रकट किये जाते हैं। भारत में ट्रेडमार्क के रजिस्ट्रेशन के लिए The Trade & Marchandise Marks Act 1958 निर्माण हुआ है जिसके अन्तर्गत रजिस्ट्रेशन हो जाने पर उस चिन्ह नाम, शब्द या डिजायन के प्रयोग का एकमात्र अधिकार रजिस्ट्रेशन कराने वाली संस्था या व्यक्ति को मिल जाता है। उपर्युक्त विवरण से हम इस निष्कर्ष पर आते हैं कि ब्राण्ड में निम्न विशेषताएँ पायी जाती हैं :-

(क) ब्राण्ड में एक नाम, शब्द चिन्ह व डिजाइन निहित होती है।

(ख) इसका उद्देश्य एक विक्रेता या संस्था के उत्पादतों को पहचानना तथा उत्पादों में विभिन्नता उत्पन्न करना होता है।

(ग) सभी व्यापारिक चिन्ह ब्राण्ड नहीं है लेकिन सभी व्यापारिक चिन्ह ब्राण्ड माने जाते हैं।

(घ) ब्राण्ड का क्षेत्र सीमाओं में बाधा होता है जबकि व्यापारिक चिन्ह का क्षेत्र व्यापक होता है।

4.3 ब्राण्ड तथा व्यापारिक चिन्ह में अन्तर

किसी भी ब्रान्ड या व्यापारिक चिन्ह में अग्रलिखित बिन्दुओं पर अन्तर किया जा सकता है :-

(1) पंजीकरण - ब्राण्ड एक शब्द एक नाम, एक चिन्ह, एक डिजाइन अथवा इनकी सहायता से बना हुआ मिश्रण है किन्तु जब इसी शब्द, नाम, चिन्ह, डिजाइन या मिश्रण का कानून के अन्तर्गत पंजीकृत करा दिया जाता है तब उसे व्यापारिक चिन्ह की संज्ञा दी जाती है।

(2) नकल - यह सम्भव है कि ब्राण्ड की नकल अन्य व्यापारिक संस्थाओं के द्वारा की जा रही हो जिसके फलस्वरूप उनके विरुद्ध कानूनी कार्यवाही सम्भव नहीं हो पाती है लेकिन व्यापारिक चिन्ह की नकल करने वाली संस्थाओं के विरुद्ध कानूनी कार्यवाही की जा सकती है, तथा उनसे अनुशासनात्मक कार्यवाही कर जुर्माना भी वसूला जा सकता है।

(3) क्षेत्र - ब्राण्ड शब्द का क्षेत्र सीमित है जबकि व्यापारिक चिन्ह व्यापक होता है। व्यापारिक चिन्ह में ब्राण्ड शामिल है। पहले ब्राण्ड का निर्णय तत्पश्चात् उसका पंजीकरण कराकर इसे ही व्यापारी चिन्ह कहते हैं।

(4) प्रत्येक ब्राण्ड व्यापारिक चिन्ह नहीं होता - किन्तु प्रत्येक व्यापारिक चिन्ह ब्राण्ड होता है।

(5) प्रयोग - एक व्यापारिक चिन्ह का प्रयोग केवल एक ही निर्माता कर सकता है। उसी को कानूनी रूप से उपयोग करने का अधिकार प्राप्त होता है लेकिन एक ब्राण्ड का उपयोग कई निर्माता या विक्रेता कर सकते हैं।

4.4 ब्राण्ड निर्धारण

NMDC 30

एक निर्माता के द्वारा अपने उत्पाद के लिए किसी भी ब्राण्ड का चुनाव किया जा सकता है और ऐसा करने के लिए उस पर कोई दबाव नहीं होना चाहिए इस बात का सदैव स्मरण रखना चाहिए कि ब्राण्ड कभी भी एक से नहीं होना चाहिए। जिसका प्रयोग पहले ही कोई निर्माता कर रहा हो। एक अच्छे ब्राण्ड में निम्न विशेषताएँ दृष्टिगत होनी चाहिए :-

(1) ब्राण्ड सामान्य होना चाहिए तथा साथ ही छोटा भी, छोटे से तात्पर्य है कि ब्राण्ड या चिन्ह का नाम छोटा होना चाहिए जिससे उसको रखने में सुविधा हो। जैसे- एल0जी0 जिलेट, रसना, मैगी, घड़ी आदि।

(2) ब्राण्ड का सरल उच्चारण किया जा सके। इसका तात्पर्य है कि उसका नाम इस प्रकार से होना चाहिए कि उसे सभी वर्ग एवं आयु के उपभोक्ता आसानी से बोल सकें।

(3) ब्राण्ड में यह विशेषता भी विद्वमान होनी चाहिए कि उसे उसका लक्षित उपभोक्ता वर्ग आसानी से पहचान सके।

(4) ब्राण्ड में सरलता से याद रखने का गुण भी होना चाहिए। जैसे ताजमहल, हिमालय आदि।

(5) ब्राण्ड को समय-समय पर बदलते रहना चाहिए। एक अच्छा ब्राण्ड वही है जो समय के अनुरूप हो।

(6) आकर्षित करने वाला ब्राण्ड में यह गुण भी सम्रहित हो कि वह बोलने व सुनने में तो मधुर लगे है साथ ही उसमें आकर्षित करने का गुण भी हो। जैसे डाबर का लाल दंत मंजन, श्याम बीड़ी आदि।

(7) ब्राण्ड को उत्पाद पर छपवाने व विज्ञापन देते समय इसमें मितव्ययिता का गुण भी होना चाहिए। मितव्ययता का अर्थ है उसमें कम से कम निवेश हो।

(8) ब्राण्ड का नाम सदैव सुझावात्मक होना चाहिए जिससे कि ग्राहक पर उसका गहरा प्रभाव पड़े।

(9) ब्राण्ड में अश्लीलता नहीं होनी चाहिए अर्थात् सामाजिक दृष्टि से स्वीकार्यता होनी चाहिए।

(10) ब्राण्ड पंजीकरण योग्य हो अर्थात उसमें यह गुण भी होनी चाहिए कि वह कानूनी रूप से पंजीकरण की सभी औपचारिकतायें पूरी करता हो।

भारत में इस प्रकार के बहुत से ब्राण्ड उपलब्ध है जो उपरोक्त गुणों में से अधिकतर गुणों को अपनाते हैं। इनमें गोदरेज, डालडा, लक्मे, बजाज, बिड़ला, बाटा, फिलिप्स टाटा, आदि अत्यधिक प्रसिद्ध है।

NMDC-130

4.5 ब्राण्ड के प्रकार

व्यापारिक क्षेत्र में प्रायः चार प्रकार के प्रमुख ब्राण्ड पाये जाते हैं। जिनको वर्गीकरण के आधार पर निम्न प्रकार से विश्लेषित कर सकते हैं :-

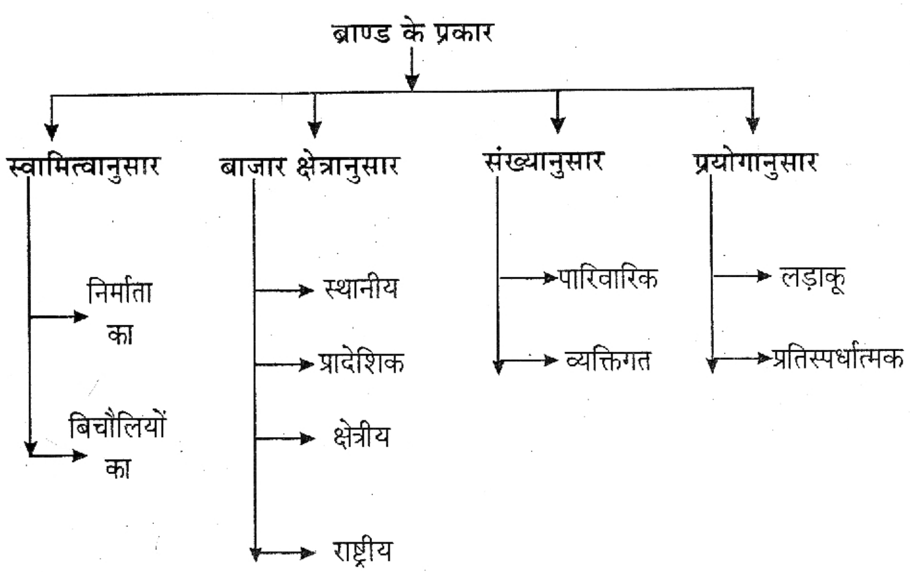

(1) निर्माता का ब्राण्ड :- उत्पाद निर्माता द्वारा प्रयोग किया जाने वाला ब्राण्ड को निर्माता ब्राण्ड कहा जाता है। जैसे एल0जी0 कम्पनी के द्वारा निर्मित टी0वी0, ए0सी0, डी0वी0डी0 आदि पर एल0जी0 कम्पनी की छाप होती है। इस प्रकार जब एक उत्पाद निर्माता के द्वारा निर्मित सभी उत्पादों पर एक चिन्ह होता है और ये उत्पाद उसी एक ब्राण्ड के नाम से सम्पूर्ण देश में विक्रय किये जाते हैं, जब इन्हें राष्ट्रीय ब्राण्ड के नाम से सम्बोधित किया जाता है।

(2) बिचौलियों का ब्राण्ड - जब निर्माणकर्ता अपने उत्पादों पर किसी भी प्रकार के चिन्ह का प्रयोग करता है तब बड़े थोक व्यापारी या फुटकर व्यापारी उन पर अपनी ब्राण्ड की छाप लगाकर बेचते हैं। जिन्हें मध्यस्थ ब्राण्ड की संज्ञा दी जाती हैं। इस ब्राण्ड का वर्गीकरण थोक व्यापारी ब्राण्ड का फुटकर व्यापारी ब्रॉण्ड में किया जा सकता है।

(3) स्थानीय ब्राण्ड - ब्राण्ड जो एक स्थान विशेष पर ही प्रसिद्ध है उस ब्राण्ड को स्थानीय ब्राण्ड की संज्ञा दी जाती है। बहुत से निर्माता अलग-अलग बाजारों का लाभ प्राप्त करने के लिए इस प्रकार की युक्ति को भी अपनाते हैं।

(4) प्रादेशिक ब्राण्ड - वे ब्राण्ड जो एक राज्य विशेष में ही प्रसिद्ध होते हैं प्रादेशिक ब्राण्ड की श्रेणी में आते हैं।

NMDC-130

(5) क्षेत्रीय ब्राण्ड - जब एक उत्पाद निर्माता राष्ट्र को अपने विक्रय के लिए कई भागों में विभक्त कर लेता है और प्रत्येक क्षेत्र में नये-नये ब्राण्डों का उपयोग करता है। तब इस प्रकार के ब्राण्डों को क्षेत्रीय ब्राण्ड की संज्ञा दी जाती है।

(6) राष्ट्रीय ब्राण्ड - इस ब्राण्ड को निर्माता ब्राण्ड के नाम से भी सम्बोधित किया जाता है। जब एक उत्पाद निर्माता देश में केवल एक ही ब्राण्ड का प्रयोग करता है तो उसका यह ब्राण्ड राष्ट्रीय ब्राण्ड कहलाता है।

(7) पारिवारिक ब्राण्ड - जब एक उत्पाद निर्माता अपने सभी प्रकार के उत्पादों के ब्राण्ड जिनका कि वह निर्माण करता है, एक ही रखता है, तब ऐसे ब्राण्ड को पारिवारिक ब्राण्ड, के नाम से सम्बोधित किया जाता है। टाटा ग्रुप के सभी उत्पादनों पर टाटा, बजाज ग्रुप के सभी उत्पादों पर बजाज, शब्दों का प्रयोग किया जाता है। पारिवारिक ब्राण्ड के अन्य उदाहरण गोदरेज, बिरला आदि हो सकते हैं। पारिवारिक ब्राण्ड की नीति अपनाने में सबसे बड़ा लाभ यह है कि विज्ञापन एवं विक्रय संवर्द्धन क्रियाओं पर निवेश कम करना पड़ता है तथा इनके प्रबन्धक में सुविधा होती है। एक उत्पाद के विज्ञापन का लाभ दूसरे को स्वतः ही मिल जाता है। नये उत्पाद को सरलता से प्रचलित किया जा सकता है। लेकिन इस प्रणाली में का सबसे बड़ा दोष यह है कि परिवार के अन्य ब्राण्ड की असफलता का प्रभाव स्वतः ही सारे ब्राण्डों पर पड़ता जाता है।

(8) व्यक्तिगत ब्राण्ड - जब उत्पाद निर्माता पारिवारिक ब्राण्ड की युक्ति नहीं अपनाता है और प्रत्येक उत्पादन के उत्पादन पर अलग-अलग ब्राण्ड की छाप लगाता है तब इसे व्यक्तिगत ब्राण्ड के नाम से सम्बोधित किया जाता है। यह युक्ति की सफलता का राज यह है कि इससे उत्पाद में गुणवत्ता के विभिन्न प्रकार प्रस्तुत किये जा सकते हैं। इस प्रकार के ब्राण्ड का उपयोग करने से प्रत्येक उत्पाद का ब्राण्ड अपना-अपना व्यक्तिगत ब्राण्ड विकसित कर लता है तथा एक उत्पाद की असफलता का प्रभाव दूसरे उत्पाद पर नहीं होता है।

इस युक्ति में दोष का सबसे बड़ा कारण विज्ञान एवं विक्रय संवर्धन पर होने वाला अधिक निवेश है क्योंकि प्रत्येक ब्राण्ड का विज्ञापन अलग-अलग करना पड़ता है। यह युक्ति उन संस्थानों को अवश्य ही अपनानी चाहिए, जिनके उत्पादों के गुणों में अन्तर अधिक होता है और इस कारण इनके मूल्यों में भी अन्तर होता है।

(9) लड़ाकू ब्राण्ड - जब बाजार में प्रतिस्पर्धा तीव्र होती है, तब उत्पादन निर्माण द्वारा एक मूल्य का उत्पाद तैयार कर बाजार में प्रस्तुत किया जाता है। इस प्रकार के उत्पाद ब्राण्ड को लड़ाकू ब्राण्ड के नाम से सम्बोधित किया जाता है।

(10) प्रतिस्पर्धात्मक ब्राण्ड - जब एक उत्पाद निर्माता का सामना अन्य निर्माताओं के उत्पादों से होता है और उन सभी निर्माताओं को उत्पादों के आकार, प्रकार, गुण एवं मूल्य, आदि में विशेष अन्तर नहीं होता तब इस प्रकार के ब्राण्डों को प्रतिस्पर्धात्मक ब्राण्ड कहते हैं जैसे कपड़े धोने वाले साबुनों में 'घड़ी ब्राण्ड व रिन ब्राण्ड'। यह दोनों ब्राण्ड एक-दूसरे के प्रतिस्पर्धात्मक है।

NMC-13

4.6 ब्राण्ड युक्तियाँ, परीक्षण तथा लाभ :

मुख्य ब्राण्ड युक्तियाँ दो प्रकार की होती हैं- (अ) उत्पाद निर्माताओं की ब्राण्ड युक्तियाँ (ब) मध्यस्थों द्वारा अपनायी जाने वाली ब्राण्ड युक्तियाँ।

(अ) उत्पाद निर्माताओं की ब्राण्ड युक्तियाँ - एक उत्पाद निर्माता के द्वारा निम्न में से किसी एक का चुनाव अपने उत्पाद के लिये किया जाता है।

(1) निर्माताओं द्वारा स्वयं अपने ब्राण्ड का विपणन - इस युक्ति के अपनाने में विज्ञापन व विक्रय संबर्द्धन में सरलता होती है और एक उत्पाद निर्माण की ख्याति में भी वृद्धि होती है। यह ब्राण्ड-युक्ति बाजार के नियन्त्रण में भी सफलतम सिद्ध होती है, मूल्यों में भी ठहराव रहता है उत्पादन-मिश्रण के विस्तार में सहायता मिलती है।

लेकिन इस युक्ति के अपनाने में यह समस्याएँ बनी रहती हैं कि उत्पाद सम्बन्धी

प्रचार एवं विज्ञापन को निरन्तर करते रहना पड़ता है तथा गुणवत्ता स्तर को भी बनाये रखना होता है। इनके अलावा और भी कठिनाइयाँ सामने आती हैं-जैसे बड़े फुटकर विक्रेता अपने ब्राण्ड के नाम से उत्पाद को बेचना चाहते हैं वे ऐसे ब्राण्ड की बिक्री नहीं करते हैं। फुटकर विक्रेता की भी यही शिकायत होती है कि उनको लाभ बहुत ही कम मिलता है ऐसा इसलिये क्योंकि उनको मूल्यों में वृद्धि करने का अवसर प्राप्त नहीं होता है।

उत्पाद निर्माता द्वारा इस युक्ति को अपनाने में व्यक्तिगत ब्राण्ड, पारिवारिक ब्राण्ड, स्थानीय ब्राण्ड, क्षेत्रीय ब्राण्ड, प्राधविक ब्राण्ड, लड़ाकू ब्राण्ड, व प्रतिस्पर्धात्मक ब्राण्डों का सहारा लिया जाता है।

(2) मध्यस्थों के ब्राण्ड के अन्तर्गत विपणन - इस युक्ति को अपनाने वाले उत्पाद निर्माता अपने उत्पाद के उत्पादन के लिए किसी ब्राण्ड का प्रयोग नहीं करते बल्कि अपने उत्पादों को मध्यस्थों को बिना ब्राण्ड नाम के ही बेच देते हैं फिर मध्यस्थ उन पर अपनी ब्राण्ड की छाप लगाकर उनका विक्रय अपने नाम से करते हैं।

इस युक्ति को अपनाने में एक उत्पाद निर्माता द्वारा अपने उत्पादन साधनों का प्रयोग सुव्यवस्थित ढंग से किया जा सकता है। लेकिन इस युक्ति का सबसे बड़ा अवगुण यह है कि इसमें उत्पाद निर्माता को मध्यस्थों की दया कृपा पर आश्रित रहना पड़ता है। यदि मध्यस्थों के उत्पाद कम मूल्य पर अन्यत्र मिल जाते हैं तब वे इस उत्पाद निर्माता को छोड़ देते हैं और नये, उत्पाद निर्माता से व्यावसायिक सम्बन्ध जोड़ लेते हैं। इसका तात्पर्य यह है कि मध्यस्थ एक निर्माता से उसी समय तक अपना सम्बन्ध बनाये रखता है जब तक वह किसी उत्पाद के क्षेत्र में अकेला है लेकिन प्रतिस्पर्धा बढ़ने पर उन्हें सस्ता उत्पाद मिलने से वे पुराने निर्माता को छोड़ देते हैं।

(ब) मध्यस्थों द्वारा अपनायी जाने वाली ब्राण्ड युक्तियाँ - एक मध्यस्थ के द्वारा अग्रलिखित ब्राण्ड नीतियों में से किसी एक की चुन कर अपनाया जाता है :-

(1) केवल उत्पाद निर्माताओं के ब्राण्ड का प्रयोग : प्राय अधिकांश मध्यस्थ इसी युक्ति को अपनाते हैं। इस युक्ति में एक मध्यस्थ निर्माताओं के ब्राण्ड की ही बिक्री करता है और अपनी ब्राण्ड को नहीं अपनाता। इसका तात्पर्य यह है कि अपने ब्राण्ड नाम से किसी भी उत्पाद का विक्रय नहीं करता है क्योंकि निर्माताओं के ब्राण्ड अधिक विख्यात होने के कारण अधिक आसानी से बिक जाते हैं और उनकी अधिक बिक्री होने से लाभों में भी वृद्धि हो जाती है। इसके साथ-साथ मध्यस्थ ब्राण्डों के स्तरों को बनाये रखने की जिम्मेदारी से भी बच जाता है क्योंकि उन ब्राण्डों के स्तरों की सारी जिम्मेदारी निर्माताओं पर ही रहती है।

(2) निर्माताओं की ब्राण्ड के साथ अपने ब्राण्ड का जोड़ना- इस युक्ति में एक मध्यस्थ अपने स्वयं के ब्राण्ड का भी विक्रय करता है और साथ अन्य निर्माताओं के ब्राण्डों का भी। निजी ब्राण्ड के मूल्य कम होने से और उत्पाद के गुणों में कोई अन्तर दिखायी न देने से ग्राहक निजी ब्राण्ड की ओर आसानी से आकर्षित हो जाते हैं। मध्यस्थों को अपने उत्पाद की बिक्री से लाभ भी अधिक होता है। उनको स्वतन्त्रता भी होती है कि वे अपने उत्पाद का मूल्य स्वयं निर्धारित कर लें। एक निर्माता के ब्राण्ड की तुलना में मध्यस्थों का निजी ब्राण्ड पर अधिक नियन्त्रण होता है और इस बात की चिन्ता भी नहीं रहती कि निर्माता द्वारा ब्राण्ड को वापस लेने पर वे क्या बेचेगें और क्या नहीं।

जो निर्माता एवं विक्रेता ब्राण्ड का प्रयोग करने की इच्छा करते हैं वे इनका उपयोग करने से पूर्व इस तथ्य की खोज करना चाहते हैं कि ब्राण्ड सभी प्रकार से सर्वोत्तम है या नहीं। इसके लिए ब्राण्ड का परीक्षण करते हैं। इसका परीक्षण पांच तकनीकों से किया जा सकता है। जो कि अग्रलिखित हैः-

(1) **बुद्धिमत्ता परीक्षण :** इस तरीके में कई ब्राण्डों का नाम या चिन्ह प्रस्तुत किये जाते हैं और उपस्थित उपभोक्ताओं को किसी नाम का स्मरण कर बोलने का आग्रह किया जाता है। जिस नाम का स्मरण अधिक उपभोक्ताओं द्वारा प्रस्तुत किया जाता है उस नाम को ब्राण्ड के लिए उपयुक्त मान लिया जाता है।

(2) **वरीयता परीक्षण -** परीक्षण के इस विधि में उपस्थित उपभोक्ताओं से अभिरूचि व्यक्त करने में निवेदन किया जाता है और जिस नाम को अधिक उपभोक्ताओं द्वारा प्रथम वरीयता दी जाती है उसी नाम को ब्राण्ड के लिए उपयुक्त समझा जाता है।

(3) **याददाश्त परीक्षण -** इस तरीके से विभिन्न नामों के उच्चारण व सरलता से लिखने की बात आती है। जिस नाम को सबसे अधिक उपभोक्ताओं द्वारा सही व आसानी से उच्चारित किया जाता है वही नाम ब्राण्ड के लिए चुन लिया जाता है।

(4) **सम्बद्धता परीक्षण -** इस तकनीकि में ब्राण्ड के नामों को उपस्थित उपभोक्ताओं को पढ़कर सुना दिया जाता है या कार्ड पर अंकित कर दिखा दिया जाता है और बाद में उनके मस्तिष्क में जो नाम सबसे पहले आता है उसको लिखने के लिए कहा जाता है।

(5) अद्वितीय परीक्षण – इस परीक्षण में उपभोक्ताओं की अपने प्रस्तावित ब्राण्ड नाम बताये जाते हैं और उनसे यह अनुरोध किया जाता है कि वे इन प्रस्तावित नामों से मिलते जुलते अन्य ब्राण्ड किस ब्राण्ड नाम से मिल रहा है और इस प्रकार इस तकनीकि के आधार पर उचित निर्णय पर पहुँचा जा सकता है।

सामान्यत उत्पाद निर्माता ब्राण्ड नाम तय करते समय उपर्युक्त तकनीकी को अपनाता है। यह उसके साधन व सुविधाओं पर निर्भर करता है। कभी-कभी निर्माता एक तकनीकि को न अपनाकर कई तकनीकी का मिश्रण अपनाता है तथा जो निष्कर्ष सर्वोत्तम कहा जाता है उन्हें ब्राण्ड के लिए अन्तिम रूप से चुन लिया जाता है।

लाभ तथा हानियाँ

ब्राण्ड निर्धारित करने के लाभ तथा हानियों को तीन विभिन्न आयामों से विश्लेषित किया जा सकता है यथा विक्रेता तथा समाज में सन्दर्भ में। आइये अब इनको विश्लेषित करने का प्रयास करें :

क्रेता के सन्दर्भ में लाभ : क्रेता निम्नलिखित लाभों का अर्जन कर सकता है:

1) सामान्यतः ब्रांड से गुणवत्ता में एकरूपता का ज्ञान होता है।

2) इससे खरीदारी आसान हो जाती है।

3) ब्रांडों के बीच प्रतिस्पर्धा के कारण काल-क्रम में उत्पादों की गुणवत्ता स्तर में सुधार हो सकता है।

4) सामाजिक रूप में स्वीकृत ब्रांड क्रेता को एक मनोवैज्ञानिक संतोष प्रदान करता है।

विक्रेता के सन्दर्भ में : विक्रेता को अग्रलिखित लाभ प्राप्त हो सकते हैं :

1) यह उत्पाद की पहचान स्थापित करने में सुविधा प्रदान करता है।

2) जब बाजार में प्रतियोगिता अत्यधिक होती है तब उत्पाद विभेदन द्वारा यह अपने लिये स्थान बना सकता है।

3) यदि सफल संवर्धन प्रक्रियाओं द्वारा ब्रांड विश्वास का विकास किया जा सके तो कम्पनी अर्थ एकाधिकारी शक्ति प्राप्त कर सकती है।

समाज के सन्दर्भ में : सामाजिक दृष्टिकोण से उत्पाद को उन्नत बनाने तथा उसे स्थापित रखने की दृष्टि से ब्रांड की भूमिका सकारात्मक होती है। ब्राण्ड उत्पाद के संबंध में सूचना, उपभोक्ताओं को अधिक वैज्ञानिक तथा तर्कसम्मत निर्णय लेने में सुविधा प्रदान करता है। अतः दुर्लभ संसाधनों का तर्कसंगत आवंटन होगा,

NMDC-30

जिससे सम्पूर्ण समाज में इन लोगों का विभाजन सुनिश्चित हो सकेगा।

ब्रांड निर्धारण से क्रेताओं, विक्रेताओं तथा सम्पूर्ण समाज को अग्रलिखित हानियाँ हो सकती है जिसे निम्नलिखित ढंग से व्यक्त किया सकता है :-

1. क्रेता के सन्दर्भ में :

क` ब्रांड विकास में धन व्यय होने के फलस्वरूप उत्पाद की कीमतें बढ़ती हैं, जिसके फलस्वरूप उपभोक्ताओं को इन उत्पादों के लिए अधिक कीमत चुकानीं पड़ती है।

ख) ब्रांड की लोकप्रियता का लाभ उठाकर उत्पाद निर्माता उस उत्पाद की गुणवत्ता को गिरा सकते हैं।

2. **विक्रेता के सन्दर्भ में :** ब्रांड से जुड़े लाभों की प्राप्ति के लिए उत्पाद निर्माता ब्रांड नाम को प्रोत्साहित तथा विकसित करने के उद्देश्य से निवेश करते हैं। इससे उत्पादन निवेश बढ़ता है, जिससे उत्पाद की कीमत ज्यादा हो जाती है। कीमतों में इस मूल्य वृद्धि के फलस्वरूप विक्रेता के लिए अपने विक्रय उद्देश्य को प्राप्त करना दुर्लभ हो जाता है।

3. **सामाजिक सन्दर्भ में :** ब्रांड के संवर्धन पर जो धनराशि निवेश की जाती है उसे एक सामाजिक व्यय समझा जाता है। इस प्रकार अनावश्यक व्यय से उत्पादन की लागत और बढ़ती है तथा कीमतों में बढ़ोत्तरी होती है। इसे सामाजिक दृष्टि से उचित नहीं समझा जाता है। यह भी अनुभव किया जाता है कि उपभोक्ता इस प्रकार से स्थापित ब्रांडों का उपभोग करने लगेंगे और दूसरे ब्रांडों की ओर आकर्षित होने का प्रयास नहीं करेंगे। इस कारण नए उत्पाद बाजार में प्रवेश से दूर ही रह जाते हैं।

MDC-30

स्व-परख प्रश्न

प्रश्न-1 पारिवारिक तथा व्यक्तिगत ब्रांड स्थापना के बीच अंतर समझाइये ?

....

....

....

प्रश्न-2 चार ऐसे ब्रांडों के नामों का उल्लेख करें जो उत्पाद कार्यों को व्यक्त करते हो?

....

....

....

प्रश्न-3 ऐसे चार ब्रांडों के नामों का उल्लेख कीजिए जिनमें निर्माता के नाभ जुड़े हों?

i) ii)

iii) iv)

प्रश्न-4 पाँच पारिवारिक ब्रांडों के नामों का उल्लेख कीजिए तथा प्रत्येक ब्रांड के अंतर्गत बेचे जाने वाले उत्पादों का विश्लेण कीजिए?

....

....

....

प्रश्न-5 पाँच कंपनियों के नामों का उल्लेख कीजिए जो व्यक्तिगत ब्रांड निर्धारण का अनुसरण करती हैं तथा उनके उत्पादों का विश्लेण कीजिए?

....

....

....

प्रश्न-6 प्रश्न-4 तथा प्रश्न-5 पर आधारित जो ऊपर दिए गये हैं विश्लेषित कीजिए कि किन उत्पादों को पारिवारिक ब्रांड का स्तर प्राप्त है और किन उत्पादों को व्यक्तिगत ब्रांड स्तर का ?

....

....

....

5) निम्नलिखित कथनों में सही व गलत छाँटे :-

i) भारत में ब्रांड नाम का पंजीयन अनिवार्य नहीं है।

ii) ब्रांड चिन्ह तथा व्यापार चिन्ह दोनों एक ही हैं।

iii) ब्रांड से सामान्यतः गुणवत्ता की एकरूपता के संकेत मिलते हैं।

iv) ब्रांड निर्धारण से उत्पाद की पहचान करने में सहायता नहीं मिलती है।

v) सामाजिक दृष्टि से ब्रांड निर्धारण में सदैव धन का अपव्यय होता है यह आवश्यक नहीं।

vi) व्यापार चिन्ह की नकल दूसरा निर्माता कर सकता है।

vii) एक अच्छा ब्रांड वह होता है जिसका उच्चारण आसानी से न हो सके।

4.7 क्या ब्राण्ड चिन्ह आवश्यक है ?

क्या ब्राण्ड चिन्ह का प्रयोग उचित है ? यह ऐसा प्रश्न है, जिसका उत्तर देना आसान नहीं है। कुछ विद्वानों की दृष्टि में यह सर्वथा उचित है जिसके अग्रलिखित कारण हो सकते हैं-

क) उपभोक्ता को उत्पाद चुनाव में सुविधा होती है।

ख) मध्यस्थों द्वारा स्वतः मूल्य वृद्धि नहीं की जा सकती है।

ग) इनके द्वारा धोखेबाजी की सम्भावनाएँ नहीं होती है।

घ) फुटकर मूल्य प्रायः स्थिर रहते हैं।

ङ) निर्माता को भी अपने उत्पाद की गुणवत्ता स्थिर रखनी पड़ती है जिससे उपभोक्ता को गुणवत्ता वाले उत्पाद उपलब्ध रहते हैं।

लेकिन इसके विपरीत कुछ विद्वान ब्राण्ड चिन्ह के प्रयोग को सामाजिक दृष्टि से उचित नहीं मानते हैं और उनके द्वारा यह तर्क दिया जाता है कि -

(1) ब्राण्ड चिन्ह उपभोक्ताओं को विवेकहीन बना देता है और अच्छे उत्पाद का उपयोग नहीं कर पाता है।

NMDC-130

(2) इससे उसको अपने धन का समुचित फल नहीं मिलता है और उसको उत्पाद की गुणवत्ता तुलना में अधिक धन व्यय करना पड़ता है।

(3) जब उत्पाद निर्माता का विक्रेता द्वारा एक ब्राण्ड के विषय में लोकप्रियता प्राप्त कर ली जाती है तो वह उसकी गुणवत्ता की ओर अधिक ध्यान नहीं चाहता है।

(4) भविष्य में उसके द्वारा मूल्य ज्यादा कर अधिक लाभ लेने का प्रयास किया जाता है।

अतः दोनों पक्षों के तर्कसंगत विश्लेषण के पश्चात् हम कह सकते हैं कि यदि ब्राण्ड के बिषय पर कुछ कानूनी लगा दिये जाये तो उसका प्रयोग सामाजिक दृष्टिकोण से भी उचित होगा क्योंकि इससे समाज को अवश्यक ही लाभ प्राप्त होगा।

4.8 पैकेजिंग (बण्डल बनाना) परिचय तथा कार्य

उत्पाद मिश्रण के पैकेजिंग (बण्डल बनाना) पैकेजिंग एक आवश्यक कार्य है क्योंकि बाजार में विक्रय हेतु प्रस्तुत किए गए अधिकांश उत्पादों के लिए पैकेजिंग

अतिआवश्यक होती है। कुछ विक्रेता तो उत्पाद, मूल्य, संवर्धन तथा उत्पाद वितरण के साथ-साथ पैकेजिंग को पाँचवे पी0की संज्ञा भी देते हैं। फिर भी जैसे पहले चिन्तन किया जा चुका है कि विक्रेता पैकेजिंग को उत्पाद मिश्रण का ही एक तत्व स्वीकार करते हैं।

पैकेजिंग को विपणन क्षेत्र में भिन्न दृष्टिकोणों सो समझाया जाता है। जैसे उत्पादों को परिवहन तथा विक्रय के लिए तैयार करने की कलात्मकता तकनीकी को पैकेजिंग कहा जाता। इस प्रकार वर्तमानःप्रतिस्पर्धात्मक युग में पैकेजिंग का अपना स्थापित महत्व है। इसी कारण प्रायः उपभोक्ताओं को बाजार में उत्पाद कागज के डिब्बों, सुन्दर आकार की प्लास्टिक थैलियों तथा टिन में पैक की हुई मिलती है। यही नहीं, उन पर सुन्दर व आकर्षक लेबिल भी लगे रहते हैं तथा उन डिब्बों के अन्दर प्रायः एक मुद्रित कागज भी रखा जाता है जिस पर उत्पाद के उपयोग करने की विधि कई भाषाओं में लिखी रहती है तथा यह भी अंकित रहता है कि उत्पाद किन-किन चीजों से मिलकर बना है। यह सभी उत्पाद विकास के तत्व हैं। इस प्रकार पैकेजिंग, उत्पाद नियोजन व उत्पाद विकास से सम्बन्धित कला एवं विज्ञान है।

4.9 पैकेजिंग एवं पैकिंग में अन्तर

कुछ विद्वान पैकेजिंग व पैकिंग में कोई अन्तर नहीं करते हैं, उनके दृष्टिकोण में दोनों शब्द एक प्रकार से पर्यायवाची है। लेकिन कुछ विद्वानगण पैकेजिंग को पैकिंग का ही एक भाग मानते हैं तथा उनका कथन है कि जब उत्पादों को छोटे-छोटे पैकेटों या डिब्बों में पैक किया जाता है तो उसे पैकेजिंग की संज्ञा दी जाती है। लेकिन जब बहुत से छोटे-छोटे पैकेट डिब्बे या शीशी इकट्ठा एक साथ भेजे जाते हैं तो उनको पैकिंग की संज्ञा दी जाती है। इस प्रकार पैकिंग का ही एक अभिन्न अंग है।

पैकेजिंग उद्योग को दो भाग में विभक्त किया जाता है। (1) फर्म जो सामग्रियों का निर्माण करती है, यथा टिन कागज प्लास्टिक आदि तथा (2) फर्मे है जो इकाई/मुख्य पैकेजिंग के उपयोग में लाए जाने वाले लेबल मुद्रण का कार्य करती हैं। इसके अलावा विपणन शोध एजेन्सियों हैं जो विशिष्ट पैकेजिंग संबंधी शोध एजेंसियाँ हैं जिनका सामान्य उद्देश्य होता है-पैकेज का विकास तथा अनुकूलन।

नयी सामग्रियाँ निरन्तर पैकेजिंग उद्योग में उभर रही हैं, जो बहुत सी स्थितियों में पुरानी सामग्रियों, जैसे-लकड़ी, इस्पात आदि को प्रतिस्थापन कर चुकी है। इसका कारण यह है कि अपेक्षाकृत नई सामग्रियों की लागत कम है या उनमें कार्य संबंधी क्षमताएँ अच्छी हैं। वर्तमान व्यापार की महत्वपूर्ण पैकेजिंग संबंधी सामग्रियाँ अग्रलिखित हैं-

1) धातु - अल्यूमिनियम, टीन प्लेट तथा इस्पात

2) प्लास्टिक - पी.वी.सी., एच.डी.पी.ई. आदि

3) लकड़ी - लकड़ी तथा सेल्युलोज फिल्म

4) कागज - कागज बोर्ड, नालीदार बोर्ड आदि

5) शीशा - पारदर्शी, रंगीन आदि

6) लेमिनेट्स - अल्यूमिनियम परत, प्लास्टिक फिल्म आदि

7) पोलिएस्टर - पेंट

विविध पैकेजिंग सामग्रियां की श्रृंखला के अनुरूप पैकेजिंग संबंधी आकृति के निर्धारण में भी क्रांति हुई है। उपभोक्ता उत्पादों की पैकेजिंग इकाइयों में चौंका देने वाली किस्में सामने आई हैं। प्रमुख कार्टनों, जिसके पैकिंग की इकाई बाँधी जाती है, उत्तरोत्तर बढ़ती रफ्तार से मानकीकृत होती जा रही है। इसका कारण पैकिंग के लिए व्यवहार में आने वाले कन्टेनर हैं, जिनकी सहायक से जहाज लदान के समय सुविधाजनक रीति से चढाया जाता है, इसमें परिवहन के दौरान माल की क्षति नहीं होती है तथा पैकिंग लागत भी कम हो जाती है। इस प्रकार पैकेजिंग के निम्नलिखित कार्य हो सकते हैं, यथा-

NMC-130

1. सुरक्षाः निम्नलिखित पैकेजिंग का प्राथमिक कार्य उत्पाद को पर्यावरणीय तथा अन्य खतरों से सुरक्षा प्रदान करवाना है। ये खतरे उत्पाद के लिए हर क्षण उत्पन्न हो सकते हैं निर्माता के संयंत्र से फुटकर विक्रेता के शेल्फ तक पहुँचने में तथा उस दौरान जब भी ये उत्पाद फुटकर विक्रेता के प्रदर्शन शेल्फ पर रखे गये हैं। कौन से खास-खास खतरों से इन उत्पादों को संरक्षित करना है-ये अलग-अलग उत्पादन के लिए अलग प्रकार के होंगे। फिर भी, जो खतरे लगभग सर्वविदित हैं वे इस प्रकार हैं-

क) परिवहन के दौरान, परिवहन, श्रमिकों अथवा यांत्रिकी उपकरणों द्वारा पैकेज के साथ गलत ढंग से व्यवहार के कारण हुई क्षति।

ख) मौसमी परिवर्तनों के कारण ठंड, नमी तथा गर्मी के कारण पैकेज में बंद सामान का जम जाना तथा उनका पिघल जाना।

ग) जीवाणु सहित तथा जावाणु रहित प्रदूषणों तथा धूल गंदगी अथवा रासायनिक तत्वों से दूषित होना।

घ) नमी अथवा प्रतिकूल तत्वों से निकली गंधों का पैकेज के सामानों द्वारा सोख लिया जाना।

ङ) तरल या वाष्प की हानि।

च) परिवहन के समय की चोरियाँ।

2. वर्तमान प्रतिस्पर्धात्मक युग में पैकेजिंग को उत्तरोत्तर बढ़ती रीति से विक्रय साधन के रूप में उपयोग किया जा रहा है, विशेषतया अनेक प्रकार के उपहार सामग्रियों जैसे-कतिपय कोटि के उत्पादों के विक्रय के लिए। फुटकर व्यवहार के ढाँचे में परिवर्तन के चलते भी इसका महत्व निरन्तर बढ़ रहा है। उपभोक्ता उत्पादों की स्थिति में पैकेजिंग शान्त विक्रय प्रतिनिधि की तरह कार्य सम्भालती हैं। पैकेजिंग का यह काम अपनी रीति से चलता रहता है, इस बात से कोई अंतर नहीं पड़ता कि विक्रय किये जाने वाला उत्पाद विलासिता प्रधान, अथवा रोज़मर्रा के इस्तेमाल का महज़ मामूली उत्पाद है। पैकज़ द्वारा स्वविक्रय कार्य के संपादन को सहायता प्रदान करने हेतु निम्नलिखित विशेषताओं की विशेष रूप श्रेणीबद्ध किया गया है :

क) पैकेज़ में अनिवार्य ध्यानाकर्षण का समावेश होना चाहिए।

ख) पैकेज़ को उत्पाद के सम्बन्ध में समस्त सूचनायें प्रदान करनी चाहिए।

ग) पैकेज़ में आत्मविश्वास उत्पन्न करने की शक्ति होनी चाहिए।

घ) पैकेज को साफ-सुथरा दिखना चाहिए।

च) पैकेज को पकड़ने, उठाने, रखनें, ले-जाने, लेन-देन के लायक होना चाहिए तथा भंडार में रखने में कोई असुविधा नहीं होनी चाहिए।

कई देशों में अध्ययन के परिणामस्वरूप यह पाया जाता है कि कॉस्मेटिक्स, उद्योग में अन्य उद्योगों की अपेक्षा पैकेजिंग निवेश अपेक्षाकृत अधिक होता है। इतनी अधिक पैकेजिंग में निवेश इसलिए नहीं है कि पैकेजिंग से ये उत्पाद सुरक्षित रहती हैं बल्कि इसलिए अधिक हैं कि पैकेज को आकर्षक बनाया जाय। इसे एक प्रतिष्ठा के प्रतीक के रूप में प्रस्तुत किया जाय जिससे इसे खरीदने वालों के अहं की वृद्धि हो। अन्य उत्पाद जैसे-चॉकलेट ऐसे उदाहरण प्रस्तुत करते हैं, जो पैकेज उत्पाद को अधिक दर्शनीय बनाकर विपणन का एक बुनियादी कार्यसम्पन्न करता है।

3. कार्यकुशलता पैकेजिंग का यह तीसरा कार्य है। पैकेज को उस कार्य को अवश्य पूरा करना चाहिए जिसके लिए उसका निर्माण किया गया है। कुछ विशेष प्रकार की पैकेजिंग में यह पहलू निर्णायक होता है। उदाहरण के लिए, दवाओं का पैकेट केवल एक पैकेज ही नहीं अपितु यदि पैकेज काम न करे तो दवा संपूर्णतः महत्वहीन हो जाती है।

4. सुगमताः पैकेज का निर्माण इस प्रकार किया जाना चाहिए कि प्रयोग में किसी प्रकार की असुविधा न हो किन्तु इस संबंध में महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि पैकेज को केवल उपभोक्ता के लिए ही सुविधाजनक नहीं होना चाहिए बल्कि वितरण के सदस्यों के लिए भी सरल होनी चाहिए।

5. लागत प्रभाविताः- पैकेजिंग के अंततः लागत प्रभावी होना चाहिए। यदि पैकेजिंग लागत को उत्पाद के प्रतिशत रूप में लिया जाय तो हम देखेंगे कि यह एक उद्योग से दूसरे उद्योग में बदलता रहता है। एक ओर यह इलेक्ट्रानिक्स उद्योग में एक प्रतिशत से भी कम आता है तो दूसरी ओर काँस्मेटिक उद्योग में यह लागत 10 प्रतिशत बैठता है। इस बात को समझना महत्वपूर्ण है कि जब हम पैकेजिंग की लागत का विश्लेषण करें तो केवल पैकेज की लागत पर ही विचार न करें बल्कि संबंद्धी समग्र लागतों का अध्ययन करें। इस शृंखला की निम्नलिखित कड़ियाँ हैं :-

क) बाहर से खरीदे गये पैकेज की डिलवरी में आने वाली लागत।

ख) खाली पैकेजों के संरक्षण तथा उसके भंडारण पर आने वाली लागत।

ग) पैकेजों में उत्पाद भरे जाने की लागत।

घ) पैकेजों की भंडारण लागत।

NMDC-130

च) पैकेजों की वितरण हेतु परिवहन पर पड़ने वाली लागत।

छ) परिवहन अवधि के लिए बीमा लागत।

ज) उत्पाद की टूट-फूट पर आने वाली लागत।

स्व-परख प्रश्न

प्र0-1 पैकेजिंग तथा पैकिंग में अन्तर बताये?

....

....

....

....

प्र0-2 पैकेजिंग के बुनियादी कार्य स्पष्ट करें?

....

....

....

....

प्र0-3 बताइये कि निम्नांकित कथन सही अथवा गलत

i) पैकेजिंग एक मात्र कार्य उत्पाद को संरक्षण प्रदान करता है।

ii) पैकेज में यह भी क्षमता नहीं होनी चाहिए कि वह क्रेताओं का ध्यान अपनी ओर आकृष्ट करें।

iii) पैकेज के रंग का महत्व होता है।

iv) पैकेजिंग से सदैव उत्पाद लागत में वृद्धि होती है

v) पैकेज की डिजाइन अनिवार्यतः ऐसी नहीं होनी चाहिए कि यह उपयोगकर्ताओं तथा मध्यस्थों के लिए सुविधाजनक न हो।

4.10 पैकेजिंग प्रकार एवं युक्तियों

भारतीय उद्योग जगत में प्रायः पैकेजिंग के निम्न प्रकार पाये जाते हैं :-

1. **वितरण पैकेजिंग :** प्रत्येक उत्पाद को उसके उत्पादन बिन्दु से उपभोक्ताओं तक विभिन्न साधनों के द्वारा पहुँचाया जाता है लेकिन पहुँचाने के लिए उन उत्पादों को उतनी अच्छी प्रकार पैक किया जाता है कि उनको रास्ते में चढ़ाने व उतारने से कोई क्षति न पहुँचे। उत्पाद में इन सम्भावनाओं को रोकने के लिए जो कार्य किया जाता है उसे वितरण पैकेजिंग कहते हैं।

UMDC

2. **ग्राहक पैकेजिंग :** यह वह पैकेज है जिसमें वास्तव में ग्राहक उत्पाद प्राप्त होता है। इसमें गत्ते के डिब्बों, प्लास्टिक की बोतलों व टीन के छोटे-छोटे डिब्बों, का उपयोग किया जाता है तथा उत्पाद के इन डिब्बों, बोतलों व टीन के डिब्बों में रखा जाता है।

3. **उत्पादन लाइन पैकेजिंग -** इस प्रकार के पैकेजिंग में सभी प्रकार के उत्पाद पर, जो एक निर्माता करता हैं, एक सी पैकेजिंग की जाती है तथा सभी पैकेजों पर सामान्य लक्षणों का ही प्रयोग होता है अर्थात् सभी उत्पादों को पैकेज एक जैसे ही प्रतीत होते हैं। इसे परिवार पैकेजिंग के नाम से भी जानते हैं। इस प्रकार के पैकेजिंग का विकास पारिवारिक ब्राण्ड के साथ हुआ है। इस नीति के अपनाने से लाभ यह है कि नये वस्तुओं को पुरानी उत्पादों की प्रसिद्ध को लाभ मिल जाता है तथा उपभोक्ताओं को उत्पाद पहचाने में आसानी रहती है। साधारणतया इस नीति का प्रयोग उसी समय किया जाता है जबकि समान प्रकार के होते हैं।

इस युक्ति को अपनाने में एक कमी है, फिर एक मध्यस्थ दुकानदार की दुकान पर एक ही ब्राण्ड के पैकेज चारों ओर प्रदर्शित होते हैं जिससे उसको छाँटने में कठिनाई

होती है। ग्राहक भी यह सोचने लगता है कि क्या उसके यहाँ केवल एक ही उत्पादकर्ता के उत्पाद हैं तथा वह अन्य दुकानदारों की ओर चला जाता है।

4. बहु-इकाई पैकेजिंग : इसमें एक ही पैकेजिंग में कई इकाइयाँ एक साथ पैक की जाती है जैसे खेलने का सामान, साबुन, माचिस, सिले-सिलाये कपड़े आदि। वे उत्पाद जो छोटे-छोटे है उसके लिए बहु-इकाई पैकेजिंग बहुत सुविधाजनक होती है। इस प्रकार के पैकेजिंग से फुटकर विक्रेताओं को विशेष रूप से लाभ होता है। क्योंकि प्रत्येक इकाई को बार-बार उठाना नहीं पड़ता है और न ही प्रत्येक इकाई पर अलग से मूल्य ही मुद्रित करना पड़ता है। इस प्रकार उनके समय व श्रम की बचत होती है।

5. पुनः उपयोग पैकेजिंग : वस्तुतः इस प्रकार की मूल उत्पाद का उपयोग हो जाने पर उसके पैकेजिंग को अन्य कार्यों में उपयोग किया जाता है जैसे-पेप्सी की बोतल में एक ग्रहिणी के द्वारा फ्रिज के अन्दर पानी रखने का काम किया जाता है। इस प्रकार की पैकेजिंग पुनः खरीद को प्रोत्साहित करती है।

पैकेजिंग संबंधी युक्तियाँ :

पैकेजिंग प्रायः विक्रय संवर्धन अभियानों में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। संवर्द्धन की परिभाषा में यह कहा जाता है कि यह विशिष्ट उत्पाद की बिक्री को उत्कृष्ट करने के निमित्त एक लघुकालीन उपाय है। कई स्वीकृत संवर्धन तकनीकें हैं, जिनमें कुछ इस प्रकार है :-

NMC-138

1. **पैकिंग पर छूट :** पैकेज पर एक विशिष्ट रंग का भड़कीला तथा आकर्षक चिट लगा दिया जाता है जिसमें यह घोषणा छपी रहती है कि विशेष छूट दी जा रही है। यह सबसे प्रचलित विधि है।
2. **कूपन :** एक निश्चित मूल्य वाला कूपन पैकेज के एक हिस्से के रूप में रखा जाता है, जिसे उत्पाद की खरीद के उपरांत भुनाया जा सकता है।
3. **प्रीमियम पैकिंग :** कोई प्रीमियम यानि उपहार उत्पाद के मूल पैकेज में दिया रहता है, जैसे कॉस्मेटिक उत्पाद में रूमाल जिससे उपभोक्ता को यह पैक खरीदने के लिए अतिरिक्त उत्साह मिलता है।
4. **प्रीमियम पैकेज :** विशेष रूप से बनाया गया पैकेज जिसमें पुर्नउपयोगी अथवा प्रतिष्ठामूलक उत्पाद रहता है। मैगी जो आजकल प्लास्टिक के गिलास में रखी मिलती है, इस प्रकार के प्रथम पैक का उदाहरण है।
5. **स्वामापक :** क्रेता को डिब्बे की एक निश्चित या आंशिक संख्या कंपनी के पास भेजनी पड़ती है, जो इस बात का साक्ष्य है कि कंपनी द्वारा बेचा गया

उत्पाद खरीदा गया है। बदले में क्रेता उसी उत्पाद को कम कीमत पर दुबारा खरीद सकता है अथवा उसे अलग किस्म के उत्पाद का पारितोषिक प्रदान किया जा सकता है। भारत में कई कंपनियाँ प्रक्रमित खाद्य पदार्थ या पेय उद्योग के क्षेत्र में समय-समय पर इस तकनीक का उपयोग करते हैं।

6. **पैकेज का बदलाना :** नए पैकेज का उपयोग भी बाजार में प्रवेश कराने की संवर्धन तकनीक की तरह होता है उदाहरण के लिए भारत में अभी हाल के वर्षो तक खाद्य तेल टिन डिब्बों में पैक किया जाता था। जो गंदा दिखायी देता था। अब अधिकांश बड़ी फार्मों ने एक लीटर में पारदर्शी पैकट में तेलों को पैक करना शुरू कर दिया है जो चमकदार तथा ताजे दिखाई देते हैं। कंपनियाँ डिब्बाबंदी के इस परिवर्तित रूप को कारगर रीति से विज्ञान में अतिरिक्त सहायक तत्व के रूप में प्रयोग में ला रही है। लगभग पाँच वर्ष पूर्व श्याम बीड़ी को नये पैकेट में प्रस्तुत किया गया था, और ऐसा उ० प्र० मे प्रथम बार किया गया था। पनामा ब्रांड की तत्काल लोकप्रियता मूलतः इस नवीनता के कारण प्राप्त हो सकी। पैकेज परिवर्तन की इस युक्ति का अनुसरण या तो चालू कंटेनर में निहित किसी दुर्बलता को दूर करने के लिए किया जाता है अथवा नयी सामग्री का लाभ उठाने हेतु।

7 **असंगत आकार की डिब्बाबंदी :** प्रतियोगी उत्पादों के मूल्यों की तुलना से बचने के लिए भी डिब्बाबंदी का चतुरतापूर्वक प्रयोग किया जाता है। इसे जानबूझकर बेमेल या बेढंगे आकार के पैकेज चयन द्वारा किया जाता है, जबकि प्रतियोगी ब्रांड मानक आकार का पैकेज उपयोग में लाते हैं। भारत में हाल के वर्षों में एक ऐसा उदाहरण शीतल पेय रसना का है जो बाजार में 250 ग्राम की बोतलों में प्रस्तुत किया गया था, जबकि उद्योगवार इसका मानक आकार 500 ग्राम की बोतलों का था।

8. **उत्पाद श्रृंखला की पैकेजिंग :** अनेक उत्पादों की पैकेजिंग में पारिवारिक एकरूपता को विकसित करने के लिए भी पैकेजिंग का उपयोग किया जा सकता है। एक ही प्रकार के पैकेज अथवा कतिपय सामान्य विशेषताओं वाले पैकेज का प्रयोग एक उत्पादन श्रृंखला के सभी उत्पादों के लिए किया जा सकता है। इस प्रकार की पैकेजिंग युक्ति को पारिवारिक ब्रांड निर्धारण का लाभ मिल जाता है। इस युक्ति के अंतर्गत जब नये उत्पाद, उत्पादों की श्रृंखला में जोड़े जाते हैं तब पुराने उत्पादों के साथ जुड़े संवर्धन लाभ नये उत्पादों को भी प्राप्त हो जाते हैं।

9. **बहुसंख्यक पैकेजिंग :** यदि एक ही कंटेनर में एक से अधिक इकाइयाँ रखी जाती हैं तो इस प्रकार की पैकेजिंग को बहुसंख्यक पैकेजिंग कहा जाता है। इस पैकेजिंग युक्ति से बिक्री में अत्यधिक बढोत्तरी होती है।

10. **पैकेजिंग एक विपणन उपकरण के रूप में :** बहुत सी नवीनता प्रधान युक्तियाँ है जिन्हें अपनाकर पैकेजिंग के जरिए बिक्री के नए कीर्तिमान प्राप्त किए जा सकते हैं। प्रक्रमिक खाद्यय पदार्थ के क्षेत्र में उत्पाद जितनी देर तक विक्रेता के शेल्फ में पड़ा रहता है उस पर निरंतर गति से विचार करना एक महत्वपूर्ण बात है। कोई भी कम्पनी जो तैयार अथवा आधे तैयार किए गये भोजन में ऐसा तत्व जोड़ता है, जो खाद्य पदार्थ को दीर्घायु करता है वह अन्य फर्मों की अपेक्षा अधिक सफल होगा। फर्म की ओर से एक बिकाऊ खाद्य पदार्थों में ताजगी बनाए रखने की गारंटी दी जाती है।

4.11 पैकेजिंग के लाभ तथा महत्व

प्रायः पैकेजिंग के लाभों का अध्याय तीन दृष्टिकोणों के अन्तर्गत किया जा सकता है :-

1. प्रायः निर्माताओं को पैकेजिंग से सबसे बड़ा लाभ यह होता है कि उनके उत्पाद खराब होने से बच जाते हैं तथा उनकी गुणवत्ता बरकरार रहती है तथा उत्पादों में गिरावट की सम्भावनाएँ भी कम हो जाती हैं, इसी के साथ-साथ पैकेजिंग से विज्ञापन करने एवं उस पर ब्राण्ड छापने में सुविधा होती है जो विक्रय संवर्द्धन का कार्य करता है। अतः गुणवत्तायुक्त पैकेजिंग निर्माता की ख्याति में वृद्धि करती है।

2. इसके अलावा उत्पादों को एक स्थान से दूसरे स्थान पर भेजने में भी पैकेजिंग सुविधा जनक रहती है तथा अच्छी पैकेजिंग वस्तु का स्वयं ही विज्ञापन करती है जिससे उस उत्पाद के विक्रय में सुविधा रहती है।

3. उपभोक्ता की दृष्टि से लाने में सुविधा, मिलावट की कम सम्भावनाएँ तथा उपयोगी परामर्श आदि उपभोक्ताओं को मिलने वाले लाभ है।

पैकेजिंग का महत्व निरन्तर बढ़ता जा रहा है। प्रतिस्पर्द्धात्मक शक्तियों ने पैकेजिंग के महत्व को उभारकर ऊपर ला दिया है। स्वयं-सेवा निकाय मशीनों ने इसके प्रयोग में बहुत वृद्धि की है क्योंकि उत्पादों को बिना उचित प्रकार के पैक किये न तो स्वयं-सेवा ही की जा सकती है और न ही मशीनों द्वारा उनका विक्रय ही सम्भव है।

NMDC130

आज के प्रतिस्पर्धात्मक तथा मशीनीं युग में जहाँ समय का अभाव प्रत्येक व्यक्ति स्वीकार करता है वहाँ विक्रेता भी प्रायः उत्पाद की तोल-नाप नहीं करता है और वह भी पैक किये उत्पाद ही बिक्री करना चाहता है। आज पैकेजिंग व्यावसायिक क्रिया का अविभाज्य अंग बन गया है और उत्पाद के विक्रय मूल्य का एक अच्छा खासा हिस्सा पैकेजिंग में व्यय होता है। वस्तुतः आजकल पैकेजिंग उत्पाद की सुरक्षा, सुविधा एवं भण्डार के कारणों से ही आवश्यक प्रतीत नहीं होता है बल्कि विपणन एवं विक्रय के कारण भी आवश्यक होता है। पैकेजिंग का महत्व सामाजिक रूप से जन-साधारण की आय में उसके रहन के स्तर में वृद्धि आदि कारणों से काफी बढ़ गया है।

भारतवर्ष में भारतीय पैकेजिंग संस्थान के भूतपूर्व अध्यक्ष श्री ए0सी0टी0 पैथाचीं के अनुसार यहाँ 30 प्रतिशत फल, 10.6 प्रतिशत खाद्यान्न, 7 प्रतिशत सीमेण्ट, 6 प्रतिशत रसायनिक उत्पाद, 5 प्रतिशत चीनी, 3 प्रतिशत आटा, 5 प्रतिशत चाय, व 3 प्रतिशत निर्मित उत्पाद उचित पैकेजिंग के अभाव में नष्ट हो जाते हैं। जिनका मूल्य अरबों में होता है।

उनके अनुसार यदि हम प्रबन्ध शास्त्र के विद्यार्थी पैकेजिंग के महत्व को आम जनता को समझा सकें तो देश में अमूल्य संसाधनों को बर्बाद होने से रोका जा सकता है। वास्तव में उत्पाद पैकेजिंग एक संचार उपकरण की तरह भी कार्य करता है। संचार उपकरण में मुख्य रूप से दो बातें सम्मिलित की जाती है-विक्रय कला तथा विज्ञान।

विक्रय कला एवं पैकेजिंग : विक्रय कला में एक विक्रयकर्ता द्वारा उपभोक्ता का स्वागत किया जाता है तथा उत्पाद की अच्छाइयों, विशेषताओं एवं तुलनात्मक विशेषताओं को स्पष्ट किया जाता है। जबकि पैकेजिंग एक मूक विक्रय का कार्य करता है तथा उपभोक्ता का सदैव ही स्वागत करने को उत्सुक रहता है। लेकिन यह ग्राहक की व्यक्तिगत सेवा नहीं कर पाती है। यदि यह व्यक्तिगत सेवा कर सकता तो विक्रय कला से कहीं अधिक प्रभावशाली होता है।

साथ ही विक्रय कला एक बार ग्राहक को असन्तुष्ट कर सकती है लेकिन पैकेजिंग द्वारा पैसा सम्भव नहीं है। विक्रय कला में किसी बात को कहने से चूक सकते हैं लेकिन पैकेजिंग में छपा या चित्रित होने के कारण भूलने का कोई प्रश्न ही नहीं उठता है। सुनी हुई बातों की अपेक्षा लिखी या चित्रित बातें अधिक प्रभाव डालती है। अतः पैकेजिंग अधिक प्रभावशाली होती हैं। एक अच्छे पैकेज का ग्राहक पर मनोवैज्ञानिक प्रभाव पड़ता है, जो उसको सन्तुष्टि देने में सहायता करती है।

विज्ञापन एवं पैकेजिंग : इसी प्रकार यदि कोई व्यक्ति विज्ञापन से प्रभावित होता है तो वह उसको क्रय करने के लिए धन का प्रबन्ध करता है। इसके पश्चात् वह उत्पाद को

क्रय करता है। उसके द्वारा ऐसा करने में समय लगता है। यह हो सकता है कि जब तक वह विज्ञापन से प्रभावित होकर उत्पाद क्रय करने का विचार करें तब तक उसे किसी अन्य उत्पाद का विज्ञापन दिखाई दे जाय और वह उससे प्रभावित होकर उसे क्रय कर लें। पैकेजिंग में उत्पाद सम्बन्धी सन्देश विक्रय बिन्दु पर ही मिल जाता है। तथा समयान्तर के कारण भूलने का कोई प्रश्न नहीं उठता है।

विज्ञापन को देखकर यदि कोई शंका उत्पन्न होती है तो उसका समाधान नहीं किया जा सकता है लेकिन यदि किसी उत्पाद का पैकेजिंग देखकर कोई शंका उत्पन्न होती है तो उसका समाधान तुरन्त विक्रय बिन्दु पर ही किया जा सकता है।

पैकेजिंग पुनः विक्रय में सहायक होती है। जब तक उपभोक्ता के पास उत्पाद व पैकेजिंग रहती है तब तक वह उसको उत्पाद की पहचान करवाने में ही सहायक नहीं होती है बल्कि पुनः-क्रय के लिए प्रेरित भी करती है।

स्व-परख प्रश्न

प्र01 बहुइकाई पैकेजिंग क्या होती है? उदाहरण सहित समझाइये ?

....

....

....

NMDC-130

प्र02 पैकेज में परिवर्तन क्यों किया जाता है?

....

....

....

प्र03 असंगत आकार की पैकेजिंग उद्देश्य क्या है? उदाहरण सहित समझाइये।

....

....

....

प्र04 नीचे उत्पादों की सूची दी गई है और उसके साथ उनके नये तथा पुराने तरह की पैकेजिंग दी गई है। आपके विचार से प्रत्येक उत्पाद के लिए सर्वाधिक श्रेष्ठ पेकंजिंग कौन सी है? अपने कथन को सिद्ध करें?

i) जैम एवं जैली (अ) टिन में, (ब) एचडीपीई पोलिजार में, तथा (स) पारदर्शी पीइटी जार में।

....

....

ii) देशी घी (अ) टिन में, तथा (ब) प्लास्टिक बैग में।

....

....

iii) फलों का रस (अ) बोतल में, (ब) टिन में, तथा (स) टेट्रा पैक में (यथा फूर्टी)

....

....

iv) शैम्पेन (अ) शीशे की बोतल, (ब) प्लास्टिक बोतल

....

....

4.12 सारांश

विपणन में उपभोक्ता उत्पादों के संदर्भ में, ब्रांड की व्यवस्था सर्वाधिक महत्व के निर्णयों में से एक मानी जाती है। यह नाप, उत्पाद को एक विशेष छवि देता है तथा ब्रांड नाम उत्पाद के साथ इतनी अच्छी तरह जुड़ जाता है कि कभी-कभी ब्रांड नाम, उत्पाद के जातिगत उत्पाद नाम का स्थान ले लेता है। क्रेताओं विक्रेताओं तथा कुल मिलाकर समाज के लिए ब्रांड के विभिन्न लाभ है।

NMDC-130

ब्रांड नाम का चयन एक महत्वपूर्ण निर्णय होता है। हम किसी भी नाम का चयन कर सकते हैं बर्शते यह अनुठा हो, पढ़ने लिखने, उच्चारण करने तथा याद रखने में सरल हो और इसके साथ कोई प्रतिकूल अथवा नकारात्मक अर्थ न जुड़ रहा हों। आप अपने सारे उत्पादों के लिए एक पारिवारिक नाम दे सकते हैं या प्रत्येक उत्पाद को एक विशिष्ट ब्रांड नाम दे सकते हैं। आपके द्वारा किए गए प्रत्येक चयन के अपने लाभ और हानियाँ हैं साथ ही आपके द्वारा किये गये चयन के लिए सफलता तथा विफलता के बहुत से अवसर हैं, जिसे आप उचित ठहरा सकते हैं। कभी-कभी बहुत कठिनाई से उच्चारण किए जाने वाला ब्रांड नाम सफल हो पाते हैं और दूसरी ओर बहुत अधिक आकर्षण ब्रांड नाम विफल हो जाते हैं। भारत वर्ष में उत्पाद चिह्नों का पंजीयन व्यापार तथा उत्पाद चिह्न अधिनियम 1958 के अंतर्गत कराते हैं। जिससे उनको इसके उपयोग के लिए कानूनी संरक्षण प्राप्त हो जाता है।

पैकेजिंग विपणन का एक दूसरा निर्णायक पहलू है जो किसी उत्पाद की सफलता के लिए एक महत्वपूर्ण दिशा प्रदान करता है क्योंकि उपभोक्ता का इससे आमने-सामने का मुकाबला होता है। बहुत से उदाहरण है जब घटिया पैकिंग के कारण बहुत से अच्छे उत्पाद भी विक्रय के क्षेत्र में असफल हो जाते हैं।

भारतीय बाजार में किस्म-किस्म की सामग्रियाँ वृहत् मात्रा में उपलब्ध है। इन नये पैकेजों की सामग्रियों के कारण ही अंकल चिप्स जैसे खाद्य पदार्थों का विपणन किया जा सका। अच्छे पैकेज के लिए आवश्यक है कि वह अंदर रखे गये उत्पादों का संरक्षण करें; ग्राहकों के लिए लुभावना हो, उसका उपभोग करना आसान हो, पैक किए गए उत्पाद का भंडारण आसान हो तथा वह आपेक्षित कार्यों का निष्पादन कर सके। कुछ लोग पैकेजिंग के कटु आलोचक हैं, क्योंकि इससे कई समस्याएँ उठ खड़ी होती हैं। जैसे उपयोग में आ चुके पैकेजों को नष्ट करना, पैकेजों को विकसित करने में निवेशित राशि, स्वास्थ्य संबंधि खतरे, दुर्लभ संसाधनों का अधाधुंध उपयोग तथा उत्पाद की गुणवत्ता के संबंध में होने वाले धोखे प्रमुख है।

4.13 उपयोगी शब्दकोष

(1) **ब्रांड :** कोई नाम, शब्द, चिह्न, प्रतीक, स्थान का इनका संयोजन जिनका उपयोग एक विक्रेता के उत्पाद करने के लिए, प्रतियोगियों की सेवाओं तथा उत्पादों से उन्हें भिन्नता प्रदान करने के लिए किया जाता है।

(2) **ब्रांडनाम :** ब्रांड का वह हिस्सा जो किसी शब्द, अक्षर, या अक्षर समूह हो सकता है, जिसे उच्चरित किया जा सके।

NMDC-130

(3) **ब्रांड चिन्ह :** ब्रांड का वह हिस्सा जिसमें कोई चिन्ह, डिजाइन एक विशिष्ट लोगों किस्म रंग योजना या चित्र हो और जिसका उपयोग पहचान की क्रिया के लिए किया जाता है।

(4) **व्यपार चिन्ह :** एक ब्रांड या उसका एक हिस्सा जिसे कानूनी संरक्षण दिया जाता है, क्योंकि किसी विक्रेता का इस प्रकार एकमात्र अधिकार होता है।

(5) **पैकेजिंग (बण्डल बनाना) :** उत्पाद योजना सम्बन्धित क्रियाएं जिसमें किसी उत्पाद के लिए कंटेनर का डिजाइन बनाना ओर उसका उद्घाटन करना शमिल होता है।

4.14 स्व-परख प्रश्नावली

प्रश्न 1. ब्राण्ड किसे कहते हैं? इसके क्या लाभ हैं, क्या इसका प्रयोग सामाजिक दृष्टि से उचित है समझाइये?

प्रश्न 2. ब्रांड प्रयोग को परिभाषित कीजिये तथा व्यवसाय व उद्योग में उपलब्ध ब्रांड नीतियों को समझाइये?

प्रश्न 3. निम्न पर टिप्पणी लिखिए

(क) पैकेजिंग

(ख) पैकेजिंग के कार्य

(ग) वस्तु ब्रांड के लाभ

(घ) ब्रांड वर्गीकरण

(च) ब्रांड एकीकरण की जाँच एवं माप

(ढ) एक उचित ब्रांड की विशेषताएँ

प्रश्न 4. विपणन में चिन्हीकरण का क्या महत्व है? चिन्हीकरण के क्या गुण-दोष हैं।

प्रश्न 5. ब्रांड नाम और व्यापार चिन्ह में क्या अन्तर है? इन दोनों का चुनाव करते समय किन विशेषताओं को ध्यान में रखना चाहिए।

NMDC-130

इकाई 5 : मूल्य निर्धारण - विधियाँ तथा युक्तियाँ

इकाई की रूपरेखा

5.0 उद्देश्य

5.1 प्रस्तावना

5.2 मूल्य-परिचय, उद्देश्य तथा महत्व

5.3 मूल्य निर्धारण प्रक्रिया

5.4 मूल्य निर्धारण सम्बन्धी कारक

5.5 मूल्य निर्धारण की विधियाँ

5.6 मूल्य निर्धारण तथा नवीन उत्पाद

5.7 छूट तथा रियायत सम्बन्धी युक्तियाँ

5.8 मूल्य सम्बन्धी सरकारी प्रावधान

5.9 सारांश

5.10 उपयोगी शब्दकोष

5.11 उपयोगी प्रश्नावली

NMDC-130

5.0 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई के गहन अध्ययन के पश्चात् आप विद्यार्थी गण -

- मूल्यों के अर्थ, महत्व तथा उद्देश्यों को विपणन के एक महत्वपूर्ण आधार स्तम्भ के रूप बना सकेंगे,
- मूल्य निर्धारण की प्रक्रिया, विधियाँ तथा इनको प्रभावित करने वाले कारकों का विस्तृत विश्लेषण कर सकेंगे,
- नवीन उत्पाद के सम्बन्ध में मूल्यों का निर्धारण कर सकेंगे,
- प्रतिस्पर्धात्मक दौर में छूट तथा रियायतों का प्रयोग जान सकेंगे, तथा
- मूल्यों के सम्बन्ध में सरकारी प्रावधानों का विश्लेषण कर सकेंगे।

5.1 प्रस्तावना

उत्पाद विकास के पश्चात् इनका मूल्य निर्धारण सदैव से अत्यन्त कठिन एवं चुनौतीपूर्ण कार्य रहा है। विपणन के क्षेत्र में मूल्य निर्धारण एक महत्वपूर्ण कार्य रहा है

क्योंकि इसका निर्धारण कम्पनी के लाभ तथा विक्रय गतिविधियों को सीधे प्रभावित करता है। अतः भारतीय परिवेश, जहाँ उपभोक्ताओं में जबरजस्त विविधीकरण पाया जाता है, मूल्य सम्बन्धी निर्णय लेते समय अत्यन्त ही सावधान एवं सजग रहना पड़ता है। प्रस्तावित इकाई में हम मूल्य निर्धारण के विभिन्न पहलुओं का क्रमवार विवेचना करेंगे।

5.2 मूल्य परिचय, उद्देश्य तथा महत्व

व्यवसाय प्रबन्धन के विपणन का और विपणन में मूल्य निर्धारण का वैसा ही सम्बन्ध होता है जैसे मनुष्य के शरीर में सफेद रक्त कोशिकाओं का जिनके अभाव में शरीर का प्रतिरक्षातंत्र शत्रुओं से लड़ नहीं सकता। प्रायः मूल्य मांग एवं आपूर्ति दोनों से ही सम्बन्धित होता है तथा प्रभावित करता है।

मूल्य - सम्बन्धी विचार युक्ति एवं नीति निर्माण विपणन प्रबन्धक का एक अति महत्वपूर्ण कार्य बन गया है। अतः विपणन प्रबन्धकों को मूल्य सम्बन्धी निर्णय लेंते समय ऐसे समस्त पहलुओं को संत्रान होना चाहिए जो उत्पाद से कहीं न कहीं जुड़े होते हैं जिससे कि मूल्य समयबद्ध एवं उचित आधारों पर निश्चित हो सकें।

NMBA-130

दूसरे शब्दों में व्यापारिक समाज की दृष्टि में उत्पाद या सेवा का मूल्य अत्यन्त महत्वपूर्ण है। इसका कारण यह है कि मूल्य उत्पाद की माँग को निर्धारित करने वाला एक बहुत उपयोगी कारक है। ये ही संस्था के प्रतियोगात्मक है रिक्त एवं बाजार हिस्सेदारी को प्रभावित करते हैं। इससे ही सीधे तौर पर किसी भी व्यापारिक संस्था के समस्त आगम व लाभ जुड़े होते हैं।

एक संस्था के उत्पाद का मूल्य उस संस्था के विपणन-कार्यक्रम से भी जुड़ा होता है। यदि किसी उत्पाद की गुणवत्ता में सुधार करना चाहती है या उस उत्पाद में अन्य उत्पाद से विभिन्नता रखनी है तब ऐसा उसी समय सम्भव होती है, जब उपभोक्ता बाजार में उस उत्पाद के पूर्व निर्धारित मूल्यों से कुछ अधिक मूल्य देने का निर्णय करें। इसी प्रकार यदि उत्पाद का मूल्य आकर्षक है तो उसकी विक्रय हेतु मध्यस्थ भी सुगमता से तैयार हो जाते हैं तथा उत्पादकर्ता अपनी स्वेच्छा से मध्यस्थ चुन सकता है।

बहुत से विद्वानों का मत है कि उत्पाद का संवर्द्धन एवं विज्ञापन भी मूल्य पर ही टिका होता है। यदि उत्पाद से इस प्रकार के व्ययों का खर्च निकाला जा सके तो ऐसे व्ययों को व्यापक और बड़ेस्तर पर किया जा सकता है किन्तु यदि उत्पाद से इन व्ययों के वसूलन सम्भव न हो तो ऐसे खर्चों पर रोक ही बुद्धिमानी पूर्ण कदम होगा। वस्तुतः मूल्य का निर्धारण एक प्रकार का सुव्यवस्थित, सुसंगठित तथा क्रम बद्ध विज्ञान है, कला

नहीं। अतः मूल्यों का निर्धारण एक सुव्यवस्थित प्रक्रिया पर आधारित होनी चाहिए। इस प्रकार किसी भी उत्पादकता के मूल्य सम्बन्धित निर्णय लेते समय यह अवश्य ध्यान रखना चाहिए कि वह किन उद्देश्यों पर चल रहा है जिससे उन्हीं के अनुरूप किया जा सके। कुछ सरकारी संगठनों को छोड़कर प्रायः अधिकांश का उद्देश्य अधिकतम लाभ अर्जन ही रहा है। अतःयह निर्णय निर्माता का होता है कि वह लाभ अल्पकाल में कमाना चाहता है या दीर्घकाल में।

एक व्यापारी को मूल्य-निर्धारण के उद्देश्यों पर विचार करते समय उत्पाद की माँग, लागत, वितरण व्यय, प्रतियोगिता स्थिति, तकनीकी व्यय, मानव व्यय तथा आर्थिक एवं राजनीतिक वातावरण को केन्द्र बिन्दु मानना चाहिए। वास्तव में एक संस्था मूल्य निर्धारण के सम्बन्ध में अग्रलिखित उद्देश्यों को या उद्देश्य को अपना सकती हैः-

(1) मलाई उतारना : यदि कुछ संस्थाओं का उद्देश्य बाजार से मलाई उतारना होता है। प्रायः इसमें उत्पाद का मूल्य अत्यधिक रखा जाता है जिससे कि संस्था को अधिकाधिक लाभार्जन हो सके। यह युक्ति उस समय तक चलती रहती है जिस समय तक बाजार में अन्य प्रतिद्वन्द्वी नहीं आ जाता। जब प्रतिद्वन्द्वी का आगमन हो जाता है तो मूल्य अचानक घटा दिये जाते हैं। प्रायः यह युक्ति उस समय प्रयोग में लायी जाती है। जब उत्पाद में अनोखी विशेषता होती है। इसमें उत्पाद के विक्रय हेतु अधिकाधिक विज्ञापन का सहारा लिया जाता है। अधिक मूल्यों को रखने का एक लाभ यह भी है कि यदि उपभोक्ताओं के द्वारा उत्पाद को अधिक मूल्यों पर नहीं खरीदा गया तो मूल्यों को कम करना सम्भव होता है। अतः मूल्यों को घटाकर उत्पाद के विक्रय में सुगमता होती है किन्तु एक बार मूल्यों में गिरावट होती है तो उन्हें दुबारा बेचना कठिन होता है।

वस्तुतः इस उद्देश्य के मूल में निवेशित धनराशि जल्द से जल्द लौट आये यह भावना छिपी होती है। लेकिन एक हानि भी है और वह यह कि यदि उपभोक्ताओं ने उत्पाद को बहुत ही अधिक मूल्यों पर नहीं खरीदा तो लाभार्जन तो दूर व्यापार करना भी कठिन हो जाता है। इसका अर्थ यह कि न ही मलाई उतार पायेंगे और न ही मलाई पड़ेगी।

(2) निवेश राशि पर प्रतिफल : एक निर्माता द्वारा निवेश राशि पर निर्धारित प्रतिफल को अपनी मूल्य युक्ति का उद्देश्य बनाया जा सकता है। यह प्रतिफल निवेश व विक्रय पर आधारित हो सकता है। प्रायः निवेश पर निर्धारित दर वाली युक्ति व्यवसायों में अधिक पायी जाती है। इसमें प्रत्येक निर्माता मूल्यों का निर्धारण यह ध्यान में रखते हुए करता है कि उसको अपने निवेश पर लाभार्जन एक निश्चित दर के रूप में मिलता रहे। यह युक्ति उन संस्थाओं के द्वारा अधिक अपनायी जाती है जो अपने औद्योगिक क्षेत्रों

में उच्च स्थान रखते हैं। दूसरी ओर विक्रय पर निर्धारित दर वाली युक्ति सामान्यता थोक व फुटकर विक्रेताओं के द्वारा अपनाई जाती है। इसमें वे मूल्यों का निर्धारण इस प्रकार करते हैं कि उनकी कुल बिक्री पर एक निश्चित दर से लाभ मिले। जैसे यदि कोई व्यवसायी बिक्री पर 12 प्रतिशत लाभ कमाना चाहता है, तो वह मूल्यों को इस प्रकार निर्धारित करेगा कि उसे कुल बिक्री पर 12 प्रतिशत लाभ मिले। इसके लिए कुछ उत्पादों पर लाभ कम व अधिक किया जा सकता है।

(3) मूल्य-अपरिवर्तन भी संस्थाओं के उद्देश्यों में से एक हो सकता है। इसमें मूल्यों का निर्धारण इस प्रकार किया जाता है कि एक निश्चित समयावधि के अन्दर उनमें परिवर्तित करने की कोई गुंजाइश न हो और कभी हानि पर भी बेचने की आवश्यकता महसूस हो तो उत्पाद को बेचा जा सके और हानि को वहन किया जा सके। इस प्रकार आपूर्ति कम होने पर या बढ़ते हुए अवसरों पर भी मूल्यों में बढोतरी नहीं की जाती है और आकस्मिक लाभों को प्राप्त करने की कोई योजना नहीं होती। प्रायः वे संस्थाएँ इस प्रकार की युक्ति को स्वीकार करती हैं जो कि अपने सामाजिक जिम्मेदारियों को निभाने में अग्रणी होती हैं। ये संस्थाएँ बढ़ते हुए मूल्यों के दौरान अपने विज्ञापनों में फुटकर मूल्यों की घोषणा भी कर देती हैं जिससे उपभोक्ता उनके मूल्यों को जान जाता है और अपने साथ होने वाली धोखाधड़ी से बच जाता है।

सामान्यत संस्थाएँ यह कार्य दीर्घकाल में अपनी ख्याति को बनाये रखने के लिए करती हैं। मूल्य अपरिवर्तन का उद्देश्य अपनाने का प्रमुख कारण यह है कि उत्पादों के मूल्यों में होने वाला असामाजिक परिवर्तन उपभोक्ताओं के ऊपर मनोवैज्ञानिक प्रभाव डालता है जो उचित नहीं होता है।

(4) प्रतियोगिता - उत्पादनकर्ता मूल्य निर्धारण सम्बन्धी उदेश्य में प्रतियोगिता का सामना करने एवं प्रतियोगिता से दूरी बनाय रखने के लिए भी करता है। प्रतियोगिता का सामना करने का तात्पर्य है कि बाजार में अन्य प्रतियोगियों के साथ-साथ बाजार के अनुरूप कार्य करना। इसके अन्तर्गत मूल्य निर्धारण का प्रतियोगिता के आधार पर किया जाता है। लागत को अधिक महत्व नहीं दिया जाता बल्कि लागत व्यय को प्रतियोगिता के अनुसार व्यवस्थित करने का प्रयत्न किया जाता है। यह ध्यान रखने योग्य है कि यह तरीका वैज्ञानिक नहीं है। दूसरी ओर एक उत्पादनकर्ता का उद्देश्य प्रतियोगिता से दूरी बनाये रखना भी हो सकता है। यदि व्यवसायी अपने क्षेत्र का नेता है तो वह मूल्यों का निर्धारण इस प्रकार करता है कि उस बाजार में कोई भी नया व्यवसायी प्रवेश न करने पाये। इस युक्ति में मूल्यों का कम से कम रखने का प्रयत्न होता है। जिससे कि उत्पाद को अधिक से अधिक बाजारों में फैलाया जा सके जिससे उसकी ख्याति निरन्तर बढ़ती

जायें।

(5) बाजार में हिस्सेदारी - इस उद्देश्य के अन्तर्गत उत्पाद के कुल बाजार में उत्पानकर्ता का जितना हिस्सा है वह उसकी ही यथास्थित बनाये रखना चाहता है। प्रायः संस्थाओं को बाजार हिस्सा बनाये रखना परम आवश्यक होता है अन्यथा उनका व्यवसाय लाभदायक स्थिति में बना नहीं रह पाता, विषम परिस्थितियों में कम लाभ पर भी बाजार में हिस्से को बनाये रखने का प्रयत्न किया जाता है। दूसरी तरफ कम मुनाफे वाले उत्पाद में बाजार में संस्थाएँ अपनी संस्था के भाग में निरन्तर वृद्धि करने का उद्देश्य रखती है जिससे कि उत्पादन को बढ़ाकर घटी हुयी लागत का लाभ उठाया जा सके। कभी-कभी संस्थाएँ इस उद्देश्य को पाने की अपेक्षा में अपनी मूल्य लागत पर भी उत्पादों का विक्रय करने का निर्णय कर लेती है जिसे सिद्धान्त रूप में स्वीकार नहीं किया जा सकता।

(6) बाजार में परिचय : नई संस्थाएँ प्रारम्भ में अपना उद्देश्य बाजार में परिचय को रखती। जिससे उनके द्वारा उत्पादों का मूल्य कम रखा जाता है जिससे कि वे बाजार में सुगमता से प्रवेश कर उपभोक्ताओं को अपने उत्पाद का परिचय करा सके अर्थात् अपने उत्पाद को बाजार में बेच सकें। ऐसा उसी अवस्था में होता है जब बाजार मूल्यों के प्रति अत्यन्त सजग हो।

MMDC-130

(7) लाभों को उत्तरोत्तर वृद्धि : प्रायः मूल्य निर्धारण के मूल्य में यही उद्देश्य कार्य करता है वर्तमान परिवेश में लाभों को अधिकतम करने का तात्पर्य गलत ढंग से लाभार्जन के सन्दर्भ में समझा जाता है। वास्तव में एक संस्था एकाधिकारी रूप से लाभ नहीं चाहती बल्कि वो विपणन के चारों पी0 युक्ति पूर्ण संयोजन से लाभार्जन के सम्बन्ध में अपने उद्देश्यों का निर्धारण करती हैं।

(8) नगद धन प्राप्ति : संस्थाओं के इस उद्देश्य से नगद बिक्री को बढ़ावा मिलता है। अतः वे अपने उत्पादों का मूल्य निर्धारण इस प्रकार करती है कि उपभोक्ता अधिक से अधिक नगद क्रय कर सके। इस हेतु नगद व उधार दोनों स्थितियों के मूल्य निर्धारण का ढंग अलग अलग होता है। प्रायः नगद के मूल्य कम व उधार के अधिक हो सकते हैं।

(9) उत्पाद पंक्ति संवर्द्धनः कुछ संस्थाऐं अपना उद्देश्य उत्पाद पंक्ति संवर्द्धन का भी रखती हैं जिसमें लोकप्रिय उत्पाद का मूल्य कम रखा जाता है लेकिन उस उत्पाद के उपभोक्ताओं को एक अन्य उत्पाद खरीदना पड़ता है जिसका निर्माण व विक्रय भी यही संस्था करती रही है जो अधिक लोकप्रिय नहीं है, ऐसा करने से इस प्रकार की अप्रचलित उत्पाद भी बाजार में आसानी से प्रवेश कर जाता है जिससे कुल बिक्री में बढ़ोत्तरी होती

है। अतः लाभों में भी वृद्धि होती है। इस प्रकार हमने देखा कि विपणन - प्रबन्धन में मूल्य का अत्यन्त ही महत्वपूर्ण स्थान है। मूल्यों का निर्धारण इस प्रकार किया जाता है कि एक निर्माता को इस सम्बन्ध में न सिर्फ किये गये निवेश की वापसी हो बल्कि लाभ की भी प्राप्ति हो, जिससे कि वह सम्बन्धित व्यवसायिक क्रियाओं का सुचारू रूप से चालू रख सके और उपभोक्ताओं की अधिकतम संतुष्टि प्रदान कर सके।

अतः संस्थाएँ विक्रय-मूल्यों को निर्धारण हेतु नियोजित युक्ति अपनाती है जिसे विक्रय मूल्यों के नियोजन की संज्ञा दी जाती है। संस्थायें जिनके द्वारा यह कार्य सुनियोजित ढंग से पूरा किया जाता है, वे अपने लाभ को अधिकतम करने में समर्थ हो जाती है किन्तु वे संस्थाऐं जो इस ओर उचित ध्यान नहीं दे पाती है वे अपने अस्तित्व को खतरे में डाल देती है और भाग्य के भरोसे रहती है, जिससे उनमें अनिश्चिचचा की स्थित बनी रहती है।

5.3 मूल्य निर्धारण प्रक्रिर

प्रायः जिस प्रकार सभी संगठनों के उद्देश्य एक समान नहीं होते, ठीक उसी प्रकार मूल्य निर्धारण की प्रक्रिया भी सभी उपक्रमों में एक समान नहीं होती। इसका प्रमुख कारण विभिन्न स्तरों पर लागतों का भिन्न-भिन्न होना है तथा विभिन्न मूल्यों पर मांग की दर भी भिन्न होती है। वस्तुतः मूल्य निर्धारण के लिए किसी एक निश्चित सूत्र का प्रयोग करना सफल नहीं होता है। अतः उपक्रमों द्वारा मूल्य निर्धारण के लिए अग्रलिखित प्रक्रिया को अपनाया जाता है जिसे मूल्य निर्धारण प्रक्रिया कहते हैं जिसके निम्न चरण होते हैं-

(1) उत्पाद की मांग - मूल्य निर्धारण प्रक्रिया में सर्वप्रथम उत्पाद की कुल मांग का अनुमान लगाया जाता है। प्रायः यह उन उत्पाद के लिए तो सरल है जो बाजार में पूर्व से बिक रहे हैं किन्तु उन उत्पादों के लिए अत्यन्त कठिन हो जो नवीन है। इस प्रकार अनुमानित माँग को जानने के लिए दो व्यावहारिक कदम उठाये जा सकते हैं (अ) सम्भावित मूल्य, (ब) भिन्न मूल्यों पर विक्रय अनुमान।

(अ) सम्भावित मूल्य से तात्पर्य उस मूल्य से है जिसे उपभोक्ताओं द्वारा किसी उत्पाद के लिए सही माना जाता है। यह वह मूल्य है जिसको उत्पाद के लिए सुयोग्य माना जाता है। वास्तव में यह मूल्य एक सीमा के मध्य बताया जाता है या उसका अधिकतम मूल्य बताया जाता है। उदाहरण के लिए, जब कोई नया उत्पाद उपभोक्ताओं को सामने प्रस्तुत किया जाता है और उससे उसका मूल्य बताने को कहा जाता है तो वह इस प्रकार बताता है कि उत्पाद अधिक से अधिक 50 रुपये का होगा। वह इस सम्भावित

मूल्य को इस प्रकार भी व्यक्त कर सकता है कि इसका सम्भावित मूल्य 30 रुपये से 50 रूपये के मध्य ही होगा। यदि नये उत्पाद के लिए उपभोक्ताओं द्वारा मूल्य एक वृहद सीमा में बताये जाते हैं तो ऐसे उत्पाद का शुरूआती मूल्य अधिक निश्चित किया जा सकता है और भविष्य में जब उत्पाद की छवि अच्छी हो जाये तो मूल्यों को कुछ कम कर दिया जाता है जिससे कि उपभोक्ता यह महसूस करे कि उनको अधिकतम लाभों की प्राप्ति हो रही है।

इसी प्रकार यदि किसी उत्पाद का मूल्य उसके सम्भावित मूल्य से अत्यधिक कम मूल्य निर्धारित किया जाता है तब उपभोक्ताओं के मन में उत्पाद के प्रति सन्देह हो सकता है तथा उत्पाद की बिक्री कम हो सकता है। अतः मूल्य निर्धारित करते समय उत्पाद के मूल्य सम्भावित मूल्य से नीचे स्तर पर निर्धारित नहीं करना चाहिए।

यदि उत्पाद की माँग में लोच है तब उत्पाद की विभिन्न मूल्यों पर अलग-अलग मांग क्या है? इसका पता लगाना एक प्रबन्धक के लिए अति आवश्यक है। इसका प्रमुख कारण है कि लोचदार माँग वाले उत्पाद के मूल्य उच्च स्तर पर निर्धारित किये जाते हैं। विभिन्न मूल्यों पर विक्रय अनुमान लगाने से माँग वक्र का निर्माण होता है। जो कि सम-विच्छेद-बिन्दु के निर्धारण में सहायक होता है।

(2) प्रतियोगिता का अनुमान लगाना - किसी उत्पाद के मूल्य निर्धारण में प्रतियोगिता का महत्वूपर्ण स्थान होता है। यह प्रतियोगिता तीन स्तरों में हो सकती है, प्रथम वर्तमान समान उत्पादों में, द्वितीय उपलब्ध स्थानापन्नों से, तृतीय असम्बन्धित उत्पादों से। इसके साथ साथ भावी प्रतियोगिता भी अपना प्रभाव डालती है। इस प्रकार मूल्य निर्धारण के दौरान प्रतियोगिता का अनुमान लगा लेना असफलता की ओर बढ़ा हुआ एक कदम होता है।

NMDC-130

(3) बाजार हिस्से का अनुमान करना - उत्पाद की मांग एवं सम्बन्धित प्रतियोगिता का अनुमान लगाने के बाद तृतीय चरण बाजार हिस्से का सम्भावित अनुमान है, बाजार भाग से तात्पर्य उस भाग से है जिस पर निर्माता या विक्रेता अपने उत्पाद के माध्यम से नियन्त्रण करना चाहता है। दूसरे शब्दों में कह सकते हैं कि निर्माता या विक्रेता उस कुल बाजार में से कितने प्रतिशत बाजार पर अपना अधिकार करना चाहता है। बाजार का सम्भावित हिस्सा निर्धारण करते समय एक निर्माता को अपनी प्लांट क्षमता, प्लाण्ट विस्तार में निवेश एवं प्रतियोगियों के प्रवेश को ध्यान में रखना चाहिए। कहीं ऐसा न हो कि बाजार का बड़ा भाग तो निश्चित कर लिया जाये किन्तु उपभोक्ताओं को तथा स्वयं बाजार की आवश्यकताओं को पूरा न कर पायें। अगर कोई संस्था इस प्रकार की स्थिति

में आती है तो आज का उपभोक्ता उसे गिरी हुई छवि से देखता है। अतः एक प्रबन्धक को सदैव अपने संगठन में ऐसी विपरीत परिस्थितियों से बचाना चाहिए। ऐसा होने से संस्था की स्थिति पर बुरा प्रभाव पड़ता है।

(4) प्रतियोगी मूल्य युक्ति का चयन - मूल्य निर्धारण की प्रक्रिया में अलगा कदम बाजार के लिए प्रतियोगी युक्ति का चयन करना है। इनमें अलग-अलग युक्तियों को शामिल किया जाता है जैसे प्रतियोगिता मिलन मूल्य युक्ति, मलाई उतारने वाली मूल्य युक्ति, प्रवेशक मूल्य युक्ति आदि।

(5) विपणन युक्तियों में सामंजस्य - मूल्य निर्धारण के तरीके में अगला चरण कम्पनी की अपनी विपणन युक्तियों में सामंजस्य करना है। जिसमें उत्पाद युक्तियों वितरण युक्तियों एवं संवर्धन युक्तियों शामिल की जाती है। मूल्य निर्धारित करते समय उत्पाद युक्तियों पर अवश्य विचार करना चाहिए जैसे, क्या उत्पाद को अपनी ब्रांड के या मध्यस्थों को बिना ब्रांड के, जिससे कि वे उस पर अपना-अपना ब्रांड अंकित कर विक्रय के लिए उपलब्ध कराये। इसी प्रकार क्या मध्यस्थों द्वारा कोई मुफ्त सेवा दी जा रही है? इसी प्रकार वितरण युक्तियों में यदि उत्पाद का विक्रय फुटकर मध्यस्थों के माध्यम से किया जाना है तो उनकी सेवाओं एवं पारिश्रमिक का भी ध्यान रखना उचित होगा। प्रायः यह देखा जाता है कि जब उत्पाद थोक एवं फुटकर दोनों को ही बेचा जाता है तो फुटकर विक्रेता से मूल्य अधिक वसूला जाता है जबकि थोक विक्रेता से कम। इसी क्रम में मूल्य निर्धारण करते समय संवर्द्धन की युक्तियों को भी ध्यान में रखना आवश्यक होता है। यदि संवर्द्धन का कार्य निर्माता द्वारा किया जाता है तो मध्यस्थों के लाभ को कम कर उत्पाद को बेचने के लिए कहा जा सकता है और यदि संवर्द्धन का कार्य मध्यस्थों द्वारा होता है तो उनके लाभों को अधिक किया जा सकता है।

NMBC-130

जब उपर्युक्त सभी चरण पूरे हो जाते हैं तब इसके पश्चात् विशेष मूल्यों के भिन्न प्रारूप बनाकर प्रबन्धन के सम्मुक प्रस्तुत किया जाता है और तब प्रबन्धक के द्वारा उनमें से किसी भी एक प्रारूप का चयन किया जाता है। लेकिन इस समय प्रबन्धक को सामाजिक उत्तरदायित्व का ध्यान रखना चाहिए जिससे कि मूल्य सदैव न्यायसंगत बने रहें। यदि प्रबन्धक ऐसा करने में असफल होता है तब बहुत सम्भव है कि सरकार उसके कार्यों को कानूनी रूप से जाँच परख सकती है।

5.4 मूल्य निर्धारण को सम्बन्धी कारक-

मूल्य निर्धारण करते समय प्रायः अग्रलिखित कारकों का अध्ययन एक प्रबन्धक

के लिये उसके द्वारा किये जाने वाले मूल्य निर्धारण सम्बन्धी निर्णय में अहम भूमिका निभाते हैं :-

(क) उपभोक्ता के लिये उत्पाद का महत्व

उपभोक्ता किसी उत्पाद को उसी समय खरीदते हैं, जब उसके लिए माँगे गए मूल्य की तुलना में उस उपभोक्ता के लिए उसकी उपयोगिता अधिक सिद्ध कर सके। चूंकि उपभोक्ता की आवश्यकताएँ असीमित होती है किन्तु उनकी क्रय शक्ति सीमित होती है अतः वह उसी उत्पाद का क्रय करेगा जो कि अदा किये गये मूल्य की तुलना में उसे अधिक संतोष प्रदान कर सके। प्रत्येक उपभोक्ता उन उत्पादों तथा सेवाओं की सूची अपनी प्राथमिकता के आधार पर बनाता है, जिसे वह अपनी संपूर्ण आय से खरीद सकता है, वह उत्पादों व सेवाओं की सूची अचेतन रूप में तथा व्यक्तिपरक तरीके से बनाता है। सूचीकरण की इस व्यक्तिपरकता के कारण किसी उत्पाद द्वारा उपभोक्ताओं को प्राप्त होने वाली उपयोगिता का मापन निश्चित ही कठिन कार्य है।

क्रेता और मूल्य पर विचार करते समय प्रायः हमारा उद्देश्य यह समझने का होता है कि मूल्य किस प्रकार उत्पाद की माँग का निर्धारण करते हैं। जैसा कि हम जानते हैं कि मांग के नियम अनुसार कम मूल्यों पर उत्पादों की माँग अधिक होती है और ऊँची मूल्य पर कम, अधिकतर उत्पादों के लिए माँग का नियम लागू होता है। वास्तव में किसी विक्रेता को अनिवार्य रूप से किसी उत्पाद का उतना ही, मूल्य रखना चाहिए जितनी उपभोक्ताओं की पर्याप्त संख्या को अपनी ओर आकर्षित कर सके ताकि बिक्री पूर्वनुमानित अनुपात में हो सके। उत्पाद विक्रेता को यह अवश्य ही सुनिश्चित करना चाहिए कि मूल्य में परिवर्तन के प्रति क्रेता कितना संवेदनशील है। इस संवेदनशीलता की माँग को मूल्य लोच से मापा जाता है जिसे मांग की लोच में सम्बोधित किया जाता है। मूल्य लोच को परिभाषित करते हुए कहा गया है कि यह मूल्य के सापेक्षिक परिवर्तन के कारण माँग में सापेक्षिक परिवर्तन होता है।

NMDC-130

मूल्य निर्धारण में लागत सदैव ही एक महत्वूर्ण कारक होता है। अपना बाजार हिंस्सा बनाए रखने तथा इस हिस्से में उत्तरोत्तर बढोत्तरी के लिए किसी भी कंपनी के लिए अनिवार्य है कि उसे सभी तरह की लागत व व्यय वापस मिल जाएं तथा कुछ मात्रा में लाभ भी हो। एक सीमित समय के लिए जैसे किसी नए उत्पाद का बाजार में परिचय कराने के समय अथवा किसी नए बाजार में प्रवेश के समय कंपनी किसी उत्पाद को उसके वास्तविक मूल्य से कम मूल्य पर विक्रय की स्थिति को अपना सकती है किन्तु इस स्थिति को लम्बे समय तक नहीं चला जा सकता। अतः दीर्घकाल तक उसे सभी प्रकार की लागतें व निवेश वापस मिल ही जाने के लिये प्रयासरत रहना चाहिए।

प्रायः लागत किसी उत्पाद के लिए वसूले जाने वाले आरम्भिक मूल्य की निचली सीमा, का निर्धारण करती है। जबकि क्रेता प्राप्त किए जाने वाले उपयोग मूल्य की उच्च सीमा तय करता है विपणन प्रबन्धक का कार्य निचली तथा उच्च सीमाओं के बीच एक ऐसे मूल्य को प्राप्त करना है, जो उसे सुव्यवस्थित ढंग से मूल्य निर्धारण के उद्देश्य को प्राप्त करा सके।

अगर उत्पाद में माँग ने लोच नहीं है, तो कंपनी मूल्यों का निर्धारण उच्च स्तर पर कर सकती है। प्रायः उन उत्पादों की माँग लोचदार होती है, जिनकी खरीद स्वविवेक से की जाती है। जैसे-विलासिता की सामग्री, ए0सी0 आदि। मूलभूत उत्पाद, एवं सेवायें जैसे-नमक, चीनी, खाद्यान, सार्वजनिक परिवहन सेवाएँ आदि साधारणतः लोचहीन माँग के अन्तर्गत रखे जाते हैं।

(ख) उत्पाद की कुल लागत

यह अधिक तर्कसंगत होता है कि मूल्य निर्धारण की प्रक्रिया लागतों से शुरू की जाय। मूल्य निर्धारण के दौरान इन प्रश्नों के उत्तर देना, जैसे लागत क्या है, उत्पादों की बिक्री पर कितना लाभ लेना चाहिए। इसके विपरीत, उपभोक्ता उत्पाद के लिए कितना मूल्य दे सकते हैं। जैसे-प्रश्न का उत्तर कठिन होता है। तीसरा प्रश्न यह है कि उपभोक्ता उत्पाद के लिए क्या मूल्य चूका रहा है? इस प्रकार के प्रश्न सर्वाधिक संवेदनशील एवं महत्वपूर्ण होते हैं इसके बावजूद अधिकतर विक्रेता कुल लागत (विनिर्माण लागत+वितरण लागत+प्रशासनिक लागत) में उचित लाभ की रकन को जोड़ने को ही मूल्य निर्धारण की उचित कार्यविधि मानते हैं। इस प्रकार मूल्य निर्धारण की दृष्टि से लागतों को दो स्तरों में रखा जा सकता है।

स्थायी लागतें : वे लागतें, जो उत्पादन अथवा विक्रय के परिमाण के साथ नहीं बदलती स्थायी लागते कहलाती हैं।

परिवर्तनशील लागतें : उत्पादन के परिणाम के साथ बदले वाली लागतें परिवर्तनशील लागतें कहलाती हैं। नियत और परिवर्ती लागतों का योग कुल लागत कहलाती है। औसत कुल लागत का पता लगाने के लिए कुल लागत में कुल उत्पादित इकाइयों से भाग दे दिया जाता है।

(ग) बाजार में प्रतियोगिता

उत्पादन के मूल्य की उच्च तथा निम्न सीमा का निर्धारण क्रमशः क्रेता के लिए उत्पाद की उपयोगिता तथा विक्रेता के लिये उत्पाद की लागत द्वारा सम्भव होता है। परन्तु

सम्बन्धित बाजार में मूल्य के वास्तविक निर्धारण का प्रतियोगिता की मात्रा पर प्रभाव पड़ता है। यदि बाजार में प्रतियोगिता नहीं है और यदि है भी तो बहुत अल्प मात्रा में, ऐसी स्थिति में मूल्य की प्रवृत्ति ऊँचाई की तरफ होगी। दूसरी ओर स्वस्थ तथा मुक्त प्रतियोगिता का कारण मूल्यों में कमी की प्रवृत्ति होती है। प्रतियोगियों द्वारा प्रस्तुत किये जाने वाले उत्पादों के मूल्य तथा उनके गुणों से कंपनी द्वारा लिया जाने वाला मूल्य बहुत अधिक मात्रा में प्रभावित होता है। इसके अतिरिक्त स्थानापन्न उत्पादों के मूल्यों को भी ध्यान में रखा जाता है।

अपने उत्पाद की कीमत का निर्धारण करने से पूर्व कंपनी को प्रतियोगियों के उत्पादों के मूल्यों का विश्लेषण करना चाहिए तथा उद्योग में वर्तमान प्रतियोगियों की कार्य प्रणाली एवं युक्तियों का भी सूक्ष्म अवलोकन करते रहना चाहिए। दूसरी ओर कंपनी को नए प्रतियोगियों के बाजार में प्रवेश करने की संभावना का भी परीक्षण करते रहना चाहिए तथा कंपनी इनसे कितनी प्रभावित होगी इस पर भी निगाह रखना परम आवश्यक है। नए प्रतितियोगियों का बाजार में प्रवेश तथा उनकी भावी प्रतियोगी संभावनाओं को भी उस समय ध्यान में रखना चाहिए, जब उत्पाद का मूल्य निर्धारण हो रहा हो।

(घ) कानूनी प्रावधान

MMDC-130

विपणन में मूल्यों का निर्धारण अति संवेदनशील तथा महत्वपूर्ण निर्णय होता है। मूल्यों में वृद्धि से सार्वजनिक आलोचना होती है। इस पर कानूनी रोक का प्रावधान भी हैं। मान लीजिए कि एक आवश्यक दवा का मूल्य प्रति इकाई बीस रूपये हैं, लेकिन आपातकाल में क्रेता कोई भी कीमत देने के लिए तैयार हो जाता है। यदि प्रतियोगिता नहीं है तो विक्रेता को अधिक मूल्य लेने का लालच हो सकता है। वह प्रति इकाई 20 रूपये भी ले सकता है। परन्तु इसका मूल्य जो भी होगी उसे क्रेता देगा। कानून ऐसी अनैतिक मूल्य वसूलने से विक्रेता को रोकेगा। यह कार्य सरकार द्वारा इस दवा को आवश्यक उत्पाद के रूप में घोषित करके किया जा सकता है। ऐसी स्थिति में विक्रेता को यह आजादी नहीं होती कि वह कानून के अंतर्गत दिए गए निर्देशों का उल्लंघन कर तय मूल्य से अधिक मूल्य ले। इसके लिए ऐसे अनेक कानून बनाए गए हैं जिनके अतिशय विभेदमूलक तथा अनुचित मूल्यों पर प्रतिबन्ध लगाया जाए। विपणन प्रबन्धक को अपने उत्पाद की मूल्य निश्चित करते समय इन कानूनी प्रतिबन्धों की ध्यान रखना चाहिए।

(च) विपणन सम्बन्धी अन्य तत्व

कंपनी की विपणन विधियों का किसी उत्पाद का मूल्य निर्धारण के निर्णय पर महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ता है। वितरण प्रणाली विज्ञापन की गुणवत्ता विक्रय कर्मचारियों की

कुशलता एवं चतुराई, पैकेजिंग के प्रकार, साख की सुविधा, विक्रयोत्तर-सेवा आदि का प्रभाव अंतिम मूल्य पर पड़ता है जिसे उत्पाद के उपभोगकर्ताओं को देना पड़ता है। यदि इन मामलों में कंपनी की स्थिति सुदृढ़ है तो वह अपने उत्पादों के लिए अधिक कीमत वसूल सकती है। उदाहरण के लिए यदि कंपनी गृह आपूर्ति की सेवा प्रारम्भ करती है या मूल्य वापस करने की गारन्टी देती है तब इसके उत्पाद का विक्रय मूल्य अधिक किया जा सकता है। इसके विपरीत, यदि कंपनी इनमें से किसी स्तर पर कमजोर है तो उसे अवश्य ही अपने उत्पाद के लिए कम मूल्य लेना होगा। कंपनी को चाहिए कि वह अपनी सारी विपणन युक्तियों का समन्वय सुसंगत रीति से करे, जिसमें मूल्य नीति भी आती है। यदि कंपनी का उत्पाद अन्य प्रतियोगियों के उत्पाद से अलग छवि रखता है तब कंपनी को अपने उत्पाद के मूल्य निर्धारण करने में अधिक स्वतंत्रता होगी।

5.5 मूल्य निर्धारण की विधियाँ

व्यावसायिक सिद्धान्तों के अनुसार लागत, मांग प्रतियोगिता, विपणन मिश्र के तत्व तथा विधिक प्रतिबन्धों का ध्यान में रखते हुए मूल्यों के निर्धारण का निर्णय करना चाहिए किन्तु व्यवहारिक दृष्टि से विपणनकर्ता लागत, माँग और प्रतियोगिता में से केवल एक को ही ध्यान में रखते हैं। इन कारकों पर सापेक्ष रूप से जोर दिया जाने के कारण तीन व्यावहारिक विचारधाराएँ सामने आती हैं, जो किसी उत्पाद या सेवा के मूल्य निर्धारण के लिए उत्तरदायी समझी जाती है इनका विवरण अग्रलिखित है।

(1) मूल्यों का निर्धारण लागतों के आधार पर।

(2) मूल्यों का निर्धारण मांग के आधार पर।

(3) मूल्यों का निर्धारण प्रतियोगिता के आधार पर।

चित्र 5.1 को देखें कि मूल्य निर्धारण की विधियों का वर्गीकरण किस प्रकार से किया गया है। अब हम इस विधियों को क्रमानुसार समझने का प्रयास करेंगे-

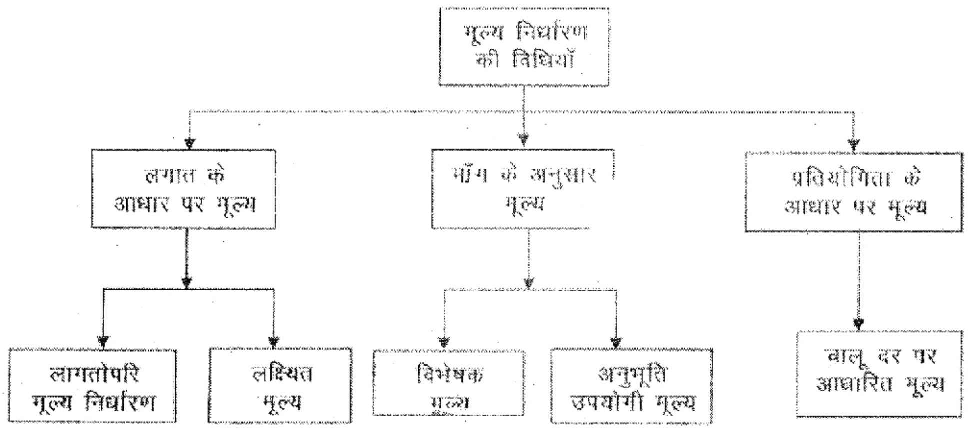

1. लागत आधारित मूल्य

जब विक्रय मूल्य के निर्धारण का आधार उत्पाद की कुल लागत तथा लाभ का विशिष्ट अंश होता है, तो मूल्य निर्धारण की इस विधि को लागत आधारित मूल्य निर्धारण की संज्ञा दी जाती है। इसकी दो विधियाँ हैं : (1) लागतोपरि मूल्य निर्धारण तथा (2) लक्ष्यित लागत मूल्य निर्धारण। आइये अब इन दोनों विधियों के बारे में विस्तार से जानने का प्रयास करें-

अ- कुछ फर्में अपने उत्पादों की विक्रय कीमत को निश्चित करने के लिए उत्पाद की कुल लागतों को जोड़ लेती हैं जिसमें विनिर्माण, वितरण तथा विपणन लागतें शामिल होती हैं और फिर इसमें वे पूर्व निर्धारित लाभ का अंश भी जोड़ देती हैं। लागतोपरि मूल्य निर्धारण विधि को नीचे दिए गए उदाहरण में समझाया गया है :-

	रुपये प्रति इकाई
कुल विनिर्माण लागत	60.00
विक्रय तथा संवर्धन लागत	6.00
वितरण तथा प्रशासनिक लागत	4.00
कुल लागत	70.00
लाभ राशि	10.00
बिक्री कीमत	80.00

इस विधि में उत्पाद लागतों में परिवर्तनशील लागतें और स्थाई उपरिलागते आती हैं। इस विधि को दूसरे शब्दों में इस प्रकार स्पष्ट किया जा सकता है बिक्री कीमत-परिवर्तनशील लागतें+स्थायी लागतें + लाभ राशि। लागतोपरि मूल्य निर्धारण विधि को अधिक व्यावहारिक एवं उपयोगी बनाने के लिए कंपनी को लागत में होने वाले परिवर्तनों पर भी विचार करते रहना चाहिए, जो उत्पादन के परिणाम में परिवर्तन के फलस्वरूप उत्पन्न होते हैं।

मूल्य निर्धारण की यह विधि कम्पनी को ऐसी क्षमता प्रदान करती है कि वह उत्पाद पर आई कुल लागतों को वसूल कर ले और इसके साथ उसे अपेक्षित लाभ राशि की प्राप्ति सुनिश्चित करें यदि हम विक्रेताओं तथा क्रेताओं के प्रति लाभ की दृष्टि से देखें तो इस आधार पर यह विधि सर्वोत्तम है। इस विधि को समझना और क्रियान्वित करना भी सरल है, क्योंकि उत्पाद की मांग के बारे में जितनी अनिश्चितता होती है, उसकी तुलना में लागत के बारे में कम होती है। लागत में लाभ की बिक्री राशि जोड़ी जाएगी, इसका निर्धारण कंपनी करेगी। लाभ की यह राशि एक स्थिति से दूसरी स्थिति में तथा एक उद्योग से दूसरे उद्योग में बदलती रहती है। जब बाजार - अनिश्चित हो जैसे वर्तमान में चल रहा मन्दी का दौर तब यह विधि निरापद विधि हो सकती है।

ब- लक्ष्य लाभ मूल्य निर्धारण

मूल्य निर्धारण की यह विधि लागतोपरि मूल्य निर्धारण विधि से भिन्न है। इसमें कम्पनी का उद्देश्य ऐसा मूल्य निर्धारित करने से होता है, जो उसे अपेक्षित लाभ अर्जन करने में सहायता प्रदान कर सके। इस उद्देश्य में फर्म द्वारा सम विच्छेद विश्लेषण का उपयोग किया जाता है तथा सम विच्छेद बिन्दु का निर्धारण किया जाता है।

सम विच्छेद विश्लेषण कुछ लागतों को कुल आय से जोड़ता है। सम विच्छेद बिन्दु उत्पादन के स्तर का वह बिन्दु है जहाँ कुल विक्रय आय कुल लागत के बराबर होती हैं। दूसरे शब्दों में सम विच्छेद बिन्दु उत्पादन का वह स्तर है, जहाँ कम्पनी को न तो लाभ होता है और न ही हानि। कुल लागत तथा कुल आय की पारस्परिकता इसका प्रतिनिधित्व करती है। विभिन्न विक्रय मूल्यों के लिए अलग-अलग सम विच्छेद बिन्दु होते हैं। सम-विच्छेद बिन्दु से जो भी अधिक बिक्री होती है वह फर्म को लाभ प्रदान करेगी। यदि बिक्री की मात्रा सम विच्छेद बिन्दु से कम हुई तो फर्म को घाटा होगा। सम विच्छेद बिन्दु का आकलन निम्नलिखित विधि से किया जा सकता है।

$$\textbf{सम विच्छेद बिन्दु} = \frac{\text{कुल स्थाई लागतें}}{\text{स्थाई लागतों में प्रति इकाई योगदान}}$$

$$= \frac{\text{कुल स्थाई लागतें (F)}}{\text{प्रति इकाई विक्रय मूल्य (P)}}$$

प्रति इकाई औसत परिवर्तनशील लागत (V)

सम विच्छेद विश्लेषण की ग्राफीय प्रस्तुति के लिए चित्र 5.2 का अवलोकन करें। इस चित्र में प्रत्येक विक्रय परिमाण के स्तर पर सापेक्षिक लाभ-हानि का प्रदर्शन गया है। जब तक परिणाम रेखा पर इकाईयों की बिक्री अ बिन्दु तक नहीं पहुँच जाती

तब तक हानि की अपेक्षा की जा सकती है। सम विच्छेद बिन्दु का प्रतिनिधित्व वह बिन्दु करता है, जहाँ, कुल आय रेखा कुल लागत रेखा को काटती है। इसके बाद लाभ की अपेक्षा की जा सकती है। स्थिर लागत वक्र उत्पादन परिणाम के साथ नहीं बदलता जबकि परिवर्तनशील लागतें उत्पाद परिमाण वृद्धि के साथ बढ़ती है। कुल लागत वक्र कुल नियत लागतों तथा कुल परिवर्तनशील लागतों के योग को प्रदर्शित करता है। कुल आय वक्र विक्रय का परिमाण करती है। अर्थात् विक्रय की गई इकाईयों की संख्या X प्रति इकाई बिक्री कीमत।

चित्र 5.2 सम–विच्छेद बिन्द चार्ट

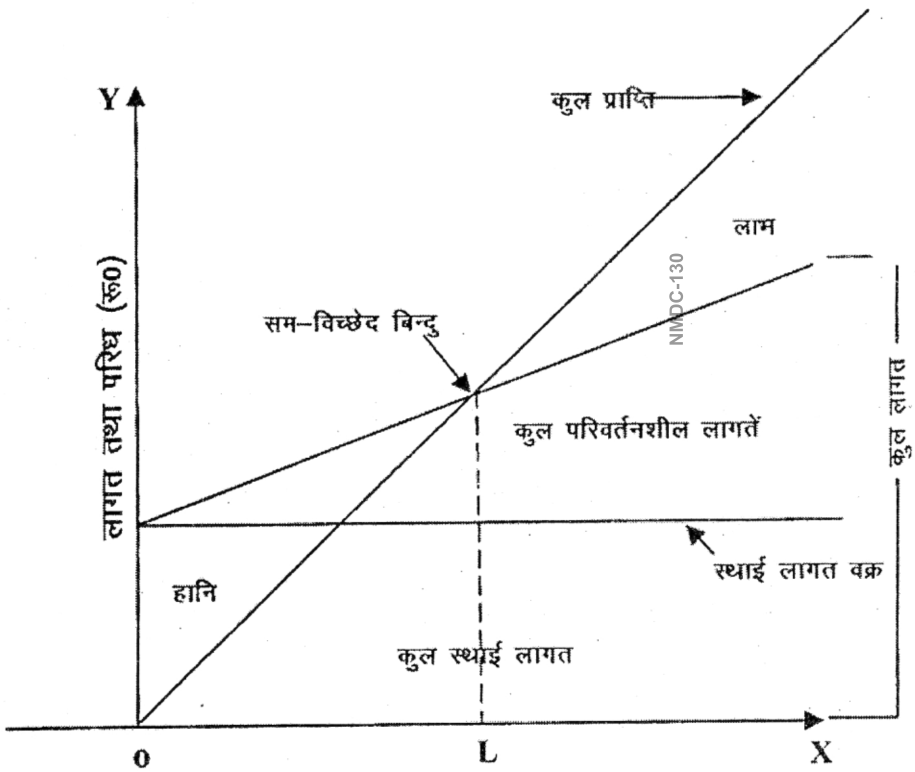

सम विच्छेद विश्लेषण, वित्तीय विश्लेषण तथा मूल्य निर्धारण निर्णायों के लिए अत्यन्त उपयोगी प्रविधि है। इस प्रविधि के सहारे कोई भी विपणन प्रबन्धक मूल्य निर्धारण निर्णयों के वित्तीय आशय को इन निर्णयों के कार्यान्वित करने से पहले ही समझ सकता है। यह एक ऐसी सरल विधि है, जो लघुकाल के दौरान अत्यधिक उपयुक्त होती है, उस समय लागत कीमत तथा माँग आकलन प्रायः स्थिर होते हैं।

सम विच्छेद विश्लेषण के सहारे मूल्य निर्धारण के दौरान कंपनी को भिन्न-भिन्न

प्रकार के प्रचलित मूल्य तथा विक्रय परिणाम पर उनका क्या असर होगा इस पर विचार कर लेना आवश्यक होता है क्योंकि ये विक्रय परिणाम सम विच्छेद बिन्दु को पार करने तथा वांछित लाभ अर्जन के लिए परम आवश्यक है। विभिन्न मूल्य स्तरों पर सम विच्छेद बिक्री के स्तर की संभावना को प्राप्त करने का परीक्षण भी कर लेना चाहिए। नए उत्पाद के मूल्य को निश्चित करने के लिए सम विच्छेद विश्लेषण विशेष रूप से उपगोयी माना जाता है।

मूल्य निर्धारण के लिए सम विच्छेद विश्लेषण की प्रमुख सीमा यह है कि प्रत्येक अतिरिक्त इकाई के लिए परिवर्तनशील लागतों को समान माना जाता है तथा उत्पादन के सभी स्तरों के लिए कुल नियत लागतों को स्थिर मान लिया जाता है। वे धारणएँ कतिपय उत्पादों के लिए सही मानी जाती है लेकिन सभी तरह के उत्पादों के लिए नहीं। खरीदे जाने वाले परिमाण की अनदेखी करके विक्रय मूल्य को एकसमान मानना भी हमेशा ठीक नहीं होता। विक्रेता परिणाम से संबद्ध छूट देते हैं, ताकि बड़ी मात्रा में बिक्री को बढ़ावा मिले। इसका असर होता है, अधिक मात्रा में खरीद के लिए कीमत को कम करना। ऐसी स्थिति में विक्रय से आय में समानुपातिक वृद्धि नही भी हो सकती है। तथा आय वक्र रैखिक भी नहीं हो सकता।

NMDC-130

सम विच्छेद विश्लेषण के जरिए इस बात को सुनिश्चित किया जाता है कि सम विच्छेद बिन्दु तक पहुँचने के लिए कितनी इकाइयों की बिक्री आवश्यक है किन्तु इस प्रविधि के जरिए हम यह निश्चय नहीं कर पाएंगे कि क्या फर्म उस कीमत पर उत्पाद की उतनी इकाइयाँ बेच सकेगी। इस तरह हम देखते हैं कि मूल्य निर्धारण कार्य में सम विच्छेद विश्लेषण केवल आंशिक रूप से ही सहायक होता है। यह सम विच्छेद बिन्दु पर वैकल्पिक मूल्यों, लागतों तथा परिमाणों के तुलनात्मक प्रभाव को प्रदर्शित करता है।

2. मांग आधारित मूल्य

मांग आधारित मूल्य निर्धारण द्वारा इस विश्लेषण पर आधारित होता है कि विभिन्न मूल्यों पर जिन्हें भिन्न प्रकार के उपभोकता देने को तैयार है, कितने विक्रय का अनुमान किया जा सकता है। लागतों पर या प्रतियोगियों द्वारा निश्चित मूल्यों के आधार पर अपने उत्पादों के मूल्यों को निर्धारित करने के बजाय, कुछ फर्में अपने उत्पादों के विक्रय मूल्य मांग के आधार पर ही निर्धारित करती हैं।

इस दृष्टि से मूल्य निर्धारण को दो विधियों में विभाजित कर सकते हैं -

(अ) विभेदक मूल्य निर्धारण

(ब) अनुभूत उपयोगी मूल्य

(अ) विभेदक मूल्य निर्धारण

प्रायः विभिन्न समूहों के क्रेताओं की आवश्यकताएं तथा इच्छाएं भिन्न होती है। अतः किसी उत्पाद के लिए उनकी मांग की तीव्रता अलग हो सकती है। इन परिस्थितियों में विक्रेताओं की यह इच्छा होती है कि वे उन उपभोक्ताओं से अपने उत्पाद के लिए अधिक मूल्य लें जिनकी मांग कम लोचदार है और उन उपभोक्ताओं से कम मूल्य लें जिनकी मांग अधिक लोचदार हैं। विभेदक मूल्य निर्धारण आम तौर पर इन चार कारकों में से किसी एक कारक पर आधारित हो सकता है। उपभोक्ता स्थान, क्रय समय, उत्पाद रूप, निहित गुणवत्ता आदि।

भिन्न उपभोक्ताओं के लिए भिन्न प्रकार के मूल्य निश्चित किये जा सकते हैं इस तरह के मूल्य लेना इसलिए संभव है कि भिन्न प्रकार के उपभोक्ताओं की व्यापर करने की क्षमता अलग होती है तथा उनके द्वारा मूल्य चुकाने की क्षमता भी अलग होती है। उत्पाद के बारे में उनकी जानकारी का स्तर भिन्न होता है तथा उत्पाद की उपलब्धता भी कहीं ज्यादा तो कहीं कम होती है। जैसे भिन्न भिन्न वर्ग के उपभोक्ताओं के लिए मोबाइल सेवा देने वाली कम्पनियाँ अलग-अलग दर से पैसा लेती हैं।

यदि भिन्न स्थानों के लिए एक उत्पाद तथा समान उत्पाद कीमतें अलग हों तो यह स्थान संबंधी विभेदक मूल्य कहा जाता है। यदि हम समय की दृष्टि से देखें तो पाएंगे के किसी उत्पाद की मांग मौसम, दिन और यहाँ तक दिन की अलग अलग घड़ियों भी बदलती रहती हैं। अमुक मौसम का लाभ उठाते हुए मूल्य निर्धारित किया जा सकता है, जिसका आधार मांग की तीव्रता होती है। उदाहरण के लिए मोबाइल सेवा की दरें लोकल तथा एस0टी0डी0 के लिए अलग अलग होती है। इस प्रकार दिन रात सुबह शाम में टेलीफोन उपयोग की दरें भिन्न होती हैं। उत्पाद आधारित विभेदक मूल्य निर्धारण के अंतर्गत विक्रेता उसी उत्पाद के लिए ग्राहकों से थोड़े अधिक गुणों तथा कार्यों के लिए अधिक मूल्य लेता है। कीमतों में यह अंतर अन्य उत्पाद में कथित गुणों को देखते हुए अनुपात से अधिक होता है लेकिन क्रेता उसकी परवाह नहीं करते।

विभेदक मूल्य के कारण संभवतः ग्राहकों के बीच गलतफहमी होती है। अतः विक्रेता को इस संबंध में निर्णय लेने से पहले इसके परिणामों पर अच्छी तरह विचार कर लेना चाहिए।

ब- अनुभूत उपयोगी मूल्य

भिन्न प्रकार के उपभोक्ताओं को एक ही प्रकार के उत्पाद के बारे में प्रायः अलग अलग अनुभूति होती है, जिसका आधार उनके लिए उसकी उपयोगिता होता है। भिन्न प्रकार के होटल या रेस्त्रां द्वारा एक कप सूप का मूल्य अलग अलग दर से लिया जाता

है क्योंकि क्रेता उसी एक कप सूप के लिए अलग अलग तरह से उपयोगिता का आकलन करता है। जब आज इस अनुभूत उपयोगी मूल्य निर्धारण विधि का प्रयोग करेंगे तब आपको यह सुनिश्चित करना होगा कि भिन्न भिन्न प्रकार के ग्रहक गुणवत्ता, विशेषता तथा गुण आदि की दृष्टि से उत्पाद के बारे में क्या और कैसे सोचते हैं तथा इन भिन्नताओं की दृष्टि से उनके लिए उत्पाद की क्या उपयोगिता है?

8.5.3 प्रतियोगिता आधारित मूल्य

जब किसी उत्पाद के मूल्य निर्धारण का आधार प्रतियोगी द्वारा उसी प्रकार के उत्पाद के लिए वसूल की जाने वाले मूल्य होते हैं न कि उत्पाद की लागत तब इस मूल्य निर्धारण विधि को प्रतियोगिता आधारित मूल्य निर्धारण की संज्ञा दी जाती हैं

चालू दर पर आधारित मूल्य प्रतियोगिता आधारित मूल्य निर्धारण विधा के अन्तर्गत यह एक प्रचलित विधि है। इस विधि के अन्तर्गत कम्पनी अपने भिन्न उत्पादों का रिकार्ड विस्तार पूर्वक नहीं रखती। कम्पनी मांग की तीव्रता को भी जानने का प्रयास नहीं करती और न ही वह यह जानने का प्रयास करती है कि उपभोक्ता के मन में उस उत्पाद के प्रति क्या धारणा है। कम्पनी बाजार में प्रचलित चालू दर के अनुसार अपने उत्पाद का मूल्य निर्धारण करती है। यह भी आवश्यक नहीं है कि कम्पनी उत्पाद की कीमत वही रहें जो उसके प्रतियोगी वसूल रहे हैं, उसके द्वारा निश्चित किया गया मूल्य इससे अधिक या कम हो सकता है। दूसरी ओर जब व्यापार संघ या उद्योग अग्रणी मूल्य को बढ़ाता या कम करता है तो कम्पनी इस परिवर्तन का अनुसरण करती है। बाजार दर या चालू दर पर मूल्य निर्धारण करने का चलन व्यापरियों के बीच और विशेषतया फुटकर विक्रेताओं के बीच बहुत अधिक लोकप्रिय हो चला है।

जो व्यापारी चालू दर मूल्य निर्धारण विधि का अनुसरण करते हैं, उनके अनुसार प्रचलित दरें उद्योग की सामूहिक बुद्धिमता का प्रतिनिधित्व करती हैं। यह भी सही है कि उपभोक्ता की प्रतिक्रिया विभेदक मूल्य निर्धारण के प्रति क्या होगी, इसको सुनिश्चित करना अत्यन्त कठिन होता है तथा ग्राहकों के मन में उत्पाद के प्रति क्या अनुभूति है, इसे भी नहीं जाना जा सकता है। इसके अतिरिक्त इस विधि को क्रियान्वित करना सरल है।, क्योंकि इसके लिए मांग की कीमत लोच को जानने की जरूरत नहीं होती। इस संदर्भ में ऐसा भी कहा जाता है कि चालू दर के मूल्य निर्धारण से प्रतियोगियों के बीच मूल्य को लेकर मतभेद आदि नहीं होते। इस विधि का अनुसरण मुख्यतः सजातीय उत्पादों के संबंध में शुद्ध प्रतियोगिता तथा अल्पाधिकार को समय में किया जाता है।

स्व-परख प्रश्न

प्र.1 मूल्य निर्धारण की तीन प्रमुख विधियों को समझाइये?

प्र.2 लागतोपरि मूल्य निर्धारण में किन कारकों पर अधिक ध्यान केन्द्रित करना चाहिए?

प्र.3 सम विच्छेद बिन्दु के सम्बन्ध में बताइये ?

प्र.4 उन कारकों को बताइये जो उत्पाद के मूल्यों का निर्धारण करते हैं?

NMDC-130

5.6 मूल्य निर्धारण तथा नवीन उत्पाद

बाजार में जब नए उत्पाद की विक्रय आरंभ किया जाता है, तब निर्माता को मूल्य निर्धारण के संबंध में पर्याप्त रूप में स्वतंत्रता प्राप्त होती है। इस चरण में मूल्य संबंधी निर्णय का काफी समय तक प्रभाव होता है, क्योंकि विवेकहीन मूल्य निर्धारण उत्पाद की मांग तथा लाभदेयता पर विपरीत प्रभाव डाल सकता है। इस चरण में फर्म को खासकर दीर्घकालीन प्रतिफल तथा लाभ पर ध्यान देना चाहिए न कि तत्काल लाभ पर। यदि फर्म को अनुभव की कमी है तथा माँग पर मूल्य के प्रभाव के संबंध में आंकड़े उपलब्ध नहीं हैं तो ऐसी स्थिति में नए उत्पाद का मूल्य निर्धारण करना कठिन सिद्ध हो सकता है। प्रायः नए उत्पाद के मूल्य निर्धारण के संबंध में दो विधियों का प्रयोग किया जाता है।

(1) बाजार मंथन मूल्य -

निर्माता बाजार का विश्लेषण सभी प्रकार से करता है अर्थात वह प्रारम्भ में किसी नए उत्पाद की कीमत अधिक रखता है फिर बाद में धीरे धीरे उसमें कमी करता है, ताकि बाजार के नए भाग उसके घेरे में आ जाए। ऐसा करना ही निर्माता द्वारा बाजार का मंथन करना कहा जाता है। प्रायः विद्वान मंथन मूल्य उन उत्पादों के लिए उपयुक्त मानते हैं जो

नवीनता का प्रतिनिधित्व करते हैं। यह मूल्य अपेक्षित मूल्यों की शृंखला से अधिक होता है। कंपनी मंथन मूल्य की युक्ति को अनिश्चित काल तक चलाए रख सकती हैं अथवा बाजार में अन्य भागों में प्रवेश करने के लिए उसमें कमी कर सकती है। बाजार मंथन मूल्य निम्न परिस्थितियों में नए उत्पाद के लिए उपयुक्त हो सकते हैं -

(क) उत्पाद के लिए माँग बेलोच होने पर,

(ख) अगर कम परिमाण में उत्पाद की उत्पादन औसत लागत बहुत अधिक नहीं है,

(ग) यदि उत्पाद अभिजात्य वर्ग के क्रेताओं के लिए हैं,

(घ) ऐसे क्रेताओं की संख्या बहुत बड़ी है जिनकी मांग बहुत अधिक है। तथा

(ङ) यदि प्रतियोगिता के उभरकर सामने आने का खतरा कम है।

अगर फर्म मंथन मूल्य नीति का अनुसरण करती है तो इकाइयों के हिसाब से इनके विक्रय की मात्रा कम होगी, लेकिन मूल्य राशि के हिसाब से अधिक होगी और लाभ की मात्रा भी अधिक होगी।

(2) बाजार पैठ मूल्य -

बाजार पैठ मूल्य निर्धारण में आरंभिक विक्रय मूल्य कम होता है जिससे समूह बाजार में तत्काल विक्रय के लिए प्रवेश किया जा सके। निम्नलिखित परिस्थितियों में बाजार पैठ मूल्य निर्धारण पद्धति सही साबित होती है।

NMDC-1

(1) जब विक्रय का परिमाण, मूल्य के प्रति बहुत अधिक संवेदनशील हो अर्थात उत्पाद अत्यधिक लोचपूर्ण हों,

(2) जब वृहत पैमाने पर संचालन के जरिए संस्थापित क्षमता से कम उत्पादन तथा विपणन लागत में ठोस रूप में कमी की जा सकती हो,

(3) बाजार के उस बड़े खंड का न होना जो ऊँची कीमत स्वीकार करेगा, ऐसे खण्ड को अभिजात्य बहुल बाजार कहा जाता है,

(4) जब संभावित प्रतियोगिता की ओर से आक्रमण की आशंका हो क्योंकि पैठ मूल्य का उपयोग प्रतियोगी के बाजार में प्रवेश रोक लगाने के लिए किय जा सकता है। इसलिए इस मूल्य निर्धारण पद्धति को दूर रखों मूल्य निर्धारण भी कहा जाता है।

प्रतियोगिता कितनी और कैसी है प्रायः मुख्य रूप से दो युक्तियों में एक के चयन को संस्तुत करती हैं। यदि प्रतियोगी बाजार में द्रुत गति से प्रवेश कर सकते हैं और उत्पाद

के लिए बाजार की संभावना उत्साहजनक है तब ऐसी स्थिति में प्रबंध संभावित रूप से पैठ मूल्य निर्धारण की नीति को अपनाएगा।

वस्तुतः पैठ मूल्य निर्धारण के दो लाभ हैं- प्रथम यह मूल्य निर्धारण पद्धति फर्मों को बाजार में प्रवेश करने के संबंध में हतोत्साहित करती है। उत्पादन तथा विपणन पर किया गया निवेश अपेक्षित न्यून लाभ की राशि के मुकाबले बहुत अधिक हो सकता है। दूसरा कम मूल्य के कारण नए उत्पाद के प्रवर्तक की धाक बाजार में इतनी दृढ़ जाती है कि दूसरे प्रतियोगियों को इसमें घुस पाना कठिन होता है। दूसरी ओर मंथन मूल्य उस स्थिति से अधिक उपयोगी है जहाँ बाजार को अपनी ओर आकृष्ट नहीं कर पाते। इसमें लाभ का प्रतिशत अंश तो आकर्षक हो सकता है, लेकिन कुल मिलाकर रूपयों में लाभ की राशि इतनी कम होगी कि बड़ी कम्पनियाँ इस ओर आकृष्ट ही नहीं होंगीं।

जैसा कि हम जानते हैं कि निर्माता प्रायः अपने उपभोक्ताओं को सूचना देने के लिए उत्पादों की मूल्य सूची का निर्माण करते हैं। इन मूल्यों को वे अपने उत्पाद पर भी अंकित करते है। व्यापारियों तथा क्रेताओं की आवश्यकता से मेल बिठाने के लिए इस मूल्य सूची में और भी समायोजन किये जाते है। इस समायोजनाओं के लिए मूल्य सूची में कई तरह की कटौतियाँ की जाती हैं जैसे - छूट, बट्टा, कमीशन तथा रियायतें। आइये अब इनके बारे में क्रमवार विश्लेषण करें।

NMDC-130

(1) परिमाण छूट :- विक्रय तथा वितरण लागतों का सीधा संबंध किसी एक क्रेता के हाथ बेचे गये उत्पादों की मात्रा या संख्या से होता है। यदि क्रेता बड़ी मात्रा में इनसे खरीदता है, तो विक्रेता का विक्रय तथा विरण में आने वाली लागतों में बचत होती है। क्रेताओं को बड़ी मात्रा में उत्पादों की खरीद के लिए प्रोत्साहन देने हेतु विक्रेता उत्पाद के लिए ली गई कीमतों को कम कर देते है। इसे परिमाण छूट की संज्ञा दी जाती है। ये छूटे खरीद के आकार पर आधारित होती हैं। इस आधार पर खरीदी गई उत्पाद की इकाई संख्या से अथवा कुल खरीद की मूल्य राशि से बनाया जा सकता है। उदाहरणार्थ यदि आप एक पपीता खरीदते है तो उसकी कीमत 0.50 पैसे होती है लेकिन एक दर्जन पपीते की कीमत 5.00 रूपये हो जाती हैं। यदि हम एक किलो ग्राम अरहर दाल खरीदते हैं तो कीमत 6 रूपये हो सकती है लेकिन यदि आप वही दाल एक क्विंटल (100 किलोग्राम) खरीदें तो कीमत 550 रुपये हो सकती है। प्रथम स्थिति में आप 12 पपीते की खरीद पर परिमाण छूट 1.00 रूपया प्राप्त करते हैं अथवा 6.00 रूपये पर 1.00 रूपये की छूट पा रहे है। दूसरी स्थिति में आपको 100 किलोग्राम अरहर की दाल पर 6.00 रूपये पर 50.00 रूपये परिमाण छूट दी जा रही है। परिमाण छूट दो प्रकार की होती है, संचयी छूट तथा असंचयी छूट।

तालिका 5.1 असंचीय छूट का उदाहरण

खरीदे गये शैम्पू की पेटियों की संख्या (अदद पेटी में 12 दर्जन एक अदद की खरीद में)	मूल्य सूची में छूट
1 से 4 पेटिका तक	2 प्रतिशत
5 से 9 पेटिका	4 प्रतिशत
10 से 19 पेटिका	6 प्रतिशत
20 से 49 पेटिका	8 प्रतिशत
50 पेटिका तथा उससे ऊपर	10 प्रतिशत

असंचयी छूट के ढाँचे को मूल्य स्लैब प्रणाली में भी प्रदर्शित किया जा सकता है। उदाहरण के लिए तालिका 5.2 को देखिए।

तालिका 5.2 स्लैब प्रणाली में असंचयी छूट का विवरण

आदेश का आकार (शैम्पू बोतलों की संख्या)	विक्रय मूल्य (प्रति बोतल शैम्पू का मूल्य) रूपये में
1 से 99	500.00
100 से 499	485.00
500 से 999	480.00
1000 से 4999	475.00
5000 से ऊपर	470.00

NMDC-130

प्रायः असंचयी छूट क्रेताओं को अधिक खरीददारी के लिए प्रोत्साहित करती है। खरीद के आदेश के कारण विक्रेता द्वारा किए जाने वाले अनेक खर्चों मे कटौती होती है जो आदेश के बड़े या छोटे आकार पर निर्भर होता है। इन खर्चों में विक्रय व्यय, आदेश प्रक्रिया व्यय, पैकिंग तथा परिवहन व्यय, आपूर्ति तथा उगाही व्यय सम्मिलित किया जाता है। अधिक संख्या में आदेश के कारण उत्पाद व्यय में भी कमी होती है क्योंकि वृहत पैमाने पर उत्पादन के कई आर्थिक लाभ होते हैं।

(ब) संचयी परिमाण छूटें - एक निश्चित अवधि के दौरान, सामान्यतः एक वर्ष में, जब एक उत्पाद की खरीद की जाती है, तो ऐसी स्थिति में खरीद के कुल परिमाण पर विक्रेता द्वारा क्रेता को कीमत में कटौती के रूप में यह छूट प्रदान की जाती है। यह छूट क्रेता को दिया जाने वाला एक पुरस्कार है क्योंकि उसने अपेक्षागत एक लंबे समय तक

विक्रेता को संरक्षण दिया है। इसके अतिरिक्त वह (क्रेता) एक विशेष अवधि के अंत में छूट प्राप्त करता है। जितना अधिक वह इस अवधि में खरीद करेगा, उसे उतनी ही अधिक मात्रा में छूट मिलेगी, क्योंकि छूट स्लैब विक्रय परिमाण पर आधारित होती है। इस प्रकार के छूट को हम नीचे दी गई छूट सूची में देख सकते हैं जिसका उपयोग एक लेदर जैकेट बनाने वाले निर्माता द्वारा किया गया है -

तालिका 5.3 संचयी परिमाण छूट का उदाहरण

कुल वार्षिक क्रय	छूट की मात्रा
50,000 रू. से नीचे	शून्य
50,000 रू. से 1,99,999 रू. तक	2 प्रतिशत
1,00,000 रू. से 1,99,999 रू. तक	3.5 प्रतिशत
2,00,000 रू. से 2,49,999 तक	4.0 प्रतिशत
2,50,000 रू.से 3,49,999 रू. तक	5.5 प्रतिशत
4,00,000 4,99,999 रू. तक	6.0 प्रतिशत
5,00,000 रू. से अधिक	7.0 प्रतिशत

NMDC-130

(2) व्यापारिक छूट - प्रायः इसे कार्यात्मक छूट के नाम से भी जाना जाता है। यह विक्रेताओं द्वारा वितरण मध्यस्थों को प्रदान की जाती है, क्योंकि ये मध्यस्थ विशिष्ट सेवाएं जैसे - उत्पादों का भण्डारण, विक्रय, सूचना संग्रह, शिकायतों का निपटान तथा उपभोक्ताओं को सेवा प्रदान करते हैं। भिन्न प्रकार के मध्यस्थों को अलग अलग दरों से छूट देने का प्रावधान किया जाता है। इसका आधार उत्पाद निर्माता को मध्यस्थों द्वारा प्रदान की गई सेंवायें हैं। फिर भी एक जैसे स्तर पर काम कर रहे मध्यस्थों को व्यापार में दी जाने वाली छूट की दर एक होनी चाहिए, अन्यथा भिन्न दरों से छूट देने का अर्थ भेदमूलक व्यवहार होगा, जिसके कारण व्यापारियों में असंतोष फैलेगा तथा कानून के अनुसार भी इसे आपत्तिजनक करार दिया जा सकता है। व्यापार छूट क्रेताओं द्वारा व्यापार संबंधी उत्सुकता का भी प्रतिनिधित्व करती है, क्योंकि यदि माल विक्रेता विभिन्न प्रकार के क्रेताओं से खरीद की अधिक मात्रा चाहता है तो व्यापार छूट एक विचारणीय तथ्य है।

(3) **नकद छूट** - क्रय राशि तत्काल भुगतान करने के लिए जब क्रेताओं को प्रोत्साहित किया जाता है तब बीजक का राशि में किसी प्रकार की कटौती को नकद छूट की संज्ञा दी जाती है। प्रायः यह तब किया जाता है जब विक्रय उधार पर किया जाता है। मूल्य सूची में व्यापार तथा परिमाण छूटों को दिए जाने के बाद नकद छूट का आलकन किया जाता है। एक विशिष्ट उदाहरण - 2/10, n/30है जिसका अर्थ है कि भुगतान 30 दिन में देय है। लेकिन यदि क्रेता 10 दिन के अन्दर भुगतान कर देता है तो वह देय राशि में 2 प्रतिशत की कटौती कर सकता है। प्रायः प्रबन्धक नकद छूट की युक्ति को निम्नांकित कार्यों के लिए प्रयोग में लाया जाता है।

(क) देयकों की अधिक शीघ्रता के साथ भुगतान हेतु

(ख) साख की जोखिम कम करने के लिए,

(ग) नकद रोकड़ की स्थिति सुधारने के लिए,

(घ) साख के लिए वित्तीय व्यवस्था हेतु ऋण प्राप्त करने के व्यय को कम करने के लिए, तथा

(च) खाता संबंधी लिखा-पढ़ी करने तथा उगाही कर्मचारियों पर आने वाले व्यय को कम करने के लिए। क्रेता की दृष्टि से जब किसी भी स्थिति में देय तिथि पर भुगतान करना ही है तब 20 दिन पहले भुगतान कर देना और 2 प्रतिशत की छूट प्राप्त कर लेना अधिक लाभ की स्थिति प्रतीत होती है। यदि हम इस छूट की राशि को वार्षिक आधार पर जोड़ें तो यह राशि सालाना 30 प्रतिशत होती है। जो बहुत ही बड़ी राशि है।

यहाँ यह भी ध्यान रखना आवश्यक है कि अविलंब प्रोत्साहन करने के लिए नकद छूट की ऊँची दर न्यास संगत नहीं हो सकती है। दूसरी ओर यदि नकद छूट की राशि बहुत कम हो तो यह भी हो सकता है कि यह क्रेताओं को तत्काल भुगतान के लिए प्रेरित न करें। नकद छूट की दर क्या हो, इसका निर्णय इन दोनों पहलुओं पर विचार करने के बाद ही किया जाना चाहिए। बहुत सी स्थितियों में तो नकद छूट इसलिए भी दी जाती है क्योंकि इसकी उम्मीद की जाती है और व्यापार में भी यह एक प्रथा सी हो गई है। क्रेताओं के बीच मतान्तर से बचने के लिए सभी क्रेताओं को एक ही दर से नकद छूट का प्रावधान किया जाना चाहिए।

(4) **मौसमी छूट** - कभी कभी उत्पादों के लिए बिक्री का मौसम न होने के कारण भी छूट का प्रावधान करना पड़ता है। विक्रेताओं द्वारा ऐसा इसलिए किया जाता है कि मौसम न होने के कारण उत्पाद की माँग नहीं होती और क्रेताओं की ऐसी स्थिति में उत्पाद की खरीदारी के लिए प्रोत्साहित किया जाना आवश्यक हो जाता है। इस छूट को मौसमी छूट कहा जाता है। जैसा कि हम जानते हैं कि सर्दियों से ए0सी0 के निर्माता इसकी खरीद पर छूट देते हैं, उस समय इसकी माँग कम होती है। मौसमी छूट क्रेताओं को मौसम के बाद उत्पाद को खरीदने और इसे वास्तविक उपयोग से पूर्व अपने पास भंडारण

के लिए प्रोत्साहित करती है। इस प्रकार माल निर्माता मौसम के बाद अपने माल की बिक्री कर सकता है। इस छूट के कारण विक्रेता को अपने उत्पाद क्रम तथा विक्रय क्रम में असंगतता को कम करने तथा उसमें असंगतता लाने में सहायता मिलती है। यदि छूट की राशि काफी अच्छी हो तो मध्यस्थ विक्रेता इस राशि का सम्पूर्ण या कुछ अंश अपने उपभोक्ताओं को भी वितरित कर सकता है।

9.2.5 संवर्धनात्मक छूट

संवर्धनात्मक छूट उत्पाद निर्माता द्वारा एक मध्यस्थ विक्रेता को देयक में दी गई छूट है, क्योंकि मध्यस्थ ने उत्पाद की बिक्री तथा उसके संवर्द्धन के संबंध में अतिरिक्त कार्य किया है। इन अतिरिक्त संवर्द्धन कार्यों के अंतर्गत स्थानीय विज्ञापन, उत्पाद-प्रदर्शन, उत्पाद से सम्बन्धित उपयोग, प्रस्तुत प्रदर्शनियों में सहभागिता शामिल होता है।

स्व-परख प्रश्न

प्र.1 संचयी तथा असंचयी परिमाण छूट क्या है। अंतर स्पष्ट करें?

.2 एक फर्म अपने उत्पाद के लिए जिसकी मूल्य सूची 600 रूपये प्रति इकाई है अपने फुटकर विक्रेता 10 प्रतिशत की दर से व्यापार छूट देती है और 5 प्रतिशत की दर से थोक विक्रेता को देती है, बताइये कि निर्माता द्वारा इस उत्पाद का विक्रय मूल्य कितना रखा गया है?

.3 एक निर्माता 5000 रूपये के आदेश पर 3 प्रतिशत की दर से परिमाण छूट दे रहा है। 6 दिन के अंदर भुगतान करने पर वह 3 प्रतिशत की दर से छूट, व्यापार छूट 4 प्रतिशत की दर से तथा मौसमी छूट 80 रूपये की दर से दे रहा है। यदि क्रेता निर्धारित अवधि (6 दिन) में भुगतान कर देता है तो बताइये कि देयक की राशि कितनी होगी?

.4 विचार करें कि निम्नांकित कथन सही है या गलत ।

क) जब छूट एक अदद खरीद पर दी जाती है तो इसे असंचयी परिणाम छूट कहा

जाता है।

(ख) संचयी परिमाण छूट क्रेता को एक अमुक विक्रेता को संरक्षण देने के लिए प्रोत्साहन प्रदान नहीं करती है।

(ग) नकद छूट के उद्देश्यों में एक उद्देश्य है क्रेताओं को अविलंबन भुगतान करने को प्रोत्साहित करना।

(घ) मौसमी छूट किसी कम्पनी द्वारा साल भर दी जाती है?

(च) व्यंवर्द्धन छूट निर्माता द्वारा ग्राहक को दी जाती हैं।

प्र.5 उन परिस्थितियों का उल्लेख कीजिए, जो बाजार मंथन मूल्य निर्धारण नीति के सहायक होती है?

5.8 मूल्य सम्बन्धी सरकारी प्रावधान

भारत में मूल्यों पर सरकारी नियन्त्रण अन्य देशों की तुलना में अधिक पुराना नहीं है। सबसे पहले यह नियन्त्रण 1939 में भारत सुरक्षा नियमों (Defence of India Rules) के अन्तर्गत लगाये गये थे जो 30 सितम्बर 1946 तक लागू रहे। इन प्रतिबन्धों को लागू रखने की आवश्यकता को मानते हुए सरकार ने एक अध्यादेश से इनको जारी रखा और इस अध्यादेश का स्थान आवश्यक पूर्ति (अस्थायी अधिकार) अधिनियम [Essential Commodities (Temporary Powers)Act], 1946 ने ले लिया जो 26 जनवरी 1955 को समाप्त हो गया। बाद में इसका स्थान 1 अप्रैल 1955 से आवश्यक वस्तु अधिनियम (Essential Commodities Act), 1955 ने ले लिया है।

आजकल सरकार को किसी भी उत्पाद के मूल्यों में हस्तक्षेप करने का अधिकार निम्न अधिनियमों के अन्तर्गत मिला हुआ है -

(1) आवश्यक वस्तु अधिनियम।

(2) औद्योगिक विकास एवं नियमन अधिनियम।

(3) प्रतिस्पर्धा अधिनियम-2003।

5.9 सारांश

मूल्य किसी उत्पाद अथवा सेवा का विनिमय मूल्य कहलाता है। यह विपणन कार्यों में से एक महत्वपूर्ण कार्य है क्योंकि यह कम्पनी की आय तथा लाभ के निर्धारण

में सहायक होती है। कम्पनी के समग्र विपणन उद्देश्य के अनुसार ही मूल्य निर्धारण के उद्देश्य के सम्बन्ध में निर्णय करना चाहिए। मूल्य निर्धारण उद्देश्यों को हम सामान्यतः तीन श्रेणियों में विभक्त करते हैं -

लाभ प्रदता उद्दश्य, विक्रय परिमाण उद्देश्य तथा अन्य उद्देश्य जिसके अन्तर्गत मूल्य स्थायीकरण, बाजार में अपने अस्तित्व को बनाये रखना, प्रतियोगियों का बाजार में प्रवेश रोकने के लिए बाजार में पैठ तथा अच्छी गुणवत्ता के उत्पादों के पूर्तिकर्ता के रूप में अपनी छवि का निर्माण करता है।

उत्पादों एवं सेवाओं के मूल्य निर्धारण के दौरान व्यावसायिक उद्यमी निम्न तीन में से किसी एक दृष्टिकोण को चुनता है, यथा-लागत उन्मुख दृष्टिकोण, माँग उन्मुख दृष्टिकोण । इस प्रकार विक्रेता अपने उत्पाद के लिये आधारभूत मूल्य निश्चित कर लेता है और फिर लागत, माँग प्रतियोगिता की स्थिति, क्रेताओं के स्थान, खरीदी गई मात्रा तथा खरीद की बारंबारता में होने वाले परिवर्तनों के कारण आने वाली परिस्थितियों के अनुरूप निश्चित किए गये आधारभूत मूल्य में फेंरबदल करता हैं

वस्तुतः जब नए उत्पाद का मूल्य तय किया जाता है तब उसके सामने दो विकल्प होते है। प्रथम जिसमें प्रारम्भ में ऊँची कीमत तय करता है और लाभ की बड़ी राशि कमाता है जिसे बाजार में मंथन निर्धारण के नाम से सम्बन्धित किया जाता है तथा दूसरा कम उत्पाद मूल्य और ऊँची बिक्री के द्वारा लाभ की ऊँची रकम कमाता है। इस पद्धति को पैठ मूल्य निर्धारण की संज्ञा दी जाती है।

NMDC-

उत्पादों तथा सेवाओं का मूल्य निर्धारित करते समय निर्माताओं विक्रेताओं के लिए विभिन्न वैधानिक अनिवार्यता की जानकारी होना भी लाभदायक है जबकि किसी उत्पाद अथवा सेवा का न्यूनतम मूल्य निश्चित करना निषिद्ध है। अतः सरकार के द्वारा विभिन्न कानूनी नियमों का निर्माण किया गया है।

5.10 उपयोगी शब्द कोष

1. **समविच्छेद बिन्दुकोष** - अनुमानित विक्रय मूल्य पर उत्पादन का वह परिमाण जिसकी बिक्री से हुई आय कुल लागतों के बराबर है।

2. **नकद छूट** - सूची मूल्य में कटौती खरीद राशि के बिल का भुगतान एक निर्दिष्ट अवधि के अन्दर करने पर ग्राहक को सूची मूल्य में दी गयी कटौती दी जाती हैं।

3. **संचयी परिमाण छूट** - एक अवधि में ग्राहक द्वारा कुछ खरीद के परिमाण पर दी गई छूट।

4. **असंचयी परिमाण छूट** - एक प्रकार की परिमाण छूट जो क्रेता को दी जाती है और जिसका आधार एक अदद खरीद का परिमाण होता है।

5. **पैठ मूल्य निर्धारण** - बृहत बाजार में प्रवेश करने के उद्देश्य से कम से कम

आरंम्भिक मूल्य तय करना।

6. **संवर्द्धन रियायत** - व्यापारी को दिया जाने वाला भुगतान अथवा सूची मूल्य में कटौती, क्योंकि व्यापारी ने विक्रय संवर्द्धन की दिशा में कुछ कार्य किया है।

7. **परिमाण छूट** - जो क्रेता बड़ी मात्रा में माल खरीदता है उसको दी जाने वाली सूची कीमत मे छूट या कटौती ।

8. **बाजार मंथन मूल्य निर्धारण** - नए उत्पाद को विकसित करने पर किए गये व्यय की शीघ्र वापसी के उद्देश्य से आरम्भ में उत्पाद की ऊँची कीमत तय करना।

9. **व्यापार छूट** - सूची मूल्य से क्रेता को दी गई कटौती ताकि वह उत्पाद के विक्रय संवर्धन कार्यों में हाथ बटाए।

10. **मूल्य विभेद** - इसमें विक्रेता अपने उत्पादों का मूल्य लागत मूल्य से भी कम कर देता है, ताकि बाजार से स्पर्धा को समाप्त किया जा सके, जिससे वह एकाधिकार की स्थिति का लाभ उठा सके।

11. **पुर्नविक्रय मूल्य निर्धारण** - जहाँ खुदरा विक्रेताओं द्वारा लिया जाने वाला मूल्य, निर्माता निर्धारित करता है।

5.11 स्व-परख प्रश्नावली

प्र.1 किसी उत्पाद सेवा के मूल्यों पर कौन से घटक प्रभाव डालते हैं? संक्षेप में उनमें से प्रत्येक की व्याख्या करें?

NMDC

प्र.2 वास्तविक चलन में मूल्य निर्धारण की प्रमुख विधियों की व्याख्या करें?

प्र.3 लागतोपरि मूल्य निर्धारण विधि के प्रमुख गुणों तथा सीमाओं की व्याख्या करें?

प्र.4 निम्नलिखित पर संक्षिप्त टिप्पणी करें -

क) समविच्छेद बिन्दु

ख) लागतोपरि मूल्य निर्धारण

ग) चालू दर मूल्य निर्धारण

घ) लाभ को अधिकतम करने का उद्देश्य

च) अस्तित्व बनाये रखने का उद्देश्य

छ) अनुभूति उपयोगिता मूल्य निर्धारण

प्र.5 निर्माता द्वारा विक्रेताओं को दी जानेवाली छूटों व रियायतों की व्याख्या करें?

प्र.6 समझयें कि बाजार पैठ मूल्य निर्धारण के मुकाबले बाजार मंथन मूल्य निर्धारण को किन परिस्थितियों में पसंद किया जाता है?

प्र.7 आवश्यक वस्तु अधिनियम की आवधारणा क्या है समझायें?

।। सरस्वती नः सुभगा मयस्करत् ।।

उत्तर प्रदेश
राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय
प्रयागराज

M.Com -204

विपणन प्रबन्धन

खण्ड 2

विपणन

इकाई- 1

संवर्धन निर्णय एवं संवर्धन मिश्रण 81

इकाई- 2

विज्ञापन प्रबन्धन तथा प्रचार 105

इकाई- 3

व्यक्तिगत विक्रय एवं विक्रय संवर्धन 152

इकाई- 4

वितरण माध्यमों का प्रबन्ध 182

इकाई- 5

ई- व्यापार और विपणन प्रबन्धन 222

परामर्श-समिति

प्रो0 नागेश्वर राव	कुलपति - अध्यक्ष
डॉ0 हरीशचन्द्र जायसवाल	वरिष्ठ परामर्शदाता - कार्यक्रम संयोजक
श्री एम0 एल0 कनौजिया	कुलसचिव - सचिव

संरचनात्मक सम्पादन

डॉ0 मंजूलिका श्रीवास्तव	निदेशक, दूरस्थ शिक्षा परिषद्, नई दिल्ली

विषयगत सम्पादन

प्रो0 मूल मोतिहार	प्रोफेसर, मोनिरबा, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

लेखक

डॉ0 देवेश रंजन त्रिपाठी	असिस्टेन्ट प्रोफेसर, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

प्रस्तुत पाठ्य सामग्री में विषय से सम्बन्धित सभी तथ्य एवं विचार मौलिक रूप से लेखक के स्वयं के है।

© उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज - 2024
ISBN -

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज सर्वाधिकार सुरक्षित। इस पाठ्य सामग्री का कोई भी अंश उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय की लिखित अनुमति लिए बिना मिमियोग्राफ अथवा किसी अन्य साधन से पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नही है।

प्रकाशक- उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज की ओर से विनय कुमार, कुलसचिव द्वारा मुद्रित एवं प्रकाशित वर्ष - 2024.
मुद्रक - के0 सी0 प्रिटिंग एण्ड एलाइड वर्क्स , पंचवटी , मथुरा - 281003.

खण्ड- परिचय

विपणन व्यापारिक क्षितिज की सबसे महत्वपूर्ण क्रिया है। बिना इसकी संकल्पना के किसी भी व्यापारिक संस्था की संरचना को मूर्त रूप नहीं दिया जा सकता है। नित नये परिवर्तनों के फलस्वरूप प्रतिस्पर्धा और कठिन होती जा रही है। ऐसे में विपणन क्रियाओं का उचित प्रबन्धन एक महत्वपूर्ण पहलू बनता जा रहा है। विपणन को समग्रता से समझने हेतु इसके प्रत्येक पहलू को विश्लेषणात्मक दृष्टि से समझाना आवश्यक है। इस खण्ड में कुल पाँच इकाइयाँ हैं, जिनका परिचय निम्नलिखित है -

इकाई-1 संवर्धन निर्णय एवं मिश्रण से सम्बन्धित है इसके अन्तर्गत संवर्धन की अवधारणा, उद्देश्य महत्व, सम्प्रेषण प्रक्रिया, संवर्धन मिश्रण, इसके तत्व तथा इसको प्रभावित करने वाले कारकों पर विस्तार से चर्चा की गई है।

इकाई-2 विपणन प्रबन्धन तथा प्रचार से सम्बन्धित है, जिसमें विपणन की अवधारणा, प्रकार, माध्यम, इनका चयन तथा मूल्यांकन, अच्छे विपणन के गुण, कारक, विपणन कार्यक्रम पर नियंत्रण, कार्यक्षमता का मूल्यांकन, प्रचार तथा भारत में विज्ञापनों की दशा और दिशा पर प्रकाश डाला गया है।

MDC-130

इकाई-3 व्यक्तिगत विक्रय एवं विक्रय संवर्धन पर प्रकाश डालती है जिसमें व्यक्तिगत विक्रय को विस्तार से समझाने का प्रयास किया गया है। इसके महत्व, युक्तियाँ, प्रक्रिया, गुण, लाभ आदि का विवेचन किया गया है साथ ही साथ विक्रय संवर्धन का परिचय, उद्देश्य, महत्व तथा इसके और व्यक्तिगत विक्रय के मध्य क्या अन्तर है, इसे भी समझाया गया है।

इकाई-4 वितरण माध्यमों के प्रबन्ध से सम्बन्धित है जिसके अन्तर्गत इसके कार्य, उपयोग, माध्यमों को प्रभावित करने वाले कारक, मध्यस्थों की भूमिका तथा थोक व्यापारी एवं फुटकर व्यापारियों की नवीन भूमिकाओं को रेखांकित किया गया है।

इकाई-5 ई-व्यापार और विपणन प्रबन्धन से जुड़ी हुई है। जिसके अन्तर्गत ई-व्यापार के आधारभूत तत्व, विपणन व्यवस्था में इन्टरनेट के प्रयोग, ई-विपणन युक्ति के विकास, इससे सम्बन्धित नियम एवं ई-विपणन की वर्तमान एवं भविष्य की चुनौतियों को समझाने का प्रयास किया गया है।

इकाई 1 : संवर्धन निर्णय एवं संवर्धन मिश्रण

इकाई रूपरेखा

1.0 उद्देश्य

1.1 प्रस्तावना

1.2 संवर्धन का अर्थ, उद्देश्य तथा महत्व

1.3 सम्प्रेषण प्रक्रिया

1.4 संवर्धन मिश्रण के तत्व तथा उनका महत्व

1.5 संवर्धन मिश्रण को प्रभावित करने वाले कारक

1.6 सारांश

1.7 उपयोगी शब्दकोष

1.8 महत्वपूर्ण प्रश्नावली

1.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययनोपरान्त आप छात्रगण इस योग्य हो सकेंगे कि -

MDC-430

- किस प्रकार विपणन में संवर्धन की रणनीतियों का प्रयोग कर प्रतियोगिता का सामना किया जा सकता है।
- सम्प्रेषण प्रक्रिया किस प्रकार सम्पन्न होती हैं तथा इसके मूल तत्व कौन-कौन से होते हैं।
- संवर्धन मिश्रण का तात्पर्य तथा उसके घटकों की विस्तृत व्याख्या कर सकेंगे।
- ऐसे कारकों को समझ सकेंगे जो संवर्धन मिश्रण को प्रभावित करते हैं।

1.1 प्रस्तावना

वर्तमान गलाकाट प्रतियोगिता में सफलता हेतु केवल अच्छे उत्पाद का उत्पादन करना ही पर्याप्त नहीं होता है। जब तक कि एक ग्राहक उत्पाद के बाजार में होने, उसकी विशेषताओं, मूल्य आदि के बारे में सूचनाएँ नहीं रखता तब तक वह उसका क्रय नहीं करता है। इसलिए प्रत्येक संगठन को एक सुव्यवस्थित तथा सुसंगठित सम्प्रेषण विधि का निरूपण करना होता है। इस प्रकार हम कहते हैं कि संवर्धन एक साधन है जिसके द्वारा उत्पादों या सेवाओं के लिए क्रेताओं का ध्यानाकर्षण किया जाता है, उन्हें सूचना दी जाती है, उन्हें स्मरण कराया जाता है व उनसे उत्पाद या सेवा क्रय करने हेतु अपील की जाती है। इसमें विज्ञापन, विक्रय संवर्धन, वैयक्तिक विक्रय तथा जनसम्पर्क जैसे आधुनिकतम

उपकरणों की अपनी - अपनी भूमिका दृष्टिगत होती हैं। इस प्रकार दूसरे शब्दों में कह सकते हैं कि ग्राहकों, मध्यस्थों, तथा सामान्य जनता की जानकारी के लिए संवर्धन की किसी न किसी रूप में उपस्थिति अनिवार्य होती है। संवर्धन का वास्तविक आशय लक्षित ग्राहकों से संप्रेषण स्थापित करना है जिसके लिये संवर्धन मिश्रण का उपयोग किया जाता है। प्रस्तुत इकाई में आप संवर्धन का अर्थ, उद्देश्य तथा महत्व, संप्रेषण प्रक्रिया, संवर्धन मिश्रण का तात्पर्य तथा इसके विभिन्न उपकरण एवं इनको प्रभावित करने वाले कारकों का विस्तार से अध्ययन कर सकेंगे।

1.2 अर्थ, उद्देश्य तथा महत्व

विपणन में संप्रेषण का महत्वपूर्ण स्थान है। यह विपणन का वह कार्य है जिसके अर्न्तगत लक्ष्यित ग्राहकों को संगठन के उत्पाद एवं सेवा की प्रकृति तथा गुणवत्ता, उनके विशिष्ट लाभों, उपयोगों प्रयोगों तथा लक्षणों के साथ ही साथ मूल्य तथा उस स्थान की भी जानकारी दी जाती है जहाँ पर वास्तविक उत्पाद या सेवा उपलब्ध है। चूंकि विपणन सम्प्रेषण का प्रमुख उद्देश्य ग्राहक के व्यावहार को संगठन द्वारा विक्रय की जाने वाली उत्पाद के पक्ष में करना है, अतः ये प्रेरित प्रकृति के होते हैं। इसी विनम्रता द्वारा प्रेरित करने वाले सम्प्रेषण को सामान्य प्रबन्धकीय भाषा में संवर्धन शब्द से अलंकृत किया जाता है, जो कि विपणन मिश्रण का एक हिस्सा होता है। इस प्रकार विपणन के परिप्रेक्ष्य में संवर्धन का आशय थोक-विक्रेताओं, फुटकर विक्रेताओं, प्रयोगकर्ताओं या अन्तिम उपभोक्ताओं को उत्पाद, स्थान व मूल्य के विपणन मिश्रण को जिसको कि विपणन प्रबन्धक ने एकत्रित किया है की सूचना देने, प्रेरित करने या याद दिलाने का साधन से है।

दूसरे शब्दों में विपणन संप्रेषण के अध्ययन का अर्थ विपणन के संवर्धन कार्य का अध्ययन करना है। इस निरन्तर मतभेद के बावजूद कि संवर्धन, विपणन मिश्रण का प्रथम तत्व है या अन्तिम तत्व, एक बात तो पक्की है कि विपणन कार्य के अच्छे प्रबन्ध के लिये संवर्धन का प्रभावपूर्ण प्रबन्ध होना आवश्यक है। जैसे अग्रलिखित उत्पादों तथा सेवाओं की सफलता में संवर्धन कार्य का अद्वितीय योगदान रहा है:- मोबाइल फोन सेवायें, शीतल पेय, निजी बैंकों की सेवायें तथा बीमा व्यवसाय आदि। इसके दूसरे पक्ष पर ध्यान केन्द्रण से यह भी पता चलता है कि ऐसे उत्पादों की कमी नहीं जहाँ संवर्धन कार्य के दोषपूर्ण प्रबन्ध के कारण कई अच्छे और सफल उत्पादन बाजार से बाहर हो गये।

उपर्युक्त विवेचन से संवर्धन की अग्रलिखित विशेषताएँ परिलक्षित होती हैं :-

(1) प्रेरित करना इसका मुख्य आधार बनाया जाता है। इससे उपभोक्ता को उत्पाद को क्रय करने की अपील की जाती है।

(2) उसमें उपभोक्ता को उत्पाद की सूचना दी जाती है। प्राप्ति स्थान व मूल्य को भी सूचित किया जाता है।

(3) यह उपभोक्ता को सूचना देने या स्मरण दिलाने का एक साधन है।

(4) इसमें विज्ञापन, वैयक्तिक विक्रय, विक्रय प्रवर्तन और सभी विक्रय उपकर सम्मिलित किये जाते हैं।

विपणन में उत्पाद के संवर्धन या प्रवर्तन का अत्यधिक महत्त्व सिद्ध हो चुका है। उत्पाद के निर्माण के पश्चात् उसको उपभोक्ता तक पहुँचाना तथा उपभोक्ता द्वारा उसकी माँग करना अत्यन्त आवश्यक है। बिना उपभोक्ता द्वारा माँगे उस उत्पाद का उत्पादन बनाये रखना असम्भव सा होता है। अतः इसके लिए आवश्यक है कि उपभोक्ता को उत्पाद के सम्बन्ध में समुचित सूचनायें उपलब्ध कराई जाये। यही नहीं, यदि ऐसा प्रतीत हो के वे भूल जायेंगे तो उनको पुनः स्मरण कराने का प्रयत्न किया जाये। लेकिन सूचना देने व याद दिलाने से काम नहीं चलता उसको तो खरीदने के लिए भी आकर्षित होना चाहिए। अतः एक उपभोक्ता को कम्पनी के विपणन मिश्रण की सूचना देना, प्रेरित करना तथा स्मरण दिला संवर्द्धन के प्रमुख उद्देश्य निरूपित किये जाते हैं। इस प्रकार संवर्धन के अग्रलिखित तीन उद्देश्य होते हैं।

(1) सूचना संप्रेषण :-

MDC-130

जैसा कि हम जानते हैं कि विपणन का प्रमुख कार्य उपभोक्ताओं की आवश्यकताओं को पता कर, उनको सन्तुष्ट करने के लिए उचित उत्पाद का उचित मूल्य तथा उचित स्थान पर उपलब्ध कराता है। विपणन कार्य में संवर्धन का उद्देश्य उपभोक्ताओं को उत्पादन के बारे में सूचना देना है तथा उन्हें यह भी सूचित करना है कि उत्पाद किस प्रकार उनकी आवश्यकताओं को संतुष्ट करेगा। उदाहरण के लिए यदि एक ए0सी0 उत्पादक ऑफ सीजन छूट देना चाहता है तो उसे अपने संभावित ग्राहक को छूट की सीमा, अवधि जिसके अन्तर्गत छूट दी जायेगी तथा उन विक्रेताओं का नाम सूचित करना पड़ेगा जहाँ उपरोक्त छूट पर ए0सी0 उपलब्ध है। यदि ऐसी सूचना संभावित ग्राहकों को नहीं दी जाती है तो छूट का लाभ न तो उपभोक्ताओं को मिलेगा और न ही उत्पादक को मिलेगा। इस प्रकार संवर्धन, जिसके अन्तर्गत मुख्य रूप से संप्रेषण कार्य शामिल है, विपणन कार्य का एक आवश्यक अंग है।

(2) संवर्धन द्वारा अपील :-

किसी मुक्त बाजार व्यवस्था में जहाँ उद्योग बड़ी संख्या में नई तथा बेहतर उत्पादों का किसी बाजार में बिक्री के लिए उपलब्ध कराते हैं, बाजार विभिन्न प्रकार की सूचनाओं तथा भ्रामपूर्ण प्रचारों से भरा होता है। उपभोक्ताओं को बाजार में प्रतियोगी उत्पादों में से प्रायः चुनाव करना पड़ता है। चूंकि उपभोक्ताओं के पास प्रतियोगी उत्पादों की तुलना का

पर्याप्त समय नहीं होता, अतः वे उत्पाद की सूचना के लिए विज्ञापनों का सहारा लेते हैं। वर्तमान व्यापारिक वातावरण अत्यधिक प्रतियोगितामय होने के कारण प्रत्येक फर्म चाहती है कि उपभोक्ता उस फर्म का उत्पाद ही खरीदे। इस प्रकार अपील द्वारा क्रय का प्रोत्साहन संवर्धन का दूसरा लक्ष्य है।

(3) संवर्धन द्वारा पुनः स्मरण :-

आप देखते हैं कि एक उपभोक्ता नियमित रूप से लाल दन्त मंजन या घड़ी साबुन खरीदता है। क्या लाल मंजन या घड़ी साबुन के विक्रेता के विज्ञापनों के कारण ऐसा होता है? इसका जवाब हाँ है क्योंकि एक अत्यंत विश्वसनीय उपभोक्ता को बार-बार याद दिलाने की जरूरत है कि उत्पाद पिछले वर्षों में उसकी आवश्यकताओं की पूर्ति करता रहा है। साथ ही उन लक्षणों को भी याद दिलाना चाहिए जो उत्पाद को प्रभावपूर्ण बनाना है। यह ऐसे बाजार वातावरण में और अधिक महत्वपूर्ण है क्योंकि प्रतियोगी कम्पनियाँ प्रतियोगी उत्पादों को बेचने के लिए उत्पादों को अपनी सूचनाओं तथा अपीलपूर्ण संदेशों से आकर्षित करती रहती हैं। इस प्रकार अंतिम महत्वपूर्ण उद्देश्य है उपभोक्ताओं को पुनः याद दिलाना। यही कारण है कि उत्पाद में उपभोक्ताओं की पसन्द बनाये रखने के लिए बहुत बड़े उत्पादक भी बहुत अधिक विज्ञापन करते हैं।

स्व-परख प्रश्न -

NMDC-130

प्र01- विपणन के संदर्भ में संवर्धन के आशय को स्पष्ट करें?

....

....

....

प्र02- संवर्धन की तीन मुख्य उद्देश्यों को स्पष्ट करें?

....

....

....

प्र03 बताइये कि निम्न विवरण सही है या गलत।

i) यदि कोई अच्छा उत्पाद बाजार में लाया जाता है तो उसकी बिक्री बिना संवर्धन के ही हो जाता है।

ii) संवर्धन, विपणन मिश्रण का एक महत्वपूर्ण तत्व है।

iii) ऐसे निष्ठावान ग्राहकों के लिए जो उत्पाद का निरंतर प्रयोग कर रहे हों, संवर्धन का कोई महत्व नहीं है।

1.3 संप्रेषण प्रक्रिया

संप्रेषण का तात्पर्य ऐसी प्रक्रिया से है जिसमें विचारों, सूचनाओं तथा अनुभवों का आदान-प्रदान द्वारा दूसरों के व्यवहार को प्रभावित करने का प्रयास किया जाता है। सामान्य अर्थों में संप्रेषण का मुख्य उद्देश्य सूचनाओं को एक स्थान से दूसरे स्थान पर भेजने से है। अतः दूसरे शब्दों में किसी सूचना को प्राप्त करने वाला व्यक्ति उसे जहाँ तक संभव हो उन्हीं अर्थों में समझे, जिस अर्थ में प्रेषक भेज रहा हो। यह संदेश-प्रेषक की जिम्मेदारी है कि वह सुनिश्चित करे कि उसकी सूचना का उद्देश्य पूर्ण हो रहा है। अतः हम यह कह सकते हैं कि, संप्रेषण का अर्थ है कि कौन, किसको, किस माध्यम से क्या कहता है तथा उसका क्या प्रभाव पड़ता है। हम देखते हैं कि संप्रेषण में मुख्य दो पक्ष होते हैं प्रेषक (कौन) तथा प्राप्तकर्ता किसको संदेश को प्राप्तकर्ता के पास भेजने के लिए जिन उपकरणों का प्रयोग किया जाता है उन्हें माध्यमों की संज्ञा दी जाती है। इस प्रकार संप्रेषण निम्न दशाओं में होता है :

(क) जब प्रेषक एक संदेश भेजता है।

(ख) जब प्राप्तकर्ता संदेश प्राप्त करता है तथा

(ग) जब प्रेषक तथा प्राप्तकर्ता संदेश को एक ही अर्थ में समझने का प्रयास करते हैं।

NMDC-139

संप्रेषण प्रक्रिया में कोडिंग करना, कोड को हटाना, अनुक्रिया तथा प्रतिपुष्टि कार्य शामिल है। आइये अब उपरोक्त तत्वों को संप्रेषण प्रक्रिया के संदर्भ में समझने का प्रयास करते हैं :-

प्रेषक : - प्रेषक को स्रोत भी कहते हैं। प्रेषक का आशय संप्रेषण के उस पक्ष से है जो दूसरे पक्ष अर्थात् प्राप्तकर्ता को सूचना भेजता है। इसके लिए प्रेषक अपने मानसिक प्रक्रिया द्वारा अपने विचारों को उस रूप में लाता है जिसको संप्रेषित किया जा सके।

प्राप्तकर्ता :- वह व्यक्ति जिसके लिए सूचना प्रस्तावित होती है, संप्रेषण प्रक्रिया में सक्रिय भाग लेता है। प्राप्तकर्ता संदेश को किस अर्थों में समझता है वह उसके लिए, विचारों, मूल्यों, पूर्व अनुभव, आवश्यकताओं तथा संदेश मिलने के समय पर निर्भर करता है।

कोडिंग करना :- यह एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके अर्न्तगत संप्रेषण किये जाने वाले विचारों को संकेतिक संदेशों में बदल दिया जाता है जिसके अन्तर्गत शब्द, चिन्ह संख्या तथा हाव-भाव शामिल होते हैं, यह इसलिए होता है क्योंकि किसी विचार को एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति के पास मूल रूप से भेजने का कोई अन्य विकल्प नहीं है।

संदेश :- यह संकेतों का संयोजन है जो प्रेषक द्वारा भेजे जाने वाले संदेश का उद्देश्य होता है, ताकि वह संदेश प्राप्तकर्ता के व्यवहार में परिवर्तन ला सके। चूंकि अधिकतर संकेत (शब्द, चित्र, संख्या इत्यादि) का एक से अधिक अर्थ होता है अतः संकेतों का चयन करते समय यह ध्यान रखना चाहिए कि वह सरल हो तथा जिसकी संदेश को प्राप्तकर्ता को जानकारी हो।

माध्यम :- यह ऐसा साधन है जिसके द्वारा प्रेषक अपने संदेश को प्राप्तकर्ता के पास भेजता है। प्रायः माध्यम दो प्रकार के होते हैं :-

i) व्यक्तिगत,

ii) जनसंचार माध्यम।

व्यक्तिगत माध्यम के अंतर्गत संदेश के प्रेषक तथा प्राप्तकर्ता में प्रत्यक्ष सम्पर्क होता है। उदाहरण के लिए व्यक्तिगत बिक्री में बिक्री करने वाले व्यक्ति तथा ग्राहक में प्रत्यक्ष सम्पर्क होता है और वह उत्पाद के बारे में प्रत्यक्ष संप्रेषण करता है। ऐसे में संप्रेषण दोनों दिशाओं में होता है और बिक्री करने वाले व्यक्ति को संदेश की प्रत्यक्ष तथा तुरंत प्रतिपुष्टि प्राप्त होती है जिससे वह संप्रेषण प्रक्रिया पर अत्यधिक नियंत्रण रख सकता है। जनसंचार माध्यम संप्रेषण का अव्यक्तिगत माध्यम है। जिसके द्वारा प्रेषक का प्राप्तकर्ताओं की एक बड़ी संख्या से संपर्क होता है। जनसंचार माध्यमों के अन्तर्गत समाचारपत्र, पत्रिकाएँ, टेलीविजन, रेडियो, बिलबोर्ड इत्यादि आते हैं।

कोड को हटाना :- जैसे संदेश का प्रेषक संदेश की कोडिंग करता है ठीक उसी प्रकार प्राप्तकर्ता उस कोड को हटाता है जिसे डिकोडिंग करते हैं। डिकोडिंग वह प्रक्रिया है जिसके अन्तर्गत प्राप्तकर्ता, प्रेषक द्वारा भेजे गये संकेतों को संदेश में परिवतर्तित करने का प्रयास करता है। प्राप्तकर्ता अपने व्यक्तिगत लक्षणों, अनुभवों इत्यादि के कारण कोड में दिये गये संदेश को विभिन्न विधियों से डिकोड की व्याख्या कर सकता है।

अनुक्रिया :- प्रेषक द्वारा भेजे गये संदेश मिलने के बाद, प्राप्तकर्ता में विभिन्न प्रकार की प्रतिक्रिया होती है जैसे यह प्रश्न पूछना कि उत्पाद को खरीदा जाये या न खरीदा जाये या वह संदेश के अतिरिक्त कुछ अधिक सूचनाएं चाहता है। अतः अनुक्रिया का आशय संदेश मिलने के बाद प्राप्तकर्ता में होने वाली प्रतिक्रिताओं से है।

प्रतिपुष्टि :- यह प्राप्तकर्ता की ओर से प्रेषक को संप्रेषण है जिसके अन्तर्गत यह पता चलता है कि प्राप्तकर्ता ने प्रेषक के संदेश को किस प्रकार समझा या उसकी प्रतिक्रिया क्या है। इस उल्टे संप्रेषण में प्राप्तकर्ता अपने संदेश की कोडिंग करता है तथा उसे प्रेषक के पास भेजता है, जिसकी प्रेषक द्वारा डिकोडिंग की जाती है। प्रतिपुष्टि के प्राप्त होने में जितना ही विलम्ब होता है उतना ही उसका मूल्य कम होता जाता है। व्यक्तिगत संप्रेषण में प्रतिपुष्टि प्रत्यक्षः निरन्तर तथा तुरंत होती है जैसे व्यक्तिगत विक्रय में

विक्रय करने वाले व्यक्ति को ग्राहक से प्रत्यक्ष तथा तुरंत प्रतिपुष्टि प्राप्त होती है और वह ग्राहक की आवश्यकतानुसार अपने व्यवहार तथा उत्पादन के प्रदर्शन इत्यादि में संशोधन कर सकता है। जनसंचार माध्यमों से किए गए संप्रेषण की प्रतिपुष्टि सामान्यतः अप्रत्यक्ष, मद तथा मिलने में कठिन होती है। वास्तव में ऐसे संप्रेषण की प्रतिपुष्टि तभी प्राप्त होती है यदि प्रेषक ने इस संबंध में कुछ व्यवस्था की हो। इसके लिए प्रेषक विज्ञापन शोध करा सकता है कि क्या प्राप्तकर्ताओं को संदेश याद है या नहीं? इत्यादि।

शोर/बाधा :- कोई भी उत्पाद जो संप्रेषण प्रक्रिया में अवरोध उत्पन्न करता है बाधा या शोर कहलाती है जिससे प्राप्तकर्ता या तो प्रेषक द्वारा भेजे गये संदेश से भिन्न कोई संदेश पाता है या उसे कोई भी संदेश प्राप्त नहीं होता। बाधा या शोर संप्रेषण प्रक्रिया के किसी या सभी तत्वों को प्रभावित कर सकता है जैसे, यदि एक ही उत्पाद (विभिन्न ब्रांड नाम) के कई विज्ञापन एक ही समाचार पत्र या पत्रिका में दिये गये हो तो इससे उलझन पैदा होती है। संप्रेषण प्रक्रिया को समझने के लिए निम्न चित्र को ध्यानपूर्वक देखिए।

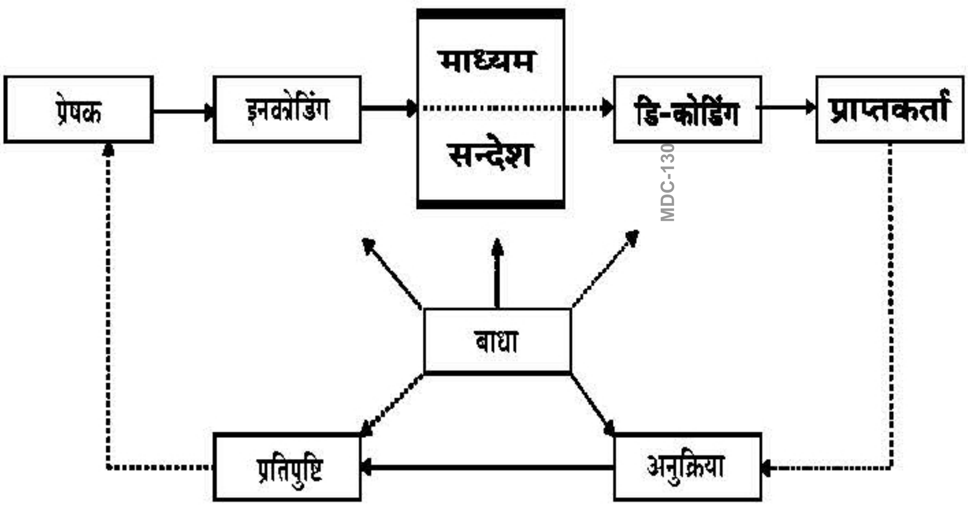

MDC-130

संप्रेषण के प्रभावपूर्ण होने के लिए निम्न घटकों का अत्यधिक महत्व सिद्ध हो चुका है।

1) लक्षित उपभोक्ताओं (श्रोताओं) का पता लगाना।

2) उमसे उपभोक्ताओं (श्रेताओं) का पता लगाना।

3) प्रभावपूर्ण संदेश का चयन।

4) प्रतिपुष्टि का एकत्रीकरण।

लक्षित उपभोक्ताओं का आशय उन लोगों से है जिनकों संवर्धन संदेश दिया जाता है। लक्षित उपभोक्ताओं में वर्तमान तथा संभावित ग्राहक शामिल होते हैं। इसलिए संदेश के प्रेषक को ऐसे उपभोक्ताओं तथा उनकी विशेषताओं जैसे-आयु, लिंग, आय,

शिक्षा, पेशा, जीवनशैली इत्यादि प्रवृत्तियों, मूल्यों, अनुभवों, क्रय आदतों का पता लगाना चाहिए। लक्षित उपभोक्ताओं का पता लगाने के पश्चात् प्रेषक को उनके अनुसार संदेश बनाने में सुविधा होती है। प्रेषक के अनुभव क्षेत्र तथा प्राप्तकर्ता के अनुभव से क्षेत्र में जितनी समानता होगी, उतना ही संप्रेषण प्रभावपूर्ण होगा। एक विज्ञापन एजेन्सी का निम्न आर्य वर्ग के लोगों के लिए कपड़े धोने का साबुन का विज्ञापन बनाने के लिए कहा जाता है। यदि वह बहुत जटिल संदेश बनाती है तो संप्रेषण से बाधा उत्पन्न करेगा क्योंकि प्रेषक का अनुभव क्षेत्र तथा प्राप्तकर्ता का अनुभव क्षेत्र अलग-अलग है परन्तु प्रेषक अपने लक्षित उपभोक्ताओं को जानता है तो इस समस्या को कम किया जा सकता है।

(ख) इच्छित अनुक्रिया का निश्चय करना :-

लक्षित ह्लउपभोक्ताओं का पता लगाने के पश्चात् प्रेषक प्राप्तकर्ता से प्राप्त होने वाली अनुक्रिया के बारे में निश्चय करता है। जैसे प्रेषक की इच्छा हो सकती है कि प्राप्तकर्ता उत्पाद सेवा के बारे में अतिरिक्त जानकारी प्राप्त करे या प्राप्तकर्ता बाजार में उत्पाद को देखे तथा खरीदे। यद्यपि दोनों ही स्थितियों में अन्तिम लक्ष्य माल का क्रय है। जैसा कि आप जानते हैं कि एक उपभोक्ता को क्रय करने हेतु निर्णय लेने में बहुत लम्बा समय लगता है। इसलिए संदेश के प्रेषक को यह जानना आवश्यक है कि वह अपने लक्षित उपभोक्ताओं के पास कैसे पहुँचेगा तथा उसका वर्तमान स्थिति से उत्पाद या सेवा को क्रय करने की स्थिति में किस प्रकार बदलेगा। संदेश द्वारा प्रेषक, प्राप्तकर्ता के विशिष्ट व्यवहार के लिए उसके मस्तिष्क में कुछ नई बातें डालना चाहता है या उसकी विचारधारा को बदलना चाहता है। ग्राहक अनुक्रिया के विभिन्न माडल हैं जिसमें से एक माडल प्रभाव शृंखला कहलाता है।

(ग) संदेश का चुनाव -

प्राप्तकर्ता से मिलने वाली अनुक्रिया के किस्म के निश्चय के पश्चात् अगला चरण प्रभावपूर्ण संदेश बनाना है। संदेश ऐसा होना चाहिए जो प्राप्तकर्ता के ध्यान को आकर्षित करे, संदेश में प्राप्तकर्ता का हित पैदा करें, उत्पाद या सेवा के लिए उसमें इच्छा पैदा करें या सेवा क्रय करने के लिए बाध्य कर दें। इस प्रकार की संदेश की रूपरेखा बनाते समय निम्न बाते ध्यान देने योग्य हैं :

(1) संदेश की विषय सामग्री -

विषय सामग्री का आशय संवर्धन संदेश की मूल विचार से है, जैसे, सोनी कलर टी0वी0 के विज्ञापन संदेश में मूल विचार या अपील उत्कृष्ट गुण वाली तस्वीर के अनुभव से है या ऐसी तस्वीर जो देखने में जीवंत लगती है। इसी प्रकार घड़ी साबुन के

विज्ञापन द्वारा यह बताया जाता है कि जब आप घड़ी साबुन खरीदें तो पूर्ण भरोसा रखिए।

इस संदेश का मूल विचार उपभोक्ता को घड़ी साबुन की उत्कृष्ट गुणवत्ता के बारे में बताना है। यदि किसी मूल विचार या अपील को लम्बी अवधि तक बार-बार संवर्धन संदेशों में प्रयोग किया जाता है तो उसे संदेश की कथानक कहते हैं। जैसे घड़ी साबुन का उपरोक्त नारा उत्पाद या कथानक का अच्छा उदाहरण है। अधिकांश संवर्धन संदेशों की अपील या कथावस्तु उत्पाद के लक्षणों तथा उससे संबंधित दावों के रूप में होती है जिससे एक दूसरी संकल्पना का जन्म होता है जिसे USP (Unique selling Proposition) कहते हैं। इसके अर्न्तगत उत्पाद के लक्षणों तथा प्रवृत्तियों को ग्राहक होने वाले उत्कृष्ट तरीके से मिलाया जाता है जैसे व्हील साबुन में नीबू मिला है। इस संवर्धन संदेश में यह दावा किया जाता है कि ब्हील साबून में दूसरे लाभों के साथ नीबू भी हैं जो प्रयोगकर्ता के कपड़ों का और अच्छे ढंग से सफेदी मुक्त करता है। आज की बढ़ती बाजार प्रतियोगिता में यू.एस.पी. (USP) द्वारा प्रतियोगी क्रमानुसार अपने उत्पादों को अलग पहचान देने का प्रयत्न करती हैं। विपणन कर्ताओं द्वारा मूलता दो प्रकार की अपीलों का प्रयोग किया जाता है :-

NMDC-130

i) विवेकपूर्ण अपील :

ऐसी अपील में यह बताया जाता है कि उत्पाद द्वारा बताये गये लाभ प्राप्त होगे। ऐसी अपील उत्पाद के गुण, मूल्य, किफायत तथा कार्यक्षमता के बारे में की जाती है। ऐसी अपील का प्रयोग लंबे समय तक प्रयोग होने वाली उत्पादों जैसे रेफ्रिजरेटर एयरकंडीशनर, वाशिंग मशीन तथा अन्य स्वचालित मशीनों के उत्पादों द्वारा किया जाता है।

ii) भावपूर्ण अपील :-

ऐसी अपील में या तो नकारात्मक भावों (जैसे डर, दोष शर्म) या सकारात्मक भावों (जैसे प्रेम,खुशी, गर्व) का प्रयोग करके ग्राहक को क्रय करने के लिए उत्साहित किया जाता है जैसे बीमा कराने के लिए प्रोत्साहन के उद्देश्य से बीमा कम्पनियों द्वारा अपील की जाती है। इसी प्रकार की भावपूर्ण अपील वस्त्रों तथा शृंगार साधनों के उत्पादकों द्वारा भी की जाती है। डेयरी मिल्क चाकलेट के निर्माता अपने विज्ञापन में प्यार की अपील करते हैं जबकि उत्तर प्रदेश पर्यटन विभाग के विज्ञापन में खुशी तथा आनन्द की अपील की जाती है।

(2) संदेश का प्रारूप :-

प्रेषक को यह निश्चित करना पड़ता है कि संदेश को लक्षित के पास कैसे भेजा जायेगा इसके लिए उसे संदेश का एक अच्छा प्रारूप बनाना पड़ता है। जैसे यदि किसी संदेश को किसी समाचार पत्र या पत्रिका में प्रकाशित होना है तो प्रेषक को शीर्षक के किस्म तथा लम्बाई, फोटोग्राफ विज्ञापन की विषयवस्तु, रंग इत्यादि के बारे में पहले निर्णय लेना पड़ेगा। विपणनकर्ता उपभोक्ताओं का ध्यान करने के लिए विभिन्न प्रकार के दृश्य, लाभ प्रदर्शन, संगीत तथा भावों का प्रयोग करते हैं। यदि संदेश को रेडियों द्वारा प्रसारित करना है तो शब्दों का चुनाव सावधानीपूर्वक करना चाहिए तथा प्रसारणकर्ता की आवाज़ नियंत्रित होनी चाहिए। टेलीविजन पर प्रसारण के लिए उपरोक्त रेडियो की बातों को अतिरिक्त प्रसारणकर्ता की मुखाकृति, हाव-भाव, पोशाक इत्यादि का ध्यान रखना चाहिए। यदि उत्पाद द्वारा ही संदेश को पहुँचाया जा रहा हो तो प्रेषक को उत्पाद के रंग, आकार, रूप तथा सुगन्ध के बारे में ध्यान देना चाहिए, जैसे नहाने का साबुन तथा परफ्यूम इत्यादि।

(3) संदेश स्त्रोत :-

संप्रेषण का प्रभावपूर्ण होना मुख्य रूप से इस बात पर निर्भर करता है कि प्राप्तकर्ता प्रेषक के बारे में कैसी धारणा रखता है। अतः स्त्रोत के विश्वासपूर्ण होने का आशय प्राप्तकर्ता द्वारा प्रेषक के बारे में विश्वास की धारणा से है। स्त्रोत की विश्वासपूर्णता के आधार पर ही लक्षित प्राप्तकर्ता संदेश का मूल्यांकन करता है या उस पर प्रतिक्रिया व्यक्त करता है। स्त्रोत के विश्वास को पूर्णता को प्रभावित करने वाले तीन कारक हैं। दक्षताः, विश्वासपात्रता, और मधुरता।

MMDC-130

(ग) प्रतिपुष्टि एकत्रित करना :

इसका आशय संदेश मिलने के पश्चात् प्राप्तकर्ता को प्रेषक के पास संप्रेषण से है।

स्वपरख-प्रश्न :

1) संप्रेषण प्रक्रिया के विभिन्न सोपान कौन-कौन हैं?

....

....

2) संप्रेषण प्रक्रिया में शोर या बाधा से क्या तात्पर्य है?

....

....

3) बताइये कि निम्न कथन सही है या गलत।

i) संप्रेषण का मूल उद्देश्य प्रेषक तथा प्राप्तकर्ता के द्वारा एकही अर्थ में किसी बात को समझना है।

ii) अनुक्रिया तथा प्रतिपूष्टि संप्रेषण के दो मुख्य साधन हैं।

iii) संप्रेषण कोडिंग करना तथा कोड को हटाना, ये संप्रेषण में दो प्रकार के माध्यम प्रयोग होते हैं।

1.4 संवर्धन मिश्रण के तत्व तथा महत्व-

प्रायः एक उपभोक्ता को संवर्धन के कई साधनों से दो चार होने का मौका मिलता है, जिसका मुख्य उद्देश्य हमें किसी एक या दूसरे उत्पाद की सूचना देना होता है। विपणन मिश्रण से तात्पर्य विपणन संबंधी सूचनाएँ प्रेषित करने वाले उपकरणों के सम्मिश्रण से लगाया जाता है जबकि संवर्धन का तात्पर्य भावी क्रेताओं का ध्यानाकर्षण, स्मरण दिलाने तथा अपील करने से होता है। इस प्रकार आप देखते हैं कि दोनों शब्द, एक दूसरे के समानार्थी है। सामान्यतः एक आम उपभोक्ता घर में समाचार पत्र पढ़ते हुए, रेडियों तथा टी0वी0 देखते हुए विज्ञापनों का सामना करता है। इसी प्रकार परिवार के साथ घूमने जाते हुए, सड़क के किनारे, पोस्टर तथा होर्डिंग्स आदि देखने को मिलता है, जो किसी कम्पनी के किसी विशिष्ट उत्पाद के सम्बन्ध में होता है।

NMC-130

संवर्धन मिश्रण के तत्व चार प्रकार के होते हैं :- विज्ञापन, व्यक्तिगत विक्रय, विक्रय संवर्धन तथा प्रचार। एक व्यापारिक प्रतिष्ठान संवर्धन मिश्रण के सभी तत्वों को महत्व के अनुसार चयनित करता है और यह चुनाव विभिन्न संगठनों में अलग-अलग हो सकता है। आइये अब इन्हें क्रमशः समझने का प्रयास करें :-

1. विज्ञापन :- विज्ञापन का अर्थ ''एक परिचित प्रायोजक द्वारा विचारों, उत्पादों या सेवाओं का अवैयक्तिक प्रस्तुतीकरण व प्रवर्तन करने के ढंग से लगाया जाता है। जिसका भुगतान भी किया जाता है। इस प्रकार यह प्रस्तुतीकरण की एक विशेष विधि होती है। कम्पनी का नाम या ब्रान्ड ही विज्ञापन पर हस्ताक्षर का कार्य करता है। प्रायः यह कार्य समाचार पत्रों, रेडियो, टेलीफोन, पत्रिकायें, साइनबोर्ड तथा प्रत्यक्ष डाक द्वारा सम्पादित किया जाता है जिन्हें विज्ञापन मिश्रण की संज्ञा दी जाती है। विज्ञापन प्रायोजक एक अलाभकारी संस्था जैसे, स्कूल, विद्यालय, विश्वविद्यालय या अन्य संस्था, कम्पनी या व्यक्ति हो सकता है। विज्ञापन की विस्तृत एवं गहन व्याख्या हम अगली इकाई में करेंगे।

2. व्यक्तिगत विक्रय : - इस तत्व के अन्तर्गत क्रेता तथा विक्रेता में आमने सामने

बातचीत होती है, जिसमें विक्रेता प्रथम प्रयत्न करता है, या जब एक से अधिक सम्भावित ग्राहक के साथ बिक्री करने के उद्देश्य से वार्तालाप में मौखिक रूप से प्रस्तुतीकरण किया जाता है तो इस प्रस्तुतीकरण को वैयक्तिक विक्रय कहा जाता है।

एक बिक्री करने वाले व्यक्ति को उपयुक्त प्रशिक्षण देना चाहिए ताकि वह संभावित उपभोक्ताओं को उचित संदेश दे सके। व्यक्तिगत विक्रय करने वाले व्यक्ति को प्रायः बाहर की यात्रा करनी पड़ती है तथा अपने निवास स्थान से दूर रहना पड़ता है अतः व्यक्तिगत विक्रय अत्यधिक खर्चीला होता है परन्तु व्यक्तिगत विक्रय की ऊँची लागत उसके लचीलेपन से पूरा किया जा सकता है। व्यक्तिगत विक्रय करने वाला व्यक्ति संभावित ग्राहक की आवश्यकताओं के अनुरूप अपने बिक्री करने की जाने वाले उत्पाद में परिवर्तन कर सकता है तथा उनकी शिकायतों को भी दूर कर सकता है। व्यक्तिगत विक्रय में ग्राहक से शीघ्र तथा प्रत्यक्ष प्रतिपुष्टि होती है। व्यक्तिगत विक्रय का विस्तृत अध्ययन हम आगे की इकाई में करेंगे।

3. प्रचार :- रेडियो, टेलीविजन, स्टेज पर प्रचार होने के कारण या प्रकाशित माध्यमों के समाचार में स्थान पाने के कारण किसी उत्पाद, सेवा या व्यापारिक इकाई की प्रसिद्धि हो जाती है जिसे प्रचार कहते हैं। विज्ञापन की भांति प्रचारक के लिए प्रायोजक का भुगतान नहीं करना पड़ता बल्कि प्रचार के अंतर्गत किसी संस्था, उसके उत्पाद, नीतियों, कर्मचारियों तथा अन्य कार्यवाहियों को जनसंचार माध्यमों में समाचार के रूप में प्रचारित किया जाता है जिसके लिए उस संस्था को किसी भी प्रकार का भुगतान नहीं करना पड़ता। प्रचार तथा विज्ञापन में काफी समानता है सिवाय इसके कि प्रचार के अंतर्गत संदेश प्रायोजित नहीं होता और न ही इसके लिए भुगतान करना पड़ता है। यदि किसी कम्पनी या किसी उत्पाद को समाचार योग्य समझा जाता है तो जनसंचार माध्यम उसकी सूचना मुफ्त रूप से देते हैं और इस प्रकार जिस संस्था का प्रचार होता है वह न तो प्रचार माध्यम के भुगतान करती है और न ही सन्देश पर हस्ताक्षर करती है।

प्रचार या तो सकारात्मक तथा पक्ष में हो सकता है या नकारात्मक तथा विपक्ष में, क्योंकि प्रचार का कार्य संगठन या संस्था के हाथ में नहीं होता बल्कि जनसंचार माध्यमों के हाथ में होता है। उदाहरण के लिए कुछ वर्ष पूर्व समाचार पत्रों द्वारा एक बड़े पाँच तारा होटल के अग्निशामक व्यावस्था में गड़बड़ी की रिपोर्ट का उस होटल की साख पर विपरीत असर पड़ा और उसे भारी हानि का सामना करना पड़ा। दूसरी ओर जब एयर इंडिया कार रैली का आयोजन करती है तो समाचार माध्यमों द्वारा उसकी प्रशंसा की जाती है। विपणनकर्ता समाचार में स्थान पाने के लिए बहुत अधिक प्रयत्न करते हैं जो कि जनसंपर्क का एक अच्छा माध्यम है।

4. विक्रय संवर्धन : - यह लक्षित उपभोक्ताओं के संप्रेषण का ऐसा साधन

है जो संवर्धन मिश्रण के अन्य तत्वों द्वारा संभव नहीं होता है। बिक्री संवर्धन का आशय उन संवर्धन क्रियाओं से है जो व्यक्तिगत बिक्री, विज्ञापन तथा प्रचार के अतिरिक्त हो तथा जिसका उद्देश्य एक निश्चित समय में बिक्री को बढ़ाना हो। अतः बिक्री संवर्धन का आशय इन क्रियाओं से है जिसमें इच्छित अनुक्रिया के लिए लक्षित श्रोताओं या माध्यमों को सीमित समय के लिए कुछ प्रलोभन दिया जाता है जैसे, उपहार, कूपन, छूट, प्रदर्शन, व्यापारिक शो तथा प्रतियोगिता इत्यादि। बिक्री संवर्धन का उद्देश्य, विज्ञापन तथा व्यक्तिगत बिक्री के पूरक के रूप में होता है जिसका प्रभाव क्रय करते समय पड़ता है।

संवर्धन मिश्रण के घटकों की विशेषताएँ :- संवर्धन के प्रयास सामान्यतः दो प्रकार के होते हैं।

1) प्रत्यक्ष-आमने-सामने संप्रेषण तथा

2) जनसंचार माध्यम जैसे टेलीविजन, रेडियो तथा समाचार पत्र द्वारा अप्रत्यक्ष संप्रेक्षण।

कभी-कभी विक्रय संवर्धन में प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष साधनों का मिश्रण भी प्रयोग होता है। संदेश के साधन का चुनाव संदेश की प्रकृति तथा उसके विषयवस्तु पर निर्भर करता है। उदाहरण, संदेश के साधन का चुनाव संदेश की प्रकृति तथा उसके विषयवस्तु पर निर्भर करता है। उदाहरण के लिए एक औद्योगिक क्रेता किसी उपकरण की खरीदने का निर्णय केवल विज्ञापन या प्रत्यक्ष डाक के आधार पर नहीं होता। अतः यहाँ पर व्यक्तिगत बिक्री पर अधिक जोर देना चाहिए। दूसरी ओर साबुन तथा टूथपेस्ट खरीदने वाले ग्राहक का कम्पनी के विक्रय करने वाले व्यक्ति से मिलना कठिन होता है। अतः ऐसे ग्राहक विज्ञापन द्वारा अधिक प्रभावित होंगे।

सभी लक्षित उपभोक्ताओं की सूचना संबंधी आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए संवर्धन मिश्रण के सभी तत्वों का उचित एवं तर्कपूर्ण समन्वय आवश्यक है। इसका सामान्य तात्पर्य यह है कि संवर्धन मिश्रण को केवल संभावित क्रेताओं तथा नियमित क्रेताओं को संतुष्ट करने के लिए ही नहीं बनाया जाता। संवर्धन मिश्रण के कुछ तत्वों का उद्देश्य लक्षित उपभोक्ताओं को आकर्षित करना हो सकता है जो उत्पाद के बारे में अनभिज्ञ है। जबकि दूसरे तत्वों का उद्देश्य उन लक्षित उपभोक्ताओं को आकर्षित करना हो सकता है जिन्हें उत्पाद के संबंध में पूर्ण जानकारी हों। जैसे मान लिया आप ए0सी0 खरीदना चाहते हैं। उसके लिए आप समाचार पत्रों में तथा पत्रिकाओं में से संबंधित विज्ञापन पर ध्यान देना शुरू कर देते हैं। इसके अतिरिक्त ए0सी0 के संबंध में जनसंचार माध्यमों की रिपोर्ट भी पढ़ना शुरू कर देते हैं। इसके लिए आप प्रशिक्षण प्रोग्राम में भाग ले सकते हैं तथा उत्पाद का प्रदर्शन भी देख सकते हैं। इसी बीच आप ए0सी0 बनाने वाली

कम्पनियों के विक्रेताओं से भी मिलकर उत्पाद के लक्षणों तथा गुणों को भी जान सकते हैं। उपरोक्त सभी सूचनाओं के आधार पर एक विशिष्ट ब्राण्ड के ए0सी0 खरीदने का निर्णय लेंगे।

उपरोक्त उदाहरण को ध्यान में रखते हुए अब आप यह जवाब दे सकते हैं कि संवर्धन मिश्रण के किस पक्ष ने आपको एक विशिष्ट ब्रांड को खरीदने के लिए प्रेरित किया। आप कह सकते हैं कि बिक्री करने वाले व्यक्ति का आप पर सबसे अधिक प्रभाव पड़ा, परन्तु तथ्य यह है कि संवर्धन मिश्रण के सभी तत्वों ने अपना प्रभाव डाला। इस प्रकार लक्षित ग्राहकों से अच्छी प्रतिक्रिया प्राप्त करने के लिए आपको संवर्धन मिश्रण के चारों तत्वों का अपनाना पड़ेगा। यद्यपि आपने देखा होगा कि संवर्धन मिश्रण के तत्वों में इस प्रकार समन्वय स्थापित करना चाहिए कि एक दूसरे के पूरक बन जायें। अग्रलिखित सागणी में संवर्धन मिश्रण के विभिन्न तत्वों की विशेषताओं को सारांश में बताया गया है।

सारणी

संवर्धन मिश्रण के विभिन्न घटकों की तुलना

NMDC-130

क्रम संख्या	विज्ञापन	व्यक्तिगत विक्रय	विक्रय संवर्धन	प्रचार
1.	व्यक्तिगत तथा अप्रत्यक्ष	आमने-सामने तथा प्रत्यक्ष	अव्यक्तिगत तथा अप्रत्यक्ष	अव्यक्तिगत तथा अप्रत्यक्ष
2.	नियमित तथा चलने रहना	नियमित, निरंतर	अनियमित केवल कुछ समय के लिए	अनियमित केवल समाचार योग्य सूचनाएँ
3.	सामान्यतया एकरूपता तथा अपरिवर्तनीय	व्यक्तिगत तथा संभावित के लिए	सामान्यतया एकरूपता तथा अपरिवर्तनीय	विपणकर्ता के नियंत्रण से बाहर
4.	अप्रत्यक्ष	प्रत्यक्ष प्रतिपुष्टि	प्रतिपुष्टि नहीं यदि हो तो अप्रत्यक्ष	प्रतिपुष्टि नहीं यदि हो तो अप्रत्यक्ष अप्रत्यक्ष
5.	अत्यधिक नियंत्रण	अत्यधिक	अत्यधिक नियंत्रण	नियंत्रण नहीं
6.	प्रायोजक होता है।	प्रायोजक होता है।	प्रायोजक होता है	प्रायोजक नहीं होता
7.	कम	अधिक	परिवर्तनशील	कुछ नहीं
8.	जनसमूह	व्यक्तिगत	जनसमूह	जनसमूह

9.	संदेश का प्रभावपूर्ण होना तथा संदेश पर नियंत्रण	प्रस्तुति में लचीलापन होना तथा तुरंत अनुक्रिया	ध्यान आकर्षित होना तथा तुरंत प्रभाव	साख में वृद्धि
10.	परिणाम की गणना कठिन	अन्य साधनों से अधिक लागत	दूसरों द्वारा नकल आसान	नियंत्रण से बाहर

विपणन में संवर्धन का महत्व :-

आज के युग में जहाँ उत्पाद विभिन्नीकरण के कारण एकाधिकार है, क्रेता के पास पूर्ण सूचना उपलब्ध नहीं है तथा उसका स्वयं का व्यवहार तर्कयुक्त नहीं है। ऐसी स्थिति में क्रेता को सूचना देने का अपना अलग महत्व है। इस महत्व को अभिलिखित घटकों ने और अधिक प्रभावपूर्ण बना दिया है और आवश्यक कर दिया है कि संवर्धन साधन या संचार मिश्रण अवश्य ही तर्कपूर्ण संयोजन में अपनाये जायें। ये घटक निम्नलिखित हैं :

(1) प्रतियोगिता :-

आज का युग प्रतियोगिता का युग है क्योंकि प्रत्येक क्षेत्र में प्रतियोगिता करनी है। एक उद्योग दूसरे उद्योग से प्रतियोगिता करता है। एक ही उद्योग में बहुत सी संस्थाएँ होने का कारण भी उनमें आपस में प्रतियोगिता होती रहती है। संवर्धन पर इस प्रतियोगिता का व्यापक प्रभाव पड़ता है।

NMDC 130

आजकल निर्माता आवश्यकता की पूर्ति के साथ-साथ उपभोक्ताओं के व्यवहार का व्यापक अध्ययन कर रहे हैं। इस प्रकार प्रतियोगिता से प्रभावकारी, सुव्यवस्थित रूप से निबटने के लिए संवर्धन की सहायता लेनी पड़ती है। साथ ही सुव्यवस्थित संवर्धन कार्यक्रम भी बनाना पड़ता है। उपभोक्ता की मांग तो सदा ही छुपी रहती है। निर्माता प्रतियोगिता के माध्यम से उस मांग को उभारता व जगाता है। इस प्रकार प्रतियोगिता में संवर्धन कार्यक्रम को अपनाने के लिए बाध्य कर दिया है जो उत्पादों के विपणन में काफी प्रभावकारी सिद्ध हो रहा है।

(2) वितरण माध्यम :-

वितरण माध्यमों के विभिन्न स्वरूपों के कारण निर्माता और उपभोक्ता के मध्य अनेक प्रकार की कड़ियाँ प्रचलित हुई हैं। अतः उत्पाद निर्माता के लिए यह आवश्यक है कि वह ऐसी युक्ति का निर्माण करे जिससे उनकी सूचनाएँ उचित समय पर उपभोक्ता को ही न नहीं मिले बल्कि मध्यस्थों को भी आसानी से सुलभ हो सकें। एक उत्पाद निर्माता थोक विक्रेता को सूचित करता है, थोक विक्रेता फुटकर विक्रेता को और फुटकर

उपभोक्ता को। इस प्रकार वितरण माध्यमों में नवीनता ने संवर्धन मिश्रण का महत्त्व एक प्रबन्धक के लिए और बढ़ा दिया है।

(3) मन्दी :-

आर्थिक जगत में कुछ समय के बाद जब मन्दी आती है जो उत्पाद विक्रय को कम कर देती है। जैसे वर्तमान मन्दी का दौर। ऐसी हालत में संवर्धन मिश्रण ही एकमात्र विकल्प होता है जो विक्रय को बनाये रखता है जिससे विपणन प्रक्रियाओं में निरन्तरता बनी रहती है। जिससे विपणन क्रियायें चलती रहती है।

(4) उच्च जीवन शैली :-

उत्पाद का अधिक उपयोग उच्च जीवन शैली के स्तर का प्रतीक होता है। संवर्धन उन उत्पादों के बारे में सूचना देता है जिनको उपभोक्ता जानता नहीं है। जब उपभोक्ता को जानकारी हो जाती है तो वह उनको क्रय करके अपने जीवन शैली को उच्च बनाने का प्रयास करता है।

(5) रोजगार सृजन :-

यदि उत्पादों की माँग कम होती है तो व्यावसाय की प्रगति रूक जाती है और उत्पाद निर्माता कर्मचारियों की छँटनी करने के लिए बाध्य हो जाता है। संवर्द्धन विक्रय बनाये रखने में सहायक होता है जिससे रोजगार सुविधाएँ ज्यों कि त्यों बनी रहती हैं और छँटनी करने की आवश्यकता नहीं होती है तथा नये रोजगारों का सृजन भी होता रहता है।

NMDC-130

(6) प्रवर्तन व्यय :-

एक वस्तु के विपणन व्यय उस वस्तु के उत्पादन व्यय से कहीं अधिक होते हैं। इन विपणन व्ययों में प्रवर्तन व्यय भी शामिल हैं।

1.5 संवर्धन मिश्रण को प्रभावित करने वाले कारक :-

एक निर्माता का संवर्धन मिश्रण बहुत से कारकों से निरन्तर प्रभावित होता है। इसके प्रत्येक तत्व के महत्व तथा उनके चुनाव का कई कारक प्रभावित करते हैं। इन्हें चार वर्गों में विभक्त किया जा सकता है यथा - उत्पाद सम्बन्धी, ग्राहक संबंधी, संगठन संबंधी तथा स्थिति संबंधी कारक। आइये अब इन्हें क्रमवार समझने का प्रयास करें-

(1) उत्पाद सम्बन्धी कारक :-

प्रायः उत्पाद सम्बन्धी कारकों में निम्न कारकों को शामिल किया जा सकता है-
(अ) उत्पाद की प्रकृति, सूचना तथा उपयोग :-

उत्पाद के ग्राहक को सूचना देने के लिए अथवा सरल विचार प्रेषित करने के लिए

साधारणतया विज्ञापन पर जोर दिया जाता है। विज्ञापन का उपयोग इन्हीं उत्पादों के लिए भी होता है जिससे ग्राहक पूर्व परिचित हो। इस प्रकार विज्ञापन में ऐसे संदेश जो आसानी से समझे जा सकते हों प्रेषित किये जाते हैं तथा जटिल विचारों को बताने के लिए व्यक्तिगत बिक्री तथा विक्रय संवर्धन अधिक उपयोगी भूमिका का निर्वहन करते हैं।

(ब) उत्पाद जीवन चक्र उत्पाद के चरण :-

उत्पाद जीवन चक्र भी उसके संवर्धन मिश्रण को प्रभावित करता है। एक उत्पाद जीवन चक्र जिस चरण में होता है उससे यदि वह दूसरे चरण में जाता है तो उसका संवर्धन मिश्रण भी बदल जाता है। उदाहरण के लिए, यदि उत्पाद परिचय की स्थिति में है तचो उसके संवर्धन पर काफी व्यय करना होगा, मध्यास्थों को उत्पाद रखने व बेचने के लिए प्रलोभन देना होगा व वैयक्तिक विक्रय पर भी अधिक ध्यान देना होगा। इसके लिए भारी विज्ञापन करना होगा। मेले, प्रदर्शनियों, नुमाइश, आदि में प्रदर्शन भी अधिक प्रभावी होगा। विज्ञापनों में उत्पाद के बारे में सूचना देनी होगी कि इस प्रकार का उत्पाद बनकर विक्रय हेतु उपलब्ध है।

यदि उत्पाद का बाजार वृद्धि चरण में है तो इसमें प्रतियोगी उत्पादों की शुरूआत हो जायेगी और नये-नये ब्राण्ड प्रतियोगितो के लिए सामने आने लगेंगे। ऐसी अवस्था में विक्रय संवर्द्धन मिश्रण इस प्रकार का होगा कि उपभोक्ता में ब्राण्ड के प्रति वफादारी बनायी जा सके। अतः उत्पाद के गुणों को सामने लाने की आवश्यकता होगी। इसके लिए विज्ञापन पर अधिक निर्भर रहना होगा और उसका उपयोग अपील के रूप में करना होगा। इस प्रकार लाभों के गिरने की सम्भावना में विज्ञापन पर काफी व्यय करना होता है।

NMC-130

इस प्रकार यदि उत्पाद बाजार अवनति के चरण में है तो निर्माता को अपना संवर्धन मिश्रण बदलना पड़ता है क्योंकि अवनति के चरण में लाभ के स्थान पर हानि ही होती है व उत्पाद की मांग बहुत अधिक गिर जाती हैं। अतः निर्माता उत्पाद की समाप्ति का निर्णय लेना पड़ता है और विक्रय संवर्धन बन्द कर देने का निर्णय लेना पड़ता है।

(स) बाजार की संरचना :-

किसी उत्पाद के बाजार का स्वरूप व स्वभाव उसके संवर्धन के ढंग से उसकी सीमा को भी प्रभावित करता है। यह प्रभाव निम्न तीन प्रकार से पड़ता है-

(i) किसी उत्पाद के ग्राहक कोई प्रकार के होते हैं लेकिन इनको मुख्यतः तीन श्रेणियों में रखते हैं- सह उपभोक्ता, औद्योगिक उपभोक्ता व मध्यास्थ उपभोक्ता। जिस प्रकार का उपभोक्ता होगी उसी प्रकार का प्रवर्तन मिश्रण भी अपनाया जायेगा। उदाहरण के लिए यदि, किसी उत्पाद के ग्राहक गृह-उपभोक्ता है तो संवर्धन कार्यक्रम इस प्रकार का होगा कि उनको आकर्षित किया जा सके। इसके लिए विज्ञापन का भरपूर सहारा लेना

होगा। लेकिन यदि उत्पाद औद्योगिक है तो विज्ञापन अधिक कारकर नहीं होगा, बल्कि व्यक्तिगत संपर्क व प्रदर्शन लाभकारी होगा। इसी प्रकार यदि मध्यस्थों को आकर्षित करना है तो व्यक्तिगत सम्पर्क ही उपयोगी होगा।

(ii) यदि किसी उत्पाद का बाजार राष्ट्रीय है तो उसका प्रवर्तन मिश्रण इस प्रकार का नहीं होगा जो एक स्थानीय बाजार के लिए होता है। स्थानीय बाजार में व्यक्तिगत सम्पर्क होता है लेकिन राष्ट्रीय बाजार के लिए तो विज्ञापन व अन्य साधनों का सहारा लेना पड़ता है।

(iii) किसी उत्पाद के बाजार का केन्द्रीयकरण उसकी प्रवर्तन नीति को भी प्रभावित करता है। उदाहरण के लिए यदि किसी उत्पाद के क्रेता एक स्थान पर केन्द्रित हैं तो व्यक्तिगत सम्पर्क किया जा सकता है लेकिन यदि वे बिखरे हुए हैं तो यह तरीका कारगर सिद्ध नहीं होगा व उसके लिए अन्य तरीका अपनाना होगा।

(द) धन की प्रर्याप्तताः-

व्यापार की वृद्धि में धन की उपलब्धता एक महत्वपूर्ण घटक हैं। धन की पर्याप्तता या सीमितता उसके विकास पर काफी प्रभाव डालती हैं। यदि किसी निर्माता के वित्तीय साधन पर्याप्त हैं तो संवर्धन के विभिन्न साधनों का सदुपयोग किया जा सकता है। इसके विपरीत, यदि वित्तीय साधन सीमित हैं तो संवर्धन एक सीमा में ही किया जा सकता है।

(न) उत्पाद की किस्म तथा प्रति इकाई मूल्य :-

उत्पाद की किस्म एवं प्रति इकाई मूल्य तथा संवर्धन के बीच पारस्परिक संबंध होता है। कम मूल्य वाले तथा ग्राहक द्वारा निरन्तर खरीदी जाने वाली वस्तुओं जैसे साबुन, टूथपेस्ट, आलू चिप्स, ब्लेड, इत्यादि के विज्ञापन पर अधिक जोर दिया जाता है जबकि अधिक मूल्य वाले तथा जटिल उत्पादों जैसे लेथ मशीन, जेनरेटर इत्यादि के संवर्धन के लिए व्यक्तिगत विक्रय अधिक महत्वपूर्ण होता है।

स्वपरख प्रश्न :

1. संवर्धन मिश्रण के विभिन्न घटक कौन-कौन से हैं ?

....

....

....

2. सारिणी का प्रयोग करते हुए संवर्धन मिश्रण के विभिन्न तत्वों की विशेषताओं

की तुलना कीजिये?

....

....

....

3. बताइये कि निम्न कथन सही है या गलत ।

(i) विज्ञापन जन संप्रेषण का अव्यक्तिगत तथा बिना भुगतान किया गया साधन है।

(ii) प्रचार, विज्ञापन का ही एक रूप है।

(iii) विज्ञापन की भांति विक्रय संवर्धन भी लगातार लम्बे समय तक चलता रहता है

(iv) व्यक्तिगत विक्रय में क्रेता तथा विक्रेता के बीच आमने-सामने संबंध होता है।

2. ग्राहक संबंधी कारक :-

संवर्धन मिश्रण को दो प्रकार के ग्राहक संबंधी कारक भी प्रभावित करते हैं जो कि अग्रलिखित है :-

NMDC-130

(क) लक्ष्यित बाजार की विशेषताएँ :-

सामान्यतया विज्ञापन तथा प्रचार अंतिम उपभोक्ताओं के लिए अपयुक्त होता है जबकि उत्पादक क्रेताओं के लिए व्यक्तिगत बिक्री अपेक्षाकृत अधिक महत्वपूर्ण होती है।

जैसे-जैसे लक्ष्यित बाजार का दायरा बढ़ता जाता है अव्यक्तिगत संवर्धन के माध्यमों का महत्व बढ़ जाता है। परन्तु दूसरी ओर जब बाजार का क्षेत्र बढ़ता है तो वह अधिक विजातीय हो जाती है जैसे-बाजार में विभिन्न प्रकार के आयु, आय, पेशे, लिंग तथा जीवन पद्धति के लोग होते हैं। अतः ऐसे बाजार में विपणनकर्ता द्वारा बाजार को विभिन्न हिस्सों में बांटा जाता है और प्रत्येक हिस्से के लिए अलग-अलग संवर्धन संदेश बनाए जाते हैं।

(ख) क्रय करने के निर्णय की किस्म :-

क्रय करने के निर्णय दो प्रकार के होते हैं प्रथम नियमित निर्णय तथा दूसरा जटिल निर्णय। क्रय करने के नियमित निर्णय लेते हुए सामान्यतया क्रेता विपणन की सूचनाओं पर ध्यान नहीं देता। अतः यदि उपभोक्ता एक निश्चित ब्रांड को खरीदते हैं तो संवर्धन द्वारा ग्राहकों को बार-बार स्मरण दिलाया जाता है कि यदि ब्रांड बाजार में उपलब्ध अन्य ब्रांडों से बेहतर है। यदि क्रय करने का निर्णय जटिल है जैसा कि बहुधा

टिकाऊ उत्पादों के संबंध में होता है, जैसे टेलीविजन, वी0सी0डी0, कार इत्यादि को संवर्धन संदेश में उत्पादन से संबंधित पूर्ण सूचना होनी चाहिए। इसके अतिरिक्त प्रतियोगियों के संवर्धन प्रभाव को भी ध्यान में रखना चाहिए। क्रय करने के पश्चात् उपभोक्ता का पत्र द्वारा या व्यक्तिगत दौरे द्वारा इस बात का पुनः आश्वासन देना बहुत महत्वपूर्ण है कि उसने सही उत्पाद का क्रय किया है।

3. संगठन संबंधी कारक :-

उपरोक्त कारक तीन प्रकार के होते हैं :

1. विपणन माध्यम तथा संवर्धन युक्ति :-

यह विपणकर्ता द्वारा बिक्री बढ़ाने से संबंधित युक्ति है। उसे निम्न दो के बीच में निर्णय लेना पड़ता है।

(i) पुश युक्ति :- यह ऐसी युक्ति है जिसके अन्तर्गत उत्पादक कार्यशील होकर मध्यस्थों को उत्पाद का संवर्धन करता है जबकि मध्यस्थ आगे अंतिम क्रेताओं को माल का संवर्धन करते हैं। दूसरे शब्दों में विपणन शृंखला के प्रत्येक सदस्य अपनी अगली कड़ी को उत्पाद का संवर्धन करता है। पुश युक्ति के लिये चित्र को ध्यानपूर्वक देखिए। पशु युक्ति के अंतर्गत उत्पादक के स्तर पर व्यक्तिगत विक्रय पर जोर दिया जाता है तथा कम्पनी द्वारा मध्यस्थों को विभिन्न प्रकार के विक्रय संवर्धन का निर्देश दिया जाता है।

NMDC-30

(ii) पुल युक्ति :- पुल युक्ति के अन्तर्गत उत्पाद की संवर्धन क्रियाएं मध्यस्थों के बजाय सीधे क्रेताओं के लिए होती है। उदाहरण के लिए उपभोक्ताओं को उत्पाद के संबंध में उत्पादक का उद्देश्य ग्राहकों को प्रेरित करना होता है ताकि वे फुटकर व्यापारियों से माल की माँग करें तथा उसके परिणामस्वरूप फुटकर व्यापारी से तथा मध्यस्थ उत्पादक से उत्पाद की मांग करें। पुल युक्ति में अधिक विज्ञापन तथा विभिन्न प्रकार के विक्रय संवंर्धन की क्रियाओं की आवश्यकता होती है जैसे कूपन तथा मुफ्त उपहार योजना इत्यादि। पुल युक्ति वहाँ उपयुक्त होती हैं जहाँ उत्पादक कम्पनी अपनी मजबूत ख्याति बनाना चाहती हैं। इसके लिए उत्पादक को लक्षित बाजार का पूर्ण ज्ञान होना आवश्यक है। पुल युक्ति को समझने के लिए चित्र को समझने का प्रयास करना होगा।

अधिकतर चरणों में विपणनकर्ता पुल तथा पुश युक्ति के विभिन्न संयोजनों का प्रयोग करते हैं जैसे प्रसाधन उत्पादों के उत्पादक अपने बिक्री-कर्ताओं को डिपार्टमेन्टल स्टोर, सुपर बाजार तथा फुटकर विक्रेताओं के पास मध्यस्थों के माध्यम से भेजते हैं तो प्रदर्शन द्वारा बिक्री बढ़ाने का प्रयत्न करते हैं। दूसरी ओर उत्पादक विज्ञापन अधिकाधिक व्यय करके तथा विक्रय संवर्धन की विधियों द्वारा भी ग्राहकों को आकर्षित करते हैं।

2. ब्राँड युक्ति :-

यह विपणकर्ता द्वारा बिक्री बढ़ाने से संबंधित युक्ति है। उसे निम्न दो के बीच में निर्णय लेना पड़ता है। उत्पादों तथा मध्यस्थों की स्वीकृति के लिए सबसे पहले उत्पाद की एक ख्याति पैदा की जाती है जिसके लिए व्यक्तिगत बिक्री, विज्ञापन तथा बिक्री संवर्धन आदि विधियाँ अपनाई जाती हैं। पारिवारिक ब्रॉंड करने में अपेक्षाकृत कम प्रयत्न की आवश्यकता होती है जैसे टाटा बिरला के नये ब्रॉंड को बाजार की स्वीकृति के लिए विज्ञापन पर संभवतः कम व्यय करना पड़ता है। उपभोक्ता उपरोक्त परिवार ब्रॉंडों के अन्य उत्पादों से संतुष्ट होता है अतः वह उसी परिवार के नये उत्पाद को भी आसानी से स्वीकार कर लेता है।

3. बजट :-

इसका आशय उस राशि से है जो एक संगठन के पास संवर्धन संबंधी व्यायों के लिए उपलब्ध होती है। अतः संवर्धन तत्वों का चुनाव लक्षित ग्राहक तक पहुँचने की उनकी संबंधित लागत पर निर्भर करता है। उदाहरण के लिए व्यक्तिगत विक्रय की विधि विज्ञापन से अधिक खर्चीली होती है। बिक्री संवर्धन का मंहगा या किफायती होना उसकी किस्म पर निर्भर करता है। विपणकर्ता संवर्धन पर किये गये व्यय का अधिकतम लाभ उठाना चाहता है। अतः संवर्धन मिश्रण का चुनाव संवर्धन मिश्रण के प्रत्येक तत्व के संबंधित लागत पर निर्भर करेगा।

4. स्थिति संबंधी कारक :-

MDC-130

संवर्धन मिश्रण को प्रभावित करने वाले स्थिति संबंधी कारक हैं :

(1) संगठन की दृष्टिगोचरता तथा उसका व्यापारिक वातावरण -

कुछ कम्पनियाँ अपने उत्पाद तथा उद्योग में अपनी स्थिति के कारण जनता में अधिक प्रसिद्ध होती हैं जैसे टाटा, रिलायन्स तथा गोदरेज। ऐसी कम्पनियाँ सामान्यतया जनता को यह बताना चाहते हैं कि वे पर्यावरण से काफी जुड़ी हुई हैं। इसके लिए कम्पनियाँ सामान्य जनता के रुचि की अनेक कार्य कलापों को प्रायोजित करती है जैसे टाटा कैंसर शोध, आई0टी0सी0ए0 संगीत सम्मेलन तथा एम0आर0एफ0 खेलकूद के आयोजनों को प्रायोजित करते हैं।

चूँकि एक बड़ी जनसंख्या ऐसी दृश्यव्य फर्मों के कार्यों से जुड़ी होती है अतः ऐसी फर्म अपने उत्पाद सेवाओं के संवर्धन पर व्यय के अतिरिक्त जन सम्पर्क तथा प्रचार पर बहुत अधिक व्यय करती है।

(2) प्रतियोगिता का प्रभाव :-

प्रत्येक व्यापारिक कम्पनी अपने बाजार के क्षेत्र को बढ़ाने के लिए अपनी प्रतियोगी फर्मों के बराबर या अधिक संवर्धन कार्यों पर व्यय करती है। अतः ऐसी फर्म का संवर्धन प्रयत्न विरोधी फर्मों के कार्यकलापों से प्रभावित होता है। आजकल हम

प्रतियोगी फर्मों के बीच विज्ञापन प्रतियोगिता को देखते हैं। जैसे-दैनिक जागरण बनाम अमर उजाला तथा पेप्सिको बनाम कोक।

स्वपरक प्रश्न :

1. संवर्धन मिश्रण को प्रभावित करने वाले कारकों की सूची बनाइये ?

....

....

....

2. संवर्धन युक्ति की पुश तथा पुल विधि के बीच अंतर बताइये ?

....

....

....

3. बताइये कि निम्न कथन सही है या गलत ।

(i) उत्पाद जीवन चक्र की पूर्णता की स्थिति में संवर्धन प्रयत्न सबसे अधिक होता है।

NMDC-130

(ii) परिवार ब्रॉंड नाम के अन्तर्गत प्रस्तावित नये उत्पाद के संबंध में संवर्धन प्रयत्न की कम आवश्यकता होती है।

(iii) संवर्धन मिश्रण के किसी तत्व के चुनाव में संवर्धन के लिए फर्म के पास उपलब्ध राशि पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता।

(iv) व्यक्तिगत एक फर्म अपने प्रतियोगी फर्मों के संवर्धन क्रिया के बराबर या अधिक संवर्धन का प्रयत्न करती है।

1.5 सारांश

संवर्धन का तात्पर्य ऐसे व्यवहारिक संप्रेषण से है जो विपणनकर्ताओं द्वारा विभिन्न व्यापारिक संगठनों के बीच तथा जनता के बीच संदेशों तथा सूचनाओं के लिए प्रयोग किया जाता है। इसके अन्तर्गत उन सभी कार्यों को शामिल किया जाता है जो उत्पाद की मांग बढ़ाने के लिए किए जाते हैं इस प्रकार संवर्धन युक्ति किसी उत्पाद सेवा या विचार के स्थिति होने या लाभकारी होने की सूचना देने, अपील करने या पुनः स्मरण दिलाने के लिए बनाई जाती है। संप्रेषण पूर्ण होने के लिए आवश्यक है कि प्रेषक द्वारा भेजे गये संदेश को प्राप्तकर्ता प्राप्त करता है तथा दोनों उस सूचना को एक ही अर्थ से

समझते हैं। संप्रेषण प्रक्रिया में निम्न शामिल होते हैं, प्रेषक, प्राप्तकर्ता, कोडिंग करना, कोड हटाना संदेश माध्यम, अनुक्रिया, प्रतिपुष्टि तथा बाधा इत्यादि। अपने लक्षित बाजार तथा अन्य जनता को प्रभावपूर्ण सप्रेषण के लिए विपणकर्ता को संप्रेषण प्रक्रिया का ज्ञान होना आवश्यक है। प्रभावपूर्ण संप्रेषण के लिए निम्न कदम उठाये जाते है :-

(1) लक्षित श्रोता का पता लगाना।

(2) इच्छित अनुक्रिया को सुनिश्चित करना,

(3) संदेश के विषय तथा प्रारूप का चुनाव,

(4) संदेश का माध्यम तथा उसका भाव तथा,

(5) प्रतिपुष्टि को एकत्र करना।

संवर्धन मिश्रण में चार तत्व शामिल होते हैं : विज्ञापन, व्यक्तिगत विक्रय, बिक्री संवर्धन तथा प्रचार। विज्ञापन एक प्रायोजक द्वारा अपने उत्पाद के बारे में जनसंचार माध्यमों से किया जाने वाला अव्यक्तिगत संप्रेषण है। व्यक्तिगत विक्रय के अंतर्गत क्रेता तथा विक्रेता प्रत्यक्ष तथा आमने-सामने होते हैं। जहाँ विक्रेता क्रेता की आवश्यकताओं को पूरा करने के संबंध में सीखता है। विक्रय संवर्धन के अंतर्गत सीमित समय के लिए कुछ प्रलोभन देकर बिक्री बढ़ाने तथा डीलरों के प्रभाव को बढ़ाने का प्रयत्न किया जाता है।। प्रचार भी एक अव्यक्तिगत संप्रेषण होता है परन्तु विज्ञापन की भाँति इसमें भुगतान नहीं किया जाता और न ही वह किसी उत्पादक द्वारा प्रायोजित होता है। प्रचार समाचार माध्यमों द्वारा किसी उत्पादक का या उसके उत्पादक के संबंध में समाचार होता है।

संवर्धन के विभिन्न तत्वों के प्रयोग तथा सापेक्षिक महत्व को निम्न कारक प्रभावित करते हैं-

1) उत्पाद से संबंधित कारक,

2) ग्राहक से संबंधित कारक,

3) संगठन से कारक तथा संबंधित

4) स्थिति से संबंधित कारक।

1.6 उपयोगी शब्दकोष

अपील : संवर्धन संदेश का केन्द्रीय या मुख्य विचार।

संप्रेषण : ऐसी प्रक्रिया जिसके अंतर्गत विचारों, सूचनाओं तथा अनुभवों के आदान-प्रदान से दूसरे के व्यवहार को प्रभावित किया जाता है।

कोडिंग करना : ऐसी प्रक्रिया जिसके अंतर्गत संप्रेषण के विचार को सांकेतिक संदेश जैसे शब्द, चित्र, संख्या या हाव-भाव इत्यादि में बदल दिया जाता है।

कोड को हटाना : ऐसी प्रक्रिया जिसके अन्तर्गत प्राप्तकर्ता कोड में प्राप्त हुए संकेतों को संदेश में बदलने का प्रयत्न करता है।

प्रतिपुष्टि : इसका आशय संदेश प्राप्त होने पर प्राप्तकर्ता की प्रतिक्रिया से है जो प्रेषक को वापस संप्रेषित कर दी जाती है।

माध्यम : यह संप्रषण का स्त्रोत है जो प्रेषक के संदेश को प्राप्तकर्ता के पास तथा प्राप्तकर्ता की प्रतिक्रिया को प्रेषक के पास पहुँचाता है।

संदेश : यह प्राप्तकर्ता के व्यवहार में परिवर्तन लाने के लिए प्रेषक द्वारा भेजे जाने वाले संकेतों का संयोजन है।

शोर या बाधा : कोई भी चीज को संप्रेषण प्रक्रिया में बाधा उत्पन्न करती है जिससे प्राप्तकर्ता को मिलने वाला संदेश प्रेषक द्वारा भेजे गये संदेश से भिन्न होता है या प्राप्तकर्ता को संदेश प्राप्त ही नहीं होता।

1.8 महत्वपूर्ण प्रश्नावली

MDC-13

प्रश्न 1: विज्ञापन तथा व्यक्तिगत विक्रय में अन्तर समझाइए तथा किसी व्यापारिक संस्था के लिए इनकी सापेक्षिक महत्ता का वर्णन कीजिए?

प्रश्न 2: विपणन में संवर्द्धन की भूमिका पर टिप्पणी लिखिए ?

प्रश्न 3: ''माँग के सृजन कार्य तीन प्रमुख स्वरूप ग्रहण करता है- वैयक्तिक, विक्रय, विज्ञापन एवं विक्रय संवर्द्धन'' समझाइए और तीनों के पारस्परिक सम्बान्ध पर प्रकाश डालिए।

प्रश्न 4: विपणन में प्रवर्तन से आप क्या समझते हैं? विपणन में प्रवर्तन का महत्व समझाइए।

प्रश्न 5: ''प्रवर्तन का व्यापक लक्ष्य क्रेता आचरण को प्रभावित करना एवं उपभोक्ता माँग वक्र की स्थिति तथा रूप को उत्पाद के पक्ष में बदलना है।'' कथन को स्पष्ट कीजिए?

प्रश्न 6: विपणन संसाचर के विभिन्न स्वरूपों का संक्षेप में वर्णन कीजिए? यह भी बताइए कि विज्ञापन संबंधी निर्णयों में किन-किन तत्वों पर विचार किया जाता है?

इकाई 2 : विज्ञापन प्रबन्धन तथा प्रचार

इकाई रूपरेखा

2.0 उद्देश्य

2.1 प्रस्तावना

2.2 विज्ञापन का तात्पर्य, उद्देश्य तथा महत्व

2.3 विज्ञापन के विभिन्न प्रकार

2.4 विज्ञापन माध्यम के प्रचार, चयन तथा मूल्यांकन

2.5 प्रभावकारी विज्ञापन प्रति तथा उसके गुण

2.6 प्रभावकारी विज्ञापन के लिए आवश्यक कारक

2.7 विज्ञापन कार्यक्रम तथा उसका नियंत्रण

2.8 विज्ञापन कार्यक्षमता का मूल्यांकन, महत्व तथा सीमाएँ

2.9 विज्ञापन के कार्यकारी पक्ष

2.10 भारत में विज्ञापन की दिशा और दशा

2.11 प्रचार एक परिचय

2.12 विज्ञापन तथा प्रचार में अंतर

2.13 प्रचार के प्रमुख उपकरण

2.14 सारांश

2.15 उपयोगी शब्दकोष

2.16 महत्वपूर्ण प्रश्नावली

NMDC-130

2.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययनोपरान्त आप छात्रगण -

- विज्ञापन का तात्पर्य और इसके उद्देश्यों को विस्तार से समझा सकेंगे,
- विज्ञापन के महत्व तथा इसके विभिन्न प्रकारों का विश्लेषण कर सकेंगे।
- विज्ञापन माध्यम के प्रकार, उनका चयन तथा उनके मूल्यांकन को समझा सकेंगे।
- एक प्रभावकारी विज्ञापन प्रति के गुण तथा प्रभावकारी विज्ञापन के तत्वों की व्याख्या कर सकेंगे।

- विज्ञापन कार्यक्रम का निर्माण, नियंत्रण तथा उसकी प्रभावोत्पादकता मूल्यांकन की विधि को समझा सकेंगे।
- भारत में विज्ञापन की दशा और दिशा का गहन विवेचन कर सकेंगे।
- विज्ञापन तथा प्रचार में अन्तर के साथ-साथ प्रचार के विभिन्न आयामों तथा इसके प्रस्तुत उपकरणों के सम्बन्ध में ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।

2.1 प्रस्तावना

पिछली इकाई में हम संवर्धन मिश्रण के चारों उपकरणों के सम्बन्ध में एक सूक्ष्म अवलोकन कर चुके हैं। ये हैं-विज्ञापन, प्रचार, व्यक्तिगत विक्रय तथा विक्रय संवर्द्धन। प्रस्तुत इकाई में हम सभी विज्ञापन तथा प्रचार के संबंध में महत्वपूर्ण अवधारणाओं की जानकारी प्राप्त करेंगे। हम समझने की कोशिश करेंगे कि विज्ञापन का तात्पर्य क्या होता है? इसके प्रमुख उद्देश्य क्या है? विज्ञापन माध्यमों की उपयुक्तता सम्बन्धी निर्णय लेने में कौन-कौन से संगठनात्मक पक्ष सक्रिय होते हैं? और ये निर्णय किन प्रमुख आधारों पर लिये जाते हैं? साथ ही, इस इकाई में हम विज्ञापन और प्रचार को अलग-अलग अर्थों में भी समझ सकेंगे तथा प्रचार के विभिन्न उपकरणों को भी विस्तृत रूप से समझने का प्रयास करेंगे।

NMDC-130

2.2 विज्ञापन का तात्पर्य, उद्देश्य तथा महत्व -

विज्ञापन शब्द को प्रायः Advertising से भी संबोधित करते हैं जो कि एक आंग्लभाषा का शब्द है। जिसकी उत्पत्ति लैटिन भाषा के शब्द Advertere से हुई है, जिसका अर्थ है "To Turn To" मोड़ना। व्यावसायिक संसार में मोड़ने से तात्पर्य है कि एक उपभोक्ता को अपनी कम्पनी के उत्पाद तथा सेवाओं के प्रति आकर्षित करना। विज्ञापन शब्द को और अधिक स्पष्ट करते हुए कह सकते हैं कि विज्ञापन का तात्पर्य एक परिचय प्राप्त प्रायोजक द्वारा विचारों, उत्पादों तथा सेवाओं का अवैयक्तिक प्रस्तुतीकरण और संवर्द्धन करने का तरीका है, जिसका भुगतान किया जाता है।

अतः उपरोक्त विवेचन के बाद हम कह सकते हैं कि विज्ञापन एक प्रकार की अवैयक्तिक विक्रय कला है जो उत्पादों, सेवाओं व विचारों की सूचना देता है तथा इस सूचना के देने को लिए प्रायोजक द्वारा भुगतान भी किया जाता है। विज्ञापन में निम्न विशेषताएं होती हैं :-

1. यह प्रस्तुतीकरण वैयक्तिक नहीं होता है अर्थात् एक व्यक्ति दूसरे से कुछ नहीं कहता सुनता।
2. यह एक परिचय प्राप्त प्रायोजक द्वारा किया जाता है।

3. इसके लिए भुगतान करना पड़ता है अर्थात् यह मुफ्त मे नहीं कराया जा सकता है।

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि वर्तमान युग विज्ञापन का युग है। विज्ञापन आज के व्यवसाय की जो जरूरत है जिसको कोई भी प्रबन्धक नकार नहीं सकता है। इसी कड़ी में फ्यूचर समूह के अध्यक्ष श्री किशोर बियानी के अनुसार ''अच्छे एवं प्रभावी'' विज्ञापन से तीन प्रकार के प्रभाव पड़ते हैं :-

1) विक्रय में उत्तरोत्तर वृद्धि

2) सूचना प्रदान करना और

3) कंपनी की छवि बनाना।

उपरोक्त कथन का तात्पर्य यह है कि विज्ञापन द्वारा कम्पनी के व्यापार में वृद्धि होनी चाहिए, बाजार में इसके प्रभाव का विस्तार होना चाहिए तथा कंपनी की छवि में वृद्धि होनी चाहिए।

इस प्रकार से विज्ञापन के तीन आधारभूत उद्देश्य होते हैं :-

(i) लक्षित उपभोक्ताओं को सूचित करना :- इसमें अनिवार्यतः नए उत्पादों की प्रस्तुति, मूल्य परिवर्तन, उत्पाद सुधार की सूचना देना आदि कार्य आते हैं।

(ii) लक्षित श्रोताओं का लुभाना :- इसमें ब्रांड लोकप्रियता बढ़ाना, एक ब्रांड को छोड़कर दूसरे को अपनाना आदि कार्य शामिल है।

NMC-130

(iii) विशिष्ट ब्रांड नामों को ग्राहकों के लिए प्रिय बनाए रखने में मदद करना।

ऊपर वर्णित उद्देश्यों को विशिष्ट श्रेणी में रखा जा सकता है इसी प्रकार सामान्य विज्ञापन उद्देश्यों को निम्नलिखित श्रेणियों में रखा जा सकता है -

1) नवीन उत्पादों या सेवा का परिचय देना :-

समय समय पर निर्माता नवीन उत्पादों को बाजार में लाते हैं, जिससे वहाँ, पहले से ही उपस्थित उत्पादों से प्रतियोगिता कर सकें और अपने उत्पादों की बिक्री बढ़ा सकें। नवीन उत्पाद (बाजार में एकदम नया) जैसे-फैक्स मशीन या लैपटाप कम्प्यूटर आदि का विज्ञापन काफी समय तक करना आवश्यक है जिससे उपभोक्ता उत्पाद का परिचय तथा उसकी उपयोगिता के बारे में जानकारी प्राप्त कर सके। इसी प्रकार नए ब्रांडों का विज्ञापन भी जोर से किया जाता है।

2) नए उपभोक्ता बनाकर बाजार में वृद्धि :-

विज्ञापन का उपयोग करके नए उपभोक्ताओं द्वारा अपने उन उत्पाद बाजारों को अधिक विस्तृत किया जा सकता है, जिसका अभी तक पता नहीं था। उदाहरण के लिए टी.वी. और डी.वी.डी. उत्पाद के निर्माता जो अब तक अपने उत्पादों को परिवार तथा

पेशेवरों को बेचते आए हैं, वे सरकारी और बड़ी संस्थाओं को भी उपभोक्ता बनाने का प्रयास कर सकते हैं और उन्हें क्लोज सर्किट टी.वी. तथा सुरक्षा व्यवस्था और शैक्षिक संसाधनों को प्रस्तुत कर सकते हैं। उन्हें अपने उपभोक्ता बाजार को विस्तृत करने का दूसरा तरीका उत्पाद के नए उपयोग सुझाना है।

उदाहरण के लिए स्त्रियों के उपयोग हेतु बनाये गये शैम्पू को अब पुरूषों के लिए भी प्रस्तुत किया जा रहा है। इसी प्रकार "मिल्कमेड" मूलतः दूध के विकल्प उत्पाद के रूप में प्रस्तुत किया गया था, जिसे अब मिठाइयाँ और मीठे पदार्थ बनाने में और बच्चों के लिए सैंडविच में उपयोगी बता कर बेचा जा रहा है।

3) उत्पाद की गुणवत्ता में सुधार की सूचना देना :-

ऐसे विज्ञापनों में सामान्यतः 'नया', 'संशोधित' अथवा परिवर्तित इत्यादि विशेषणों का उपयोग ब्रांड नाम के पहले किया जाता है उदाहरण के लिए - "नया व्हील" साबुन का आभास देता है, जबकि वस्तुतः पहले और नए व्हील साबुन में अधिक अंतर शायद ही हो। कई बार पैकिंग में किए गए थोड़े से परिवर्तन ग्राहकों को उत्पाद की गुणवत्ता में उत्तमता का आभास दे जाते हैं, जैसे-मैगी का नया पैक।

4) विशेष उपहार देना :-

प्रतिस्पर्धा, मंदी, घटती हुई बिक्री इत्यादि के समय विज्ञापन का उपयोग विशेष भेंट देने के लिए किया जाता है। उदाहरण के लिए वीडियोकोन ने अपने इलेक्ट्रानिक उत्पादों की घटती बिक्री को बढ़ाने के लिए "दो के मूल्य में तीन उत्पाद देने का विज्ञापन दिया। प्रायः हम "दो रुपयें की छूट" जैसे विज्ञापन देखते हैं जिन्हें विशेष रूप से साबुन, टूथपेस्ट इत्यादि के निर्माता समय-समय पर घोषित करते रहते हैं। होटल भी मंदी के सीजन में अपने किरायों में छूट की घोषणा करते हैं। इसी प्रकार रूम हीटरों, पंखों, एयरकंडीशनरों इत्यादि के निर्माता भी मंदी में अपने उत्पादों की बिक्री बनाये रखने के लिए इस प्रकार की छूटों का विज्ञापन देते हैं।

5) थोक व्यापारियों व वितरकों के संबंध में सूचना देना :-

अपने उत्पादों के वितरणों की सूचना देनें में अपने माल की बिक्री में सहायता देने और संभाव्य ग्राहकों की उत्पाद क्रय के लिए भी विज्ञापन दिये जाते हैं। इनमें ग्राहकों की सुविधा के लिए कंपनी के थोक व्यापारियों व वितरकों के नाम तथा पते आदि दिए जाते हैं।

6) ग्राहकों को उत्पाद संबंधी जानकारी देना :-

इस प्रकार के विज्ञापन मूलतः "सूचना व जानकारी देने वाले होते हैं। इनमें उपभोक्ता को लुभाने या प्रेरित करने पर अधिक बल नहीं दिया जाता। विज्ञापन की यह तकनीक प्रायः सुप्रतिष्ठित उत्पादों के नए उपयोगों की जानकारी देने के लिए इस्तेमाल की जाती है। इस उपभोक्ताओं को अधिक उन्नत किस्म के उत्पादों, सहित प्लास्टिक जार

या बोतलों, जैसे-पर्ल के बारे में बताने के लिए किया जाता है। इसी प्रकार कतिपय उत्पादों की उपयोगिता अथवा हानिकारक प्रभावों के विषय में जनसामान्य को सूचित करने के लिए भी समाजोपयोगी विज्ञापन दिए जाते हैं। उदाहरण के लिए हाल ही में सरकार द्वारा प्रायोजित पोलियों टीकाकरण के विज्ञापनों का उद्देश्य पोलियों की बीमारी के प्रति इंजेक्शन के उपयोग को बढ़ावा देना था। इसी प्रकार शराब बंदी और नशीले पदार्थों के सेवन को कम करने के लिए भी विज्ञापन दिए जाते हैं।

7) उपभोक्ताओं को याद दिलाना -

ऐसे विज्ञापन उन उत्पादों या उत्पाद के लिए दिए जाते हैं, जिनका निरन्तर उपयोग होता रहता है। जैसे-ब्लेड, सिगरेट, ठंडे पेय आदि। इसका प्रमुख उद्देश्य उपभोक्ताओं को उसी विशिष्ट उत्पाद की या दिलाते रहना होता है।

8) थोक व्यापारियों की संतुष्टि के लिए :-

एक सफल फुटकर व्यापारी वह है जो अपने माल को शीघ्रता से बेच सके, ताकि उस धनराशि को पुनः व्यापार में लगाकर कई गुना लाभ कराया जा सके। वितरकों को विज्ञापन समर्थन इसलिए भी जरूरी है, क्योंकि कई लोगों के पास माल को देर तक शैल्फ पर रखने का सामर्थ्य नहीं होता। इसीलिए उन्हें प्रदर्शनार्थ माल तथा विज्ञापन सामग्री देकर संतुष्ट रखने के कंपनी का हित होता है।

NMDC-130

9) ब्रांड की छवि स्थापित करना :-

इस प्रकार के विज्ञापनों के दो उद्देश्य होते हैं : (i) उत्पाद की छवि बाजार में स्थापित करना और (ii) लक्षित उपभोक्ताओं को यह बताना कि उत्पादक किन कारणों से ब्रांड ''क'' इनमें उत्पाद विशेष की एक विशिष्ट छवि को उजाकर करने और उसे निरन्तर लोकप्रिय बनाए रखने पर बल दिया जाता है। दूसरे प्रकार के विज्ञापनों में ''जिन्हें तुलनात्मक विज्ञापन'' भी कहते हैं। दो ब्राडों का तुलनात्मक गुणवार विवरण दिया जाता है, जिससे ग्राहकों को अपने उत्पाद की श्रेष्ठाता सिद्ध की जा सके। ''निरमा और सर्फ'' 'विडियोकोन और एल0 जी0' कम्प्यूटर प्रणालियों के विज्ञापन इसके उदाहरण हैं।

10) अन्य उद्देश्य :-

विक्रेता दल के मनोबल को बनाए रखने और उसमें वृद्धि करने के उद्देश्य से भी विज्ञापन दिये जाते हैं। जब कंपनी के विक्रेता दल अपनी कंपनी के बड़े-बड़े विज्ञापनों को देखते हैं, तो उन्हें अपनी कंपनी तथा इसके उत्पादों पर गर्व होता है। विज्ञापनों के अन्य संभावित उपयोगों में, कर्मचारियों की भर्ती अथवा कंपनी के शेयर निर्गमित करने की घोषणा आदि कार्य गिनाए जा सकते हैं।

विज्ञापनदाताओं की दृष्टि से उद्देश्यों को दो श्रेणियों में बाँटा जा सकता है: (क) प्रसारगत उद्देश्य और (ख) बिक्रीगत उद्देश्य। बिक्रीगत उद्देश्य का अर्थ है कि नया विज्ञापन पर खर्च किए गए प्रति रुपए के बदले में बिक्री में उपयुक्त वृद्धि हुई है या नहीं।

क्योंकि बिक्री में वृद्धि का आंकलन और इसके विज्ञापन पर व्यय में सापेक्षता बैठाना तथा इसका सही-सही अनुमान लगाना जटिल कार्य है, इसलिए हम इस इकाई में अपना अध्ययन दूसरे उद्देश्यों अर्थात् विज्ञापन के प्रसारगत उद्देश्य को समझने तक सीमित रखेंगे।

विज्ञापन के उद्देश्य :-

जैसा कि हम पहले बता चुके हैं कि विज्ञापन का उद्देश्य ग्राहक को एक उत्पाद विशेष की खरीद के लिए लुभाना व तैयार करना होता है। दूसरे शब्दों में, विज्ञापन का मुख्य एवं आधारभूत उद्देश्य व्यक्ति के क्रय व्यवहार को प्रभावित करके अपने (अर्थात् एक उत्पाद विशेष) उत्पाद को खरीदने के लिए विवश करना होता है। परन्तु यह क्रय व्यवहार वास्तव में लंबे समय तक किए गए ग्राहक निर्णय की परिणाम मात्र होता है। विज्ञापनदाता के लिए यह समझना लाभदायक होगा कि उपभोक्ताओं को उसकी वर्तमान मनःस्थिति से बदलकर विज्ञापन प्रेरणा द्वारा एक विशिष्ट मनःस्थिति (उत्पाद की खरीदारी) में कैसे लाया जा सकता है।

हम विज्ञापन को एक ऐसा प्रयास मानते हैं, जिसके द्वारा उपभोक्ताओं के व्यवहार को एक क्रम में एक पूर्वनिर्धारित उद्देश्य की ओर प्रेरित करके एक विशिष्ट निर्णय लेने पर बाध्य किया जाता है। इस प्रक्रिया को चित्र में विधिवत दिखाया गया है।

NMDC-13

आइए, इनका क्रमशः विवेचन करें।

1) ब्रांड अनभिज्ञता:- इस स्थिति में उपभोक्ता को सामान्यतः उत्पाद की जानकारी नहीं होती।

2) सूचना प्राप्ति :- इस अवस्था में उपभोक्ता को बाजार में उत्पाद विशेष की उपलब्धि के बारे में सूचित किया जाता है।

3) जानकारी मिलना (परिचय) :- इस अवस्था में उपभोक्ता के बारे में जानकारी प्राप्त होती है।

4) रूचि :- पसंद आने पर उपभोक्ता की रूचि उत्पाद के प्रति हो जाती है।

5) पसंद :- तत्पश्चात् उत्पादों को देखते हुए उपभोक्ता उत्पादक विशेष को पसंद कर लेता है। इसमें तुलनात्मक विज्ञापन की भूमिका भी महत्वपूर्ण होती है, जिसका विवरण हम ऊपर दे चुके हैं।

6) विश्वस्त होना :- रूचि होने और उत्पाद पसंद आ जाने पर उत्पादक इसकी श्रेष्ठता अथवा उपयोगिता के बारे में आश्वस्त हो जाता है। वह यह विचार कर लेता है कि इसे खरीद लेना बुद्धिमता होगी।

7) इस अवस्था में उत्पाद अपने क्रय निर्णय को वास्तविक क्रय में परिवर्तित कर लेता है।

NMDC-133

कोई भी कम्पनी इस आदर्श क्रम को अपने कार्य व्यवहार में ला सकती है। विज्ञापनदाता विभिन्न अवस्थाओं में अपेक्षित उद्देश्यों की प्राप्ति के अनुरूप कर्मचारी दल की नियुक्ति कर सकता है और लक्ष्यों को निर्धारित कर सकता है। उदाहरण के लिए, एक कम्पनी पोटैटो वेफर्स का एक नया ब्रांड (जैसे-अंकल चिप्स) पहली बार बाजार में प्रस्तुत करने का निर्णय लेती है। स्पष्ट है कि इस वक्त एक उपभोक्ताओं को इसके बारे में कोई जानकारी नहीं होती, इसलिए इस समय विज्ञापन का उद्देश्य उन्हें इस उत्पाद के विषय में सूचित करना होता और सुगम एवं सीधे संदेशों द्वारा तभी अधिक प्रभावी होगा जब उसमें उत्पादों का नाम हो। ''अंकल चिप्स'' वालों ने ऐसा ही किया है।

इसी तरह जब कोई उत्पाद, कुछ समय से बाजार में हो, तब यह अनुभव किया जाता है कि केवल कुछ ही लोगों को इसकी जानकारी है। ऐसी अवस्था में विज्ञापन का उद्देश्य उत्पाद विषयक जानकारी का संवर्धन करना होगा। उदाहरण के लिए वर्तमान में 20 प्रतिशत से 40 प्रतिशत लोगों तक ले जाने का लक्ष्य निर्धारित करना।

सोपान चित्र का उद्देश्य यह स्पष्ट करता है कि विज्ञापन प्रभाव की विभिन्न अवस्थाओं में अपने लक्ष्य निर्धारित करने और उसके अनुरुप लोगों को नियुक्त करने में विज्ञापनदाता को सुविधा हो सके और समग्र प्रयास द्वारा अधिकाधिक ग्राहक प्रेरित होकर

उत्पाद को क्रय कर सके। यहाँ यह बता देना आवश्यक है कि प्रत्येक सोपान के लिए अलग-अलग संदेशों की आवश्यकता होगी।

विज्ञापन का महत्व सार्वभौमिक है इसीलिए आधुनिक युग में व्यवसायिक धुरी विज्ञापन ही है। किसी विद्वान ने ठीक ही कहा है हम जहाँ हैं हमारे चारों ओर विज्ञापन उपस्थित है। विज्ञापन को हम अध्ययन की सुविधादृष्टि से चार भागों में विभक्त कर अध्ययन करेंगे-

(1) निर्माताओं के संबंध में -

निर्माताओं के संबंध में विज्ञापन के महत्व को पुनः कई भागों में विभक्त कर अध्ययन करेंगे-

(क) वर्तमान प्रतिस्पर्धात्मक युग में विज्ञापन ही व्यापार की धुरी है जो एक उत्पादनकर्ता के बाजार में टिके रहने का आधार प्रदान करता है।

(ख) विज्ञापन एक निर्माता को मध्यस्थ दिलाने का कार्य भी करता है। इन विज्ञापनों से आकर्षित होकर मध्यस्थ उसके उत्पाद को अपनी दुकान पर विक्रय हेतु रखने को सहर्ष राजी हो जाते हैं।

NMDC-130

(ग) विज्ञापन उत्पाद की माँग को बढ़ाता है जिससे उत्पाद को उसकी पूर्ति हेतु निर्माण कार्य को वृहद पैमाने पर करना पड़ता है। अत; परिणामस्वरूप बड़े पैमाने ने सभी लाभ उत्पाद को मिल जाते हैं जैसे उत्पादन लागत में कमी, आधुनिक मशीनों का प्रयोग आदि।

(च) प्रायः एक उत्पादक अपना सारा ध्यान केवल उन्हीं उत्पादों तक ही केन्द्रित कर लेता है जिनकी माँग बाजार के किन्ही कारणों से आधिक हो। ऐसा करने के पीछे प्रबल धारणा यह है कि वह अपने आपको एक उत्पाद विशेष का विशेषज्ञ कहलाना चाहता है और इस प्रकार विशिष्टीकरण का लाभ उसको बाजार में मिल जाता है।

(छ) विज्ञापन उत्पादक की ख्याति में भी वृद्धि करता है। उदाहरण-जैसे अम्बानी बन्धुओं की ख्याति उनके विज्ञापनों ने बनाई, रतन टाटा की ख्याति आजकल नैनो कार के विज्ञापन द्वारा हो रही है तथा किशोर बियानी की ख्याति बिग बाजार के विज्ञापनों द्वारा बन रही है।

(ज) उत्पादों की स्थायी माँग बनाने में विज्ञापन बड़ी सहायता करता है। निर्माता अपना उत्पादन योजनाबद्ध कर सकता है जैसे शीतल पेय के विज्ञापन जाड़े में भी आते हैं जबकि इसकी मांग गर्मियों में अधिक होती है। किन्तु योजनाबद्ध

विज्ञापनों के कारण सर्दियों में भी ग्राहकों द्वारा शीतल पेय के अन्य उपयोग किये जाते हैं जिससे उत्पाद की माँग निरन्तर बनी रहती है।

(झ) विज्ञापन कम्पनी की ख्याति में वृद्धि करता है जिससे कुशल कर्मचारी नये-नये रोजगार प्राप्त करने के लिए कम्पनी के प्रति आकर्षित होते हैं जिससे कम्पनी को कुशल कर्मचारियों की प्राप्ति होती है।

(8) विज्ञापन उपभोक्ताओं को कम्पनी को चक्र में संरक्षित रखता है और उसको छूटकर जाने नहीं देता जिसका लाभ उत्पादक को मिलता है।

(9) विज्ञापन करने वाली संस्थाओं के कर्मचारियों पर विज्ञापन का अच्छा प्रभाव पड़ता है। उनमें उत्तरदायित्व की भावना का विकास होता है और वे गुणवत्तायुक्त माल निर्मित करने का प्रयत्न करते हैं।

(10) जिन उत्पादों का विज्ञापन होता है उन उत्पादों के विक्रेताओं को उत्पाद के संबंध में उपभोक्ताओं को जानकारी देने का कार्य आसान हो जाता है और साथ ही अधिक बिक्री कर निर्माताओं को लाभ पहुँचाते हैं।

(11) विज्ञापन से निर्माताओं को एक लाभ यह है कि इससे उत्पाद की माँग में वृद्धि होता है। अतः विज्ञापन लगातार माँग का सृजन करने में सहायता करता है।

(12) विज्ञापन के माध्यम से निर्माता द्वारा उत्पादों में किये गये परिवर्तनों की सूचना बहुत ही कम व्यय तथा शीघ्रतापूर्वक दी जा सकती है।

(13) विज्ञापन के माध्यम से नये उत्साह आसानी से बिक जाते हैं अतः विज्ञापन निर्माताओं को नये उत्पादों का उत्पादन करने के लिए प्रेरित करता है।

(2) उपभोक्ताओं को लाभ :-

(1) विज्ञापन उपभोक्ताओं के ज्ञान में निरन्तर वृद्धि करता है जिसका सीधा लाभ उपभोक्ता को पहुँचाता है। विज्ञापन उत्पादों के विभिन्न उपयोगों की जानकारी देता है जिससे उपभोक्ता के ज्ञान में वृद्धि होती रहती है।

(2) विज्ञापन उपभोक्ता को उत्पाद का चुनाव करने में सुविधा प्रदान करता है और समय की बचत करता है।

(3) विज्ञापित उत्पाद की माँग बढ़ने पर उत्पादन बड़े पैमाने पर किया जाता है जो कम लागत पर होता है। कम लागत उत्पाद के मूल्य को कम करने में सहायक होती है और इस प्रकार उपभोक्ता को कम मूल्य पर उत्पाद मिल जाती है

(4) विज्ञापन उपभोक्ता के रहन सहन के स्तर में वृद्धि करता है। विज्ञापन उपभोक्ता को अधिक उत्पादों के प्रयोग को प्रेरित करता है। एक व्यक्ति जितना अधिक

उत्पादों का प्रयोग करता है उसकी जीवन स्तर उतना ही ऊंचा माना जाता है।

(5) विज्ञापित उत्पाद बाजार में आसानी से मिल जाती है और उन्हें अधिक ढूँढ़ना नहीं पड़ता। इस प्रकार उपभोक्ता को ये उत्पाद सहज प्राप्त हो जाता है।

(6) साधारण विज्ञापन में उत्पादों के मूल्य अंकित रहते हैं जिससे उपभोक्ता को उनके मूल्यों की जानकारी हो जाती है अतः मूल्य के संबंध में धोखा नहीं दिया जा सकता है।

(7) जिन उत्पादों का विज्ञापन किया जाता है उनकी गुणवत्ता में निर्माता बराबर सुधार करता है, जिससे कि वह प्रतियोगिता में बना रहे। इसके लिए अनुसंधान का भी प्रयोग लिया जाता है। इससे उत्पाद की गुणवत्ता में सुधार होता रहता है जिसका लाभ उपभोक्ता को भी मिलता रहता है।

(8) जिन उत्पादों का विज्ञापन किया जाता है उनकी कुल माँग बढ़ने के कारण उनका उत्पादन वृहत पैमाने पर किया जाता है जिससे प्रति इकाई लागत कम हो जाती है। जिससे वस्तुओं के मूल्यों में कमी होती है और उपभोक्ता लाभान्वित होता है।

(3) मध्यस्थों को लाभ :-

NMDC 30

(1) जिन उत्पादों का विज्ञापन किया जाता है उनका पुन; विज्ञापन मध्यस्थों के लिए करना आवश्यक नहीं है। उन उत्पादों के लिए तो क्रेता स्वतः ही आते हैं और ऐसे क्रेताओं को अधिक समझाने की भी आवश्यकता नहीं होती है। अतः उनके लिए विक्रय सुविधाजनक हो जाता है।

(2) विज्ञापन की माँग में स्थायित्व आ जाता है और उत्पाद के क्रेता पूरे वर्ष-भर मिलते रहते हैं जिसका परिणाम यह होता है कि मध्यस्थों की जीविका का स्थायी साधन हो जाता है।

(3) विज्ञापन मध्यास्थ विक्रेताओं को एक प्रकार से समर्थन एवं प्रोत्साहन देता है तथा उनका कार्य आसान बनता है।

(4) जिन उत्पादों का विज्ञापन होता है उनकी बिक्री अधिक होती है जिससे मध्यस्थों के लाभ में वृद्धि होती है।

(5) विज्ञापन होने से उत्पाद जल्दी बिक जाती है। इससे स्टॉक में उत्पाद बहुत दिनो तक नहीं रहता है। इसके साथ-साथ फैशन या रूचि परिवर्तन होने से उत्पाद बेकार पड़े रहने का भी भय नहीं रहता। इस प्रकार मध्यस्थों की जोखिम में कमी हो जाती है।

(6) जिन वस्तुओं का विज्ञापन किया जाता है वे उत्पाद अन्य उपयोगी उत्पाद से होने वाली प्रतियोगिता का अन्त कर देती है क्योंकि ग्राहक उन उत्पादों को माँगता हुआ स्वतः ही विक्रेता के पास आता है।

(7) जिन उत्पादों का विज्ञापन किया जाता है उनके मूल्यों में उतार - चढ़ाव न होकर स्थिरता रहती है। इससे मध्यस्थों को हानि की सम्भावनाएँ नहीं रहती हैं।

(8) विज्ञापन उपभोक्ताओं को उत्पाद सम्बन्धी अनेक सूचनाएँ देते हैं।

(4) समाज को लाभ :-

(1) विज्ञापन में अनेक लेखकों, कलाकारों एवं विशेषज्ञों की आवश्यकता पड़ती है जो कि संगठित होकर एक विज्ञापन एजेंसी का निर्माण करते हैं जिनमें बहुत से कर्मचारी कार्य करते हैं। ये संस्था लोगों को विज्ञापन से जीविका अर्जित कराती है।

(2) विज्ञापन मध्यस्थों की संख्या में कमी करता् है और उपभोक्ता एवं विक्रेता का सीधा सम्पर्क स्थापित कराता है जिससे विपणन व्ययों में कमी होती है और उपभोक्ता को कम मूल्य पर उत्पाद मिल जाता है।

(3) विज्ञापन उत्पादों का उपयोग बढ़ाता है जिससे समाज के रहन-सहन में स्तर वृद्धि होती है।

NMDC-

(4) विज्ञापन स्वस्थ प्रतिस्पर्द्धा को जन्म देता है जो व्यवसाय के विकास के लिए लाभकारी है।

(5) समाचर-पत्रों का विज्ञापनों से अपनी कुल आय का लगभग 75 प्रतिशत मिलता है। शेष 25 प्रतिशत समाचार-पत्र पढ़ने वालों से मिलता है। इस प्रकार विज्ञापन समाचार-पत्रों भी कम मूल्य पर मिल जाते हैं।

(6) विज्ञापन एक देश के आर्थिक विकास में भारी योगदान देता है। विज्ञापन के कारण ही उद्योगों का विकास होता है तथा नये-नये उद्योग स्थापित होते हैं।

जिस प्रकार सिक्के के दो पहलू होते हैं उसी प्रकार महत्व के साथ-साथ हमें इसकी आलोचनाओं को समझ लेना चाहिए जो कि सिक्के का दूसरा पहलू है। कुछ लोग अग्रलिखित कारणों के आधार बनाकर इसकी आलोचना करते हैं।

(1) अधिकांश विज्ञापनों से ऐसे तर्क दिये जाते है जिनका आम समाज विरोध करता है और यह उसके लिए अरूचिपूर्ण हो जाते हैं।

(2) विज्ञापन प्रायः उपभोक्ता की बुद्धि को तुच्छ बताकर अपने दावों को सही बताने का प्रयास करते हैं।

(3) अधिकतर विज्ञापनों का उद्देश्य मानवीय भावनाओं और विचारों का लाभ उठाना होता है।

(4) विज्ञापन उपभोक्ताओं के मन में ऐसे उत्पादों के प्रति लालसा पैदा करता है। जिसे वो कभी नहीं जानते थे किन्तु आप वे उससे सुपरिचित हैं। इस दशा में उनके मन में असंतोष जागृत होता है।

(5) विज्ञापनदाता ही अधिकांश प्रसार माध्यमों के राजस्व का आय के स्रोत है, अतः इनका विज्ञापनदाता द्वारा प्रभावित होना स्वाभाविक विज्ञापनदाताओं पर प्रसार माध्यमों की आर्थिक निर्भरता उनकी स्वतंत्रता एवं निष्पक्ष निर्णय को क्षमता को कुप्रभावित करते हैं। अतः विज्ञापन प्रसार माध्यमों को प्रभावित करते हैं जिस कारण समय में ये आलोचकों का बिन्दु हो जाते हैं।

(6) आम उपभोक्तागण यह विश्वस्त करते हैं कि विज्ञापनों से कीमतों में वृद्धि होती है। उत्पादनकर्ता अपने विज्ञापन का खर्च भी अपने उत्पाद के खर्च में जोड़कर उपभोक्ताओं से वसूलने का कार्य करते हैं।

(7) यह सर्वविदित तथ्य है कि बड़ी-बड़ी व्यापारिक कम्पनियों विज्ञापन के माध्यम से अपने ब्रांड की प्रतिभा निर्मित कर लेती है जिससे छोटी-छोटी कम्पनियों का बाजार में टिक पाना सम्भव नहीं होता तथा इरसके एकाधिकार को बढ़ावा मिलता है।

NIDC

2.3 विज्ञापन के विभिन्न प्रकार

विज्ञापन कितने प्रकार का होता है, एक विपणन प्रबंधक को समझना आवश्यक होता है। इसका कारण यह है कि प्रत्येक बार विज्ञापन का उपयोग भिन्न उद्देश्यों के लिए किया जाता है। जैसा उद्देश्य होता है उसी के अनुरूप ही विज्ञापन का निर्माण किया जाता है। मुख्य विज्ञापन निम्नलिखित है :-

(i) उत्पाद एवं संगठनात्मक विज्ञापन :- उत्पाद विज्ञापन में उत्पाद के बारे में सूचना दी जाती हैं जिसका उद्देश्य किसी उत्पाद के विशेष का विक्रय है। यहाँ पर उत्पाद शब्द में सेवा भी सम्मिलित है। उत्पाद विज्ञापन तीन प्रकार के होते हैं-

(1) मार्ग दर्शन :-

यह वह विज्ञापन है जो उत्पाद के जीवन-चक्र की प्रथम अवस्था में किया जाता है। इसमें उपभोक्ता की भावनाओं को जगाने की कोशिश की जाती है। इसका उद्देश्य किसी उत्पाद के सम्बन्ध में सूचना देना है। इसमें किसी ब्राण्ड विशेष के लिए विज्ञापन नहीं किया जाता है। उदाहरण के लिए मोबाइल फोन अब प्रारम्भ में बाजार में आया तो विज्ञापन किसी विशेष उद्देश्य के लिए नहीं किया गया बल्कि उपभोक्ताओं की भावनाओं को जगाने के लिए किया जाता था।

(2) प्रतियोगी :-

यह उत्पाद के जीवन चक्र की परिपक्वता की स्थिति में किया जाता है। इसमें किसी ब्राण्ड विशेष को क्रय करने पर जोर दिया जाता है और इसके लिए उस ब्राण्ड की विशेषताओं पर अधिक जोर दिया जाता है।

(3) धारणा शक्ति :-

यह विज्ञापन उस समय लाभकारी रहता है जबकि उत्पाद विक्रय गिर रहा हो। इस विज्ञापन का उद्देश्य उपभोक्ता को उत्पाद का नाम या दिलाते रहना है। यह एक प्रकार का स्मरण दिलाने वाला विज्ञापन कहलाता है।

इसी प्रकार संगठनात्मक विज्ञापन वे विज्ञापन हैं जिनमें उत्पाद विशेष का नाम नहीं होता है लेकिन उपभोक्ताओं से अपील की जाती है कि कम्पनी की मुहर अवश्य पहचान ले जैसे- साबुन बनाने वाली बड़ी कम्पनी कभी-कभी ऐसा विज्ञापन करती है। इसका उद्देश्य कम्पनी की ख्याति को बनाना है। यह विज्ञापन भी तीन प्रकार का होता है :-

(1) समर्थक संगठनात्मक विज्ञापन :- यह विज्ञापन उपभोक्ताओं को आकर्षित करने के लिए समर्थन सम्बन्धी क्रय उद्देश्यों को उकेरता है। उत्पाद क्रय उद्देश्यों को नहीं उभारता है। जैसे, निर्माता द्वारा नयी साख की नीति का विज्ञापन करना या सुपुर्दगी के नये ढंग को बताना आदि।

NMC-130

(2) जनसम्पर्क संगठनात्मक विज्ञापन :- इस प्रकार के विज्ञापन का उपयोग संस्था की ख्याति बढ़ाने के लिए किया जाता है और इसके लिए जनता को सूचनाएँ दी जाती है जैसे-सहारा ग्रुप ने राष्ट्रीय बाढ़ कोष ने 20 लाख रुपये दान में दिये हैं।

(3) जन-सेवा संगठनात्मक विज्ञापन :- ऐसे विज्ञापन जन-सेवा के कार्यों में सहयोग करने के लिए किये जाते हैं जैसे Red Cross को दान देकर सहायता कीजिए।

(II) अधारभूत एवं विशिष्ट माँग विज्ञापन :-

यदि विज्ञापन का उद्देश्य किसी श्रेणी का उत्पाद के लिए केवल आधारभूत माँग उत्पन्न करना होता है तो इसे आधारभूत माँग विज्ञापन द्वारा किया गया। यह वस्तु के प्रयोग को बढ़ाने के लिए किये जाते हैं किसी विशेष कम्पनी के उत्पाद की बिक्री के लिए नहीं।

यदि किसी विज्ञापन का उद्देश्य एक विशिष्ट कम्पनी की एक विशेष उत्पाद की माँग को बढ़ावा देना है तो ऐसे विज्ञापन को विशिष्ट माँग विज्ञापन कहते हैं। उदाहरण के लिए फिलिप्स या एल0 जी0 कम्पनी के ए0 सी0 के विज्ञापन।

(III) प्रत्यक्ष कार्य एवं अप्रत्यक्ष कार्य विज्ञापन :-

प्रत्यक्ष कार्य विज्ञापन ऐसा विज्ञापन है जिसका उद्देश्य तुरन्त उत्तर प्राप्त करना होता है। जैसे यदि विज्ञापन में कूपन छाप दिया जाता है और उपभोक्ताओं से आग्रह किया जाता है कि वे कूपन को काटकर और भरकर भेज दें जिससे मुफ्त नमूना उनको भेजा जा सके। अप्रत्यक्ष विज्ञापन का उद्देश्य दीर्घकाल में किसी वस्तु की माँग में वृद्धि करना है। इसमें उत्पाद की सूचना दी जाती है और उसके गुणों का वर्णन किया जाता है। इस सबका प्रभाव यह होता है कि ब्राण्ड पर अनुकूल प्रभाव पड़ता है।

(IV) राष्ट्रीय एवं स्थानीय विज्ञापन :-

राष्ट्रीय विज्ञापन वह विज्ञापन है जो निर्माताओं, थोक व्यापारियों, अन्य प्रकार के उत्पादों द्वारा राष्ट्रीय स्तर के अखबारों में किया जाता है। फुटकर विक्रेताओं द्वारा जो विज्ञापन किया जाता है वह स्थानीय विज्ञापन कहलाता है।

(V) उपभोक्ता, औद्योगिक व व्यापारिक विज्ञापन :-

उपभोक्ता विज्ञापन वह है जिसका उद्देश्य उपभोक्ता को आकर्षित करना है। यहाँ उपभोक्ता से तात्पर्य उस उपभोक्ता से है जो व्यापारिक उद्देश्य के लिए उत्पाद न खरीद कर स्वयं उपभोग के लिए उत्पाद खरीदता है। औद्योगिक विज्ञापन उद्योगों को उत्पाद प्रयोग करने के लिए प्रेरित करता है। व्यापारिक विज्ञापन, वे विज्ञापन हैं जो मध्यस्थों को उत्पाद बेचने के लिए प्रेरित करते हैं। मध्यस्थों में थोक विक्रेता फुटकर विक्रेता, डीलर आदि सभी शामिल है।

MDC-130

2.4 विपणन कार्यक्रम तथा उसका नियंत्रण

प्रत्येक संस्था विक्रय बढ़ाने के उद्देश्य से विज्ञापन के विभिन्न प्रकारों का उपयोग करती है। अपने विज्ञापन कार्यक्रम का नियंत्रण करती है। इस कार्यक्रम में सबसे पहले तो विज्ञापन उद्देश्य निर्धारित किये जाते हैं, फिर वह निश्चित किया जाता है कि विज्ञापन पर कितना व्यय होना है। इसको विज्ञापन विनियोजन के नाम से भी जाना जाता है। कार्यक्रम पर जितना व्यय होता है वही उसकी अन्तिम सीमा होती है। यह सीमा ही विज्ञापन कार्यक्रम पर नियंत्रण करती है। साधारणतया उसमें अधिक व्यय नहीं किया जा सकता है। इस सीमा को निर्धारित करने के लिए विज्ञापन बजट निर्माण किए जाते हैं। छोटे व्यापारिक संस्थान अपने विज्ञापन व्यय हेतु कोई बजट निर्माण नहीं करते हैं, लेकिन बड़ी संस्थाएँ बजट में निम्नलिखित मद का निर्माण करती है :-

(1) प्रशासनिक व्यय :- इसमें विज्ञापन विभाग के प्रशासनिक व्यय सम्मिलित किये जाते हैं, जैसे विज्ञापन प्रबन्धक व उसके अन्य सहायकों के वेतन भत्ते एवं यात्रा व्यय आदि, तथा उस विभाग के बिजली, स्टेशनरी, पोस्टेज, व टेलीफोन,

आदि के व्यय।

(2) माध्यम लागतः- इसमें विज्ञापन जिन साधनों में कराया जाता है। उन साधनों को जो भुगतान करना पड़ेगा उसकी अनुमानित लागत इसमें रखी जाती है, जैसे समाचार पत्र-पत्रिकाओं को दी जाने वाली फीस, इसी प्रकार रेडियो, टेलीविजन, ट्राम, बस, रेल, आदि को दिये जाने वाले व्यायों को भी इसी के अन्तर्गत रखा जाता है। विज्ञापन बजट का यह सबसे भारी भाग होता है। इसका कारण यह है कि विज्ञापन बजट की अधिकांश रकम इसी मद पर व्यय करनी पड़ती है।

(3) विज्ञापन उत्पादन व्यय :- विज्ञापन करने के लिए एक विज्ञापन प्रति बनानी पड़ती है। जिसमें विज्ञापन का ब्लाक बनाया जाता है, यदि विज्ञापन छपा हुआ होता है। लेकिन यदि विज्ञापन टेलीविजन से होता है तो उसके लिए फिल्म बनानी होती है। इसी प्रकार रेडियों से विज्ञापन कराते समय पहले से संवाद तैयार करने पड़ते हैं। इन सब में व्यय होता है जो इस मद में रखा जाता है।

(4) अनुसंधान :- विज्ञापन अनुसंधान पर किया जाने वाला व्यय इसमें आता है। पूर्व परीक्षण के बाद परीक्षण इसके अंग है? इसमें विज्ञापन की सार्थकता का मूल्यांकन किया जाता है।

अब प्रश्न यह उठता है कि विज्ञापन बजट में राशि का निर्धारण किस प्रकार किया जाये? इसी बात को इस प्रकार भी कहा जा सकता है कि विज्ञापन बजट का स्वरूप किस प्रकार निर्धारित किया जाय? इसके निर्धारण के निम्न तरीके हो सकते हैं:-

NMDC-130

(1) विक्रय प्रतिशत विधि :-

विज्ञापन बजट बनाने का यह बहुत पुराना तरीका है जिसको विस्तृत रूप से अपनाया जाता है। इसमें बजट बनाने का आधार विक्रय होती है। यह बिक्री या तो पिछले वर्ष की होती है या आगे आने वाले वर्ष की भावी बिक्री का अनुमान होता है जिनको क्रमशः भूतकाल का विक्रय तथा भावी विक्रय कहते हैं। कुछ संस्थाएँ विज्ञापन बजट दोनों प्रकार की बिक्री को आधार मानकर तैयार करती हैं।

इस विधि में विज्ञापन बजट की राशि भावी या पिछली विक्रय के एक प्रतिशत के रूप में निर्धारित की जाती है, यह प्रतिशत संस्था के नीति-निर्धारक के द्वारा निर्धारित किया जाता है, जो संस्थाओं से भिन्न हो सकते हैं। इस विधि की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इसमें विज्ञापन व्यय विक्रय बढ़ने पर बढ़ते हैं और घटने पर स्वतः घटते हैं। इसका तात्पर्य यह है कि व्ययों का संस्था की बिक्री से सम्बन्ध बना रहता है। इस विधि में अन्य विज्ञापन करने वालों से कोई सम्बन्ध नहीं रहता है और विज्ञापन युद्ध शुरू नहीं होता है। यह तरीका प्रबन्धकों को यह विचार करने के लिए विवश कर देता है कि वे विज्ञापन लागत, विक्रय मूल्य व प्रति इकाई लाभ में संबंध बनाये रखें। विभिन्न कारणों

से यह तरीका अच्छा नहीं माना जाता है-

(i) विज्ञापन व्यय के लिए विक्रय का प्रतिशत स्थायी नहीं रहता। संस्थाओं के द्वारा अपनी आवश्यकताओं के अनुसार इसको घटाया-बढ़ाया जाता रहता है जोकि संस्था के कोषों पर आधारित रहता है।

(ii) यदि व्यापारिक चक्र के कारण मूल्यों में घटा बढ़ी होती है तो इसके लिए इस पद्धति में कोई अवसर नहीं है कि व्यय को घटा-बढ़ाकर अवसर का लाभ उठाया जा सके।

(iii) यह पद्धति इस बात पर आधारित है कि विज्ञापन को विक्रय के पीछे चलना है, जबकि वास्तविक यह है कि विक्रय को विज्ञापन के पीछे चलना चाहिए,

(iv) इस तरीके को अपनाने में विज्ञापन के लिए दीर्घकालीन योजना नहीं अपनायी जा सकती है क्योंकि बिक्री कभी भी नहीं रहती है,

(v) प्रतिशत चुनाव का आधार तर्कयुक्त नहीं है। यह प्रतिशत मनचाहे ढंग से निर्धारित किया जाता है।

(2) आवश्यतानुसार विधि :

विज्ञापन बजट बनाने का यह दूसरा तरीका है। इसमें विज्ञापन बजट की राशि संस्था द्वारा अपनी क्षमता को देखते हुए निर्धारित की जाती है। साधारणतया संस्था के अन्य व्ययों को पूरा करने के बाद यदि कुछ बचता है तो विज्ञापन के लिए दे दिया जाता है। इसका तात्पर्य यह है कि इसमें विज्ञापन व्यय व विज्ञापन प्रभाव के महत्व को नहीं समझा जाता है।

NMDC-1

तर्क की दृष्टि से यह तरीका उचित है क्योंकि जितनी क्षमता है उतना ही व्यय निर्धारित किया जाता है, लेकिन व्यावहारिक दृष्टि से यह तरीका ठीक नहीं है और इसमें कुछ कमियाँ हैं :

(i) इसके अपनाने में विज्ञापन की दीर्घकालीन पद्धति या नीति नहीं अपनायी जा सकती है,

(ii) इसमें व्यवसाय के अवसरों की उपेक्षा की जाती है। इसका तात्पर्य यह है कि यदि कोई अवसर विज्ञापन का लाभ प्राप्त करने का है जो उसका लाभ संस्था प्राप्त नहीं कर सकती है क्योंकि अतिरिक्त व्यय को सहने करने की क्षमता संस्था में नहीं है।

(3) प्रतिस्पर्द्धा क्षमता विधि :-

यदि कोई संस्था बाजार में बराबरी चाहती है तो प्रतिस्पर्द्धा करने वाली संस्था जितना विज्ञापन बजट बनाती है उसके बराबर ही वह अपना विज्ञापन बजट भी बनाती है। इसी को प्रतिस्पर्द्धा क्षमता विधि कहते हैं। इस विधि के अपनाने में यह धारणा है कि बाजार हिस्से व विज्ञापन व्ययों में सम्बन्ध होता है।

इस पद्धति को अपनाने के पीछे यह तर्क है कि इसमें विज्ञापन युद्धों की रोकथाम हो जाती है तथा प्रतिस्पद्धियों के व्यय उद्योग के सामूहिक चिन्तन का प्रतिनिधित्व करते हैं। लेकिन इसके विपरीत भी कुछ तर्क दिये जाते हैं-

(i) इसमें व्ययों को निर्धारित करने का कोई तर्कसंगत ढंग से नहीं है। प्रत्येक संस्था के उद्देश्य, साधन, अवसर तथा ख्याति भिन्न-भिन्न होती है। इसलिए एक संस्था का बजट, दूसरी संस्था के लिए अनुपालन के योग्य नहीं होता है।

(ii) यह कहना भी कठिन है कि प्रतिस्पर्द्धा करने वालों द्वारा विज्ञापन व्यय में समता करने से उद्योग विज्ञापन व्ययों में स्थिरता आ जायेगी।

(iii) प्रतिस्पर्द्धा करने वाले को व्ययों को पता आसानी से नहीं लगता है।

(iv) इस पद्धति के अपनाने में निर्माता द्वारा कोई दीर्घकालीन योजना नहीं बनायी जा सकती है।

(4) लक्ष्य एवं विशेष कार्य विधि :- यह सबसे अच्छा तरीका है। इसमें तीन कदम उठाने पड़ते हैं-

(i) सर्वप्रथम विज्ञापन उद्देश्य निर्धारित किये जाते हैं। यह उद्देश्य कुल विक्रय, लाभ, बाजार में हिस्सा आदि के सम्बन्ध में हो सकते हैं। इसका तात्पर्य यह है कि इसमें पहले यह निर्धारित किया जाता है कि हमारा कितना विक्रय करने का उद्देश्य है या हम कितना लाभ चाहते हैं या हम कितना लाभ चाहते हैं या उत्पाद के कुल बाजार में से हम कितना हिस्सा चाहते हैं, आदि।

(iii) विज्ञापन पर कितना व्यय करना होगा उसकी गणना रुपयों में की जायेगी। अब सही रकम विज्ञापन बजट में निर्धारित कर दी जायेगी।

विज्ञापन बजट निर्धारित करने का यह सबसे अच्छा व तर्कयुक्त साधन है। यही कारण है कि यह सबसे अधिक अपनाया जाता है। लेकिन दोष यह है कि इसमें इस बात पर जोर नहीं दिया जाता है कि अमुक उद्देश्य लागत की दृष्टि से ग्रहण करने योग्य है अथवा नहीं। इसमें वास्तविकता यह है कि उद्देश्यों का मूल्यांकन उनकी लागतों को ध्यान में रखकर किया जाना चाहिए।

(5) सीमान्त आगत विधि :-

यह तरीका विक्रय व विज्ञापन के सम्बन्ध पर आधारित है। इसमें विभिन्न विक्रय व लाभों के साथ सम्बन्ध पर विचार करते हैं और अधिकतर लाभ के बिन्दु को निर्धारित कर लेते हैं। लेकिन इसमें कठिनाई यह है कि विक्रय का विज्ञापन के साथ सम्बन्ध स्थापित करना कठिन है। इसी कारण सीमान्त आय निकालना कठिन हो जाता है।

NMC-133

2.5 विज्ञापन माध्यम, प्रकार, तथा मूल्यांकन :-

विज्ञापन मे माध्यम शब्द के प्रयोग से तात्पर्य होता है वह प्रसार माध्यम जिसके द्वारा विज्ञापनदाता का संदेश लक्षित जनसमूह तक पहुँचाता है। इसमें संदेह नहीं है कि अच्छे से अच्छा विज्ञापन संदेश भी निष्फल हो जाएगा, यदि इसे सुव्यवस्थित तरीके से, सही समय पर और सही जनसमुदाय को न प्रस्तुत किया जाए। यहाँ यह बात भी ध्यान देने योग्य है कि विज्ञापन पर आने वाले व्यय का सबसे बड़ा विज्ञापन माध्यमों में स्थान तथा समय को खरीदने पर आता है। यह भी सत्य है कि विज्ञापन को अधिक प्रभावी बनाने में संदेश के साथ माध्यम की भी उतनी ही भूमिका निभाती है।

आइये अपने अध्ययन के उद्देश्य से विभिन विज्ञापन माध्यमों को समझने की कोशिश करेंगे। मूलतः विज्ञापन माध्यमों को अग्रलिखित श्रेणियों में विभक्त किया जा सकता है-

(1) मुद्रण माध्यम :-

ऐसा माध्यम जिसमें विज्ञापन का प्रारूप छपा हुआ होता है और उपभोक्ता उसे पढ़ने के बाद किसी कम्पनी के उत्पाद के प्रति आकर्षित होता है। इसके अन्तर्गत निम्न माध्यम आते हैं :-

NMDC-130

(क) प्रेस माध्यम :-

प्रेस माध्यम के अंतर्गत समाचार-पत्र तथा पत्रिकाएँ आदि आते हैं। समाचार-पत्रों तथा पत्रिकाओं में मुख्य अंतर उनके प्रकाशन के समय से संबंधित है। समाचार-पत्र प्रतिदिन प्रकाशित किए जाते हैं जबकि पत्रिकाओं का प्रकाशन सामयिक होता है। जैसे- साप्ताहिक, पाक्षिक, मासिक, त्रैमासिक अथवा अर्धवार्षिक। लेकिन दोनों ही अवस्थाओं में संदेश मुद्रित शब्दों के माध्यम से पहुँचाया जाता है तथा कई बार साथ में चित्र तथा तस्वीरे भी दे दी जाती है। मुद्रित शब्दों तथा संलग्न चित्रों को जितना भी संभव हो उतना ही आकर्षक, अनुप्रेरक तथा सूचनात्मक बनाया जा सकता है। लेकिन समाचार-पत्रों तथा पत्रिकाओं के अपने कुछ विशिष्ट लक्षण होते हैं जिनका वर्णन नीचे किया जा रहा है।

(ख) समाचार-पत्र :-

विभिन्न भाषाओं में प्रकाशित होने वाले समाचार-पत्र शिक्षित जन-समूह द्वारा व्यापक एवं नियमित रूप में पढ़े जाते हैं। समाचार-पत्र पढ़ना शहरों तथा नगरों के अधिकतर लोगों की तथा गाँवों के कुछ साक्षर लोगों की तो प्रतिदिन की आदत सी हो गई है। कई लोग समाचार-पत्र में दिए जाने वाले विज्ञापनों में अभ्यस्त हो चुके हैं तथा उन्हें सूचनाओं के स्त्रोतों के रूप में ध्यान से पढ़ते हैं। भारत में कुछ राष्ट्रीय दैनिक पत्रों का प्रचलन तो लाखों की संख्या में है। क्षेत्रीय भाषाओं में प्रकाशित किए जाने वाले

समाचार-पत्र भी व्यापक प्रचलन में है तथा कुछ का प्रचलन तो एक से अधिक राज्यों में है। इस प्रकार विज्ञापन के माध्यम के रूप में समाचार-पत्र एक बहुत बड़ी संख्या में लोगों तक संदेश पहुँचाते हैं। दूसरे, समाचार-पत्रीय विज्ञापन की लागत रेडियो, टेलीविजन आदि अन्य माध्यमों द्वारा किए गए विज्ञापन की लागत से कम होती है। विज्ञापन के लिए कितने स्थान का उपयोग करना है उसके संबंध में निर्णय आवश्यकता तथा संबंधित लागत के अनुरूप लिया जा सकता है। तीसरे, यदि आवश्यक हो तो समाचार-पत्र विज्ञापन को प्रतिदिन दोहराने की सुविधा भी प्रदान करते हैं। इसके अतिरिक्त शीघ्रता की स्थिति में अधिक समय नष्ट किए बिना विज्ञापन छपवा देना भी संभव हो सकता है। अंत में, जिन लोगों तक संदेश पहुँचाना है उन्हें ध्यान में रखते हुए उपयुक्त समाचार-पत्र का चयन करना संभव होता है। यदि राष्ट्र के समस्त लोगों तक संदेश पहुँचाना हो तो एक ऐसे समाचार-पत्र का चयन करना चाहिए जिसका प्रचलन राष्ट्रव्यापी हो। लेकिन यदि संदेश केवल एक विशेष क्षेत्र के लोगों तक ही पहुँचाना हो तो उस क्षेत्रीय भाषा में प्रकाशित होने वाले समाचार - पत्र का चयन किया जा सकता है। चूंकि समाचार-पत्र, जन-साधारण द्वारा पढ़े जाते हैं, अतः इनका उपयोग सभी लोगों द्वारा उपभोग की जाने वाली वस्तुओं के लिए एक उपयुक्त माध्यम के रूप में किया जा सकता है। कुछ लोग प्रातः समाचार-पत्र पढ़ते हैं और फिर बाद में उन्हें अलग से रख देते हैं। इसी कारण समाचार-पत्रों में दिए गए विज्ञापन का जीवन-काल बहुत छोटा होता है।

NMDC-30

(ग) पत्रिकाएँ :-

पत्रिकाओं को आवधिक समाचार-पत्र भी कहा जा सकता है क्योंकि उनका प्रकाशन निश्चित समय के अंतरालों पर किया जाता है, जैसे-साप्ताहित, पाक्षिक मासिक आदि। पाठकों के विभिन्न वर्गों के लिए विभिन्न प्रकार की पत्रिकाएँ प्रकाशित की जाती हैं। उदाहरण के लिए इंडिया टुडे, आदि कुछ लोकप्रिय सामान्य पत्रिकाएँ हैं जिनमें लेख, समाचार, कहानियाँ आदि प्रकाशित की जाती हैं। बच्चों के लिए अलग पत्रिकाएँ होती हैं जिनमें उनकी पसंद की कहानियाँ प्रकाशित की जाती हैं जैसे टारगेट, चंदामामा आदि। व्यापारियों तथा अधिकारियों के लिए भी बिजनेस इंडिया, फोरच्यून, कॉमर्स आदि पत्रिकाएँ प्रकाशित की जाती है। इसी प्रकार स्पोटर्स वीक, स्पोटर्स स्टार आदि खेल पत्रिकाएँ हैं, फेमिना वीमेन्स, एरा आदि महिलाओं की पत्रिकाएँ हैं, इंडियन जर्नल ऑफ मार्केटिंग, इंडियन मेडिकल जर्नल आदि व्यावसायिक पत्रिकाएँ हैं, स्टार ऐंड स्टाइल फिल्म फेयर आदि फिल्मी पत्रिकाएँ हैं,

प्रचलन की दृष्टि से पत्रिकाएँ उतने व्यापक रूप से नहीं पढ़ी जाती जितनी की समाचार-पत्र। दूसरी ओर प्रत्येक पत्रिका केवल एक विशिष्ट वर्ग के पाठकों द्वारा ही पढ़ी जाती है। चूंकि पत्रिकाएँ साधारणतया एक लंबे समय तक पढ़ी जाती है, इसलिए पत्रिकाओं का जीवन-काल समाचार-पत्र की अपेक्षा अधिक होता है। अतः विज्ञापनकर्ता

को जिन लोगों तक विज्ञापन पहुँचाना है, उसी के अनुरूप माध्यम के रूप में पत्रिकाओं का चयन किया जाता है। उदाहरण के लिए चिकित्सा संबंधी पुस्तकों, औषधियों, शल्य चिकित्सा संबंधी उपकरणों चिकित्सा संबंधी उपकरणों आदि के विज्ञापन साधारणतया चिकित्सा संबंधी पत्रिकाओं में दिए जाते हैं। कार्यालय उपकरण कम्प्यूटर आदि के निर्माता अपने उत्पादों का विज्ञापन व्यावसायिक पत्रिकाओं, व्यापारिक पत्रिकाओं आदि में देते हैं। कुल मिलाकर रेडियो, टेलीविजन आदि माध्यमों की अपेक्षा पत्रिकाओं में विज्ञापन देना अधिक सस्ता पड़ता है।

लेकिन पत्रिकाओं की कुछ सीमायें भी होती हैं। इनमें से एक का संबंध प्रकाशन के समय से है जो कि आवधिक होता है। यद्यपि प्रकाशित विज्ञापनों का जीवन काल लंबा होता है लेकिन उनका प्रकाशन नियत अवधि पर ही किया जाता है। समाचार-पत्रों की तरह प्रतिदिन नहीं किया जाता। एक अन्य सीमा है-विज्ञापन के आकार एवं रचना के चयन में लोच का अभाव। रचना उतनी शीघ्रता से नहीं बदली जा सकती जितनी कि समाचार-पत्रों में। इसके अतिरिक्त किसी पत्रिका के प्रचलन से उस पत्रिका के पाठकों की संख्या का तथा उनके द्वारा उसे पढ़ने में लगाए गए समय का पता नहीं चलता। एक सीमित प्रचलन वाली पत्रिका एक व्यापक प्रचलन वाली पत्रिका की अपेक्षा अधिक पूर्ण रूप से पढ़ी जा सकती है अथवा अधिक लोगों द्वारा पढ़ी जा सकती है।

NMDC-130

(2) प्रसारण माध्यम :-

ऐसे माध्यम जिनका श्रव्य व दृश्य दोनों के समन्वयनों के माध्यम से विज्ञापन कर उपभोक्ताओं को आकर्षित किया जाता है। इसके प्रमुख उपकरण है :-

(i) रेडियो, (ii) टेलीविजन।

रेडियो एवं टेलीविजन में मुख्य अंतर यह है कि रेडियो श्रव्य माध्यम है जबकि टेलीविजन श्रव्य-दृश्य दोनों गुणों से युक्त है। टेलीविजन में दृश्य एवं चलचित्र प्रभाव रेडियो में उपलब्ध नहीं होता। आइए, इन दोनों माध्यमों की विशेषताओं की विस्तार से व्याख्या करें।

(क) रेडियो :-

कम मूल्य पर रेडियो की उपलब्धता के कारण कम आय वाले लोग भी रेडियों खरीद सकते हैं। इसी कारण भारत में विज्ञापन के माध्यम के रूप में रेडियों प्रसारण लोकप्रिय हो चुका है। भारत में बहुत अधिक संख्या में लोगों के पास अपने रेडियो हैं। इसी कारण रेडियो प्रसारण के माध्यम से विज्ञापन आग्रह को देश के विभिन्न भागों में जनसाधारण तक आसानी से पहुँचाया जा सकता है। भारत में विज्ञापनों का प्रसारण आल इंडिया रेडियो (विविध भारती कार्यक्रम) द्वारा विशिष्ट चैनलों पर किया जाता है। रेडियो पाकिस्तान तथा रेडियो सिलोन भी भारतीय भाषा के लिए विज्ञापनों का प्रसारण

करते हैं। जन माध्यम के रूप में रेडियो प्रसारण जन आग्रह वाली विभिन्न उपभोक्ता वस्तुओं जैसे चित्रपट, बिजली, के पंखे, रेफ्रिजरेटर, सिलाई मशीन, चमड़े की वस्तुऐं यात्रा में काम आने वाले थैलों आदि के लिए अत्यन्त उपयुक्त है। रेडियो द्वारा विज्ञापन का लाभ यह है कि एक श्रव्य माध्यम होने के कारण इसका संदेश प्राप्त करने के लिए शिक्षा की आवश्यता नहीं होती। श्रोताओं का साक्षर होना भी आवश्यक नहीं है। इसके अतिरिक्त मुद्रित संदेश की अपेक्षा मौखिक रूप से संप्रेषित संदेश अधिक प्रभावशाली होता है। रेडियो द्वारा विज्ञापन की सीमाएँ इस प्रकार हैं-

1) यह समाचार-पत्रीय माध्यम की अपेक्षा अधिक महँगा होता है,

2) विज्ञापन का जीवन बहुत छोटा होता है,

3) संदेश को विस्तार में याद रखना कठिन होता है।

(ख) टेलीविजन :-

पिछले पंन्द्रह वर्षों से अधिक से अधिक लोगों तक संदेश पहुँचाने के माध्याम से रूप में टेलीविजन का महत्व बहुत बढ़ गया है। लेकिन विज्ञापन के माध्यम के रूप में इसका महत्व देश के अधिकांश दूरदराज के भागों तक पहुँचाने के लिए अधिकाधिक प्रसारण केन्द्रों की स्थापना के साथ तथा उपग्रह प्रसारण के उपयोग के साथ बहुत बढ़ गया है।

NMDC-130

जो व्यक्ति टेलीविजन नहीं खरीद सकते वे भी सामुदायिक केन्द्रों तथा सार्वजनिक स्थानों पर टेलीविजन के कार्यक्रम देख सकते हैं। आजकल इसकी व्यापक पहुँच के कारण तथा दर्शकों पर दृश्य संप्रेषण के प्रभाव के कारण विज्ञापन के माध्यम से टेलीविजन का महत्व बढ़ गया है। इसमें ध्वनि दृष्टि तथा गति का सम्मिश्रण होने के कारण उत्पाद तथा उससे होने वाले लाभों के प्रदर्शन के लिए विज्ञापन के रूप में इनका उपयोग वांछनीय हो गया है। इसी कारण समाचार-पत्रीय माध्यम तथा रेडियो की अपेक्षा यह माध्यम अधिक प्रभावशाली है। इस माध्यम की मुख्य कमी विज्ञापन की भारी लागत है, विशेषकर किसी लोकप्रिय कार्यक्रम के पहले अथवा बाद में जिसे प्रमुख समय कहा जाता है। इसलिए केवल बड़े-बड़े उद्यम ही इस माध्यम का उपयोग करने की स्थिति में होते हैं। इसकी एक अन्य कमी यह है कि किसी वाणिज्यिक विज्ञापन की अवधि केवल कुछ ही सेकेण्ड की होती है। इसके अतिरिक्त इतने कम समय में इतनी बड़ी संख्या में विज्ञापनों को आत्मसात करना दर्शकों के लिए प्रायः कठिन होता है।

(3) प्रत्यक्ष माध्यम :-

प्रत्यक्ष माध्यम विज्ञापनों द्वारा बिना किसी अन्य माध्यम के उपयोग के उपभोक्ता/ग्राहक से सीधे संपर्क किया जाता है और उसका आदेश/समर्थन प्राप्त किया जाता है।

यह विज्ञापनदाता एवं लक्षित उपभोक्ता के बीच दोतरफा विनिमय है। प्रत्यक्ष माध्यम वे हैं, जो इस प्रकार बिना अन्य किसी साधन के सीधे ग्राहकों/उपभोक्ताओं से व्यवहार करते हैं। इनके मुख्य प्रकार प्रत्यक्ष डाक तथा विशिष्ट विज्ञापन सामग्री है।

(क) प्रत्यक्ष डाक :-

संभावित ग्राहकों को डाक द्वारा व्यक्तिगत पत्र भेजना भी विज्ञापन का एक तरीका है जिससे काफी लाभ हो सकता है। ये संप्रेषण अधिकतर विज्ञप्तियों के रूप में होते हैं तथा कई बार इनके साथ सूची-पत्र अथवा मूल्य सूचियाँ भी दी जाती हैं। डाक द्वारा विज्ञाप्ति-पत्र भेजने के पीछे मूल उद्देश्य विज्ञापन का संदेश प्रत्यक्ष रूप से ग्राहकों तक पहुँचाना तथा विश्वसनीय ढंग से विस्तृत जानकारी देकर अपने उत्पाद अथवा सेवा में उनकी रूचि को जागृत करना है। इसके लिए एक डाक सूची तैयार की जाती है तथा व्यक्तिगत शब्दावली का प्रयोग करके सावधानीपूर्वक पत्र का प्रारूप तैयार किया जाता है। व्यक्तिगत संपर्क होने के कारण उस संदेश के अधिक प्रभावकारी होने की आशा रहती है। उसके द्वारा विस्तृत जानकारी दी जा सकती है और इसीलिए अधिक विश्वसनीय भी होती है। बड़े पैमाने पर सार्वजनिक उपयोग वाले उत्पादों के लिए प्रत्यक्ष डाक उपयुक्त माध्यम नहीं है। यह उन उत्पादों के लिए सर्वाधिक उपयुक्त है जहाँ उन लोगों को आसानी से पहुँचाया जा सके, जिनसे संपर्क स्थापित करना है। उदाहरण के लिए औषधि उत्पादों का निर्माण अथवा वितरण करने वाली कंपनी उन चिकित्सकों तथा रसायन शास्त्रियों का आसानी से पहचान सकती है जिन्हें उत्पाद से संबंधित प्रत्यक्ष सूचना दी जाती है। इसी प्रकार पुस्तकों का प्रकाशन करने वाली विश्वविद्यालय के अध्यापकों को आसानी से पहचान सकती है और अपने प्रकाशनों के विक्रय को बढ़ाने के लिए उन्हें विज्ञप्ति-पत्र भेज सकती है लेकिन प्रत्यक्ष डाक सौन्दर्य साबुन, हाथ घड़ी अथवा कलम का विक्रय बढ़ाने के लिए विज्ञापन एक उपयुक्त माध्यम नहीं है। इस प्रकार के उत्पादों के दूर-दूर तक फैले हुए असंख्य उपभोक्ताओं को प्रत्यक्ष डाक द्वारा विज्ञप्ति-पत्र भेजना काफी महंगा भी होगा तथा समय भी बहुत लगेगा। संभावित ग्राहकों को डाक द्वारा भेजी गई पुस्तिकाएँ, सूची-पत्र आदि भी प्रत्यक्ष डाक के अंतर्गत आते हैं। ये भी ग्राहकों के एक चुने हुए वर्ग के लिए उपयुक्त होते हैं।

(ख) विशिष्ट विज्ञापन सामग्री :-

मुफ्त उपहार में दी जाने वाली डायरियाँ, चाबी के गुच्छे, बटुए, पेपरवेट, पेन, कैलेंडर, टीशर्ट इत्यादि सभी विशिष्ट विज्ञापन सामग्री में आते हैं। इसकी विशेषता यह है कि इसमें भेंटकर्ता (विज्ञापनदाता) का नाम व पता छपा रहता है। ऐसा होने के कारण ये उपभोक्ता/ग्राहक को सदैव विज्ञापनदाता एवं उसके संदेश की याद दिलाने का काम करते हैं। इसमें व्यक्तिगत संपर्क का लाभ भी मिल जाता है, परन्तु खर्चीली होने के कारण

NMDC-1

'विशिष्ट विज्ञापन सामग्री' के इस माध्यम को बहुत बड़े पैमाने पर अमल मे लाया व्यवहार्य नहीं है।

इसके अतिरिक्त प्रत्यक्ष साधनों में एक अन्य प्रमुख माध्यम है टेलीफोन निर्देशिका या व्यवसाय विशेष या संघ की निर्देशिकाएँ, टेलीफोन डायरेक्टरी में ''पीले पृष्ठों'' में विज्ञापन देना निर्देशिका विज्ञापन का एक अच्छा उदाहरण है। निगम प्रायोजित पत्रिकाओं में विज्ञापनदाता स्वयं मालिक होता है : जैसे-एयर इंडिया और इंडियन एयरलाइन्स दोनों अपने यात्रियों के उपयोग के लिए विशेष पत्रिकाओं का प्रकाशन करते हैं। इसी प्रकार के प्रकाशन कई होटलों द्वारा निकाले जाते हैं, जिनमें उनके अपने विज्ञापनों के साथ-साथ होटलों, तथा उनमें उपलब्ध सेवाओं का विवरण अपने ग्राहकों तथा सामान्य पाठकों के लाभार्थ दिया जाता है।

(4) बाह्य माध्यम :-

विज्ञापन के बाह्य माध्यम का तात्पर्य उस माध्यम से है जिसका उपयोग घर अथवा कार्यालय के भीतर न होकर बाहर जाते हुए अथवा यात्रा करते हुए लोगों तक पहुँचने के लिए किया जाता है। पुस्तिकाएँ विज्ञापन पत्र, विज्ञापन पट्ट, नियोन चिह्न, विद्युत प्रदर्शन, आदि इस वर्ग के माध्यम के अंतर्गत आते हैं। स्थानीय क्षेत्रों में विक्रय वृद्धि के लिए विज्ञापन के माध्यम के रूप में पुस्तिकाओं (छपे हुए पर्चो) का उपयोग बहुधा किया जाता है। चौराहों, रेलवे स्टेशनों, बस अड्डों, सड़कों के किनारों पर स्थित बाजारी क्षेत्रों आदि से गुजरने वाले लोगों को पुस्तिकाएँ बाँटी जाती हैं। विज्ञापन-पत्र (कागजों पर छपे हुए संदेश) साधारणतया दीवारों, सड़कों पर लगे स्तम्भों, बिजली के खम्भों आदि पर चिपकाये जाते हैं। सार्वजनिक परिवहन के वाहनों जैसे ट्रामों, बसों तथा रेल के डिब्बों के भीतर भी विज्ञापन-पत्र चिपकाये जाते हैं। इन सभी अवस्थाओं में कुछ रकम तथा भुगतान करने पर ही स्थान प्रदान किया जाता है।

नियोन चिन्ह तथा विद्युत प्रदर्शन साधारणतया छतों पर तथा व्यस्त चौराहों पर लगाये जाते हैं ताकि लोगों का ध्यान आकर्षित किया जा सके। ये केवल रात को ही देखें जा सकते हैं। विज्ञापन पट्टों का तात्पर्य ऐसे विशाल तख्तों से हैं जिन पर संदेश लिखा होता है तथा कभी-कभी आदम-कद तस्वीर भी खींची हुई होती है जिन्हें सार्वजनिक स्थानों पर स्थापित कर दिया जाता है। विज्ञापन - पटट जनता का ध्यान आकर्षित करने के लिए विशेष रूप से तैयार किए जाते हैं। चूँकि विज्ञापन-पट्टों का आकार साधारणतया काफी बड़ा होता है, इसलिए विज्ञापन काफी दूर से देखा जा सकता है।

पुस्तिकाओं, विज्ञापन-पत्रों, नियोन चिह्नों, विद्युत प्रदर्शन, विज्ञापन-पट्टों जैसे बाह्य माध्यामों में ध्यानाकर्षण मूल्य का अंश भिन्न-भिन्न होता है। चौराहों आदि से गुजरने वाले जिन लोगों को पुस्तिकाएँ प्राप्त होती हैं, उन पर उनका प्रभाव अस्थायी होता

है क्योंकि उनके मस्तिष्क में कुछ अन्य बातें घूमती रहती हैं। विज्ञापन-पत्रों का दोष यह है कि केवल उन लोगों को ही उनके अस्तित्व की जानकारी हो पाती है जो उन पर ध्यान देते हैं। इसके अतिरिक्त सार्वजनिक स्थानों पर लगाये गए विज्ञापन-पत्रों का जीवन-काल बहुत छोटा होता है क्योंकि या तो उनके ऊपर विज्ञापन चिपका दिए जाते हैं अथवा अन्य विज्ञापन-पत्र चिपकाने वाले अभिकर्ताओं द्वारा उन्हें हटा दिया जाता है। नियोन चिन्ह तथा विद्युत प्रदर्शन साधारणतया अधिक लोगों का ध्यान आकर्षित करते हैं लेकिन ये केवल रात्रि के समय ही प्रभावकारी होते हैं। बड़े आकार तथा महत्वपूर्ण स्थानों पर संस्थापन के कारण विज्ञापन-पट्टों का ध्यानाकर्षण मूल्य अधिकतम होता है।

विज्ञापन-पट्टों के तैयार करने तथा उनकी संस्थापना के लिए आवश्यक भारी प्रारंभिक व्यय के कारण उनकी लागत बहुत अधिक होती है। किसी सार्वजनिक स्थान पर इसकी स्थापना के लिए दिया जाने वाला किराया भी काफी अधिक होता है। नियोन चिह्न तथा विद्युत प्रदर्शनों को तैयार करने तथा उनकी स्थापना की लागत भी काफी अधिक होती है। सार्वजनिक स्थानों पर इनकी स्थापना के लिए दिए जाने वाले किराये के अतिरिक्त नियोन गैस अथवा विद्युत शक्ति के उपयोग के लिए भी बहुत अधिक आवर्ती व्यय करने पड़ते हैं। दीवारों तथा संस्था पर लगाये जाने वाले विज्ञापन-पत्र पर प्रारम्भ में खर्चीले होते हैं। सार्वजनिक परिवहन (बसों तथा रेल के डिब्बों) के भीतर निर्दिष्ट स्थान पर लगाये जाने वाले विज्ञापन-पत्रों के लिए सामयिक प्रकारों का भुगतान करना पड़ता है लेकिन सभी बाह्य माध्यम अधिकांश रूप में रेडियो तथा टेलीविजन द्वारा विज्ञापन की अपेक्षा कम खर्चीले होते हैं।

ऊपर वर्णित माध्यमों में से उपयुक्त माध्यम का चयन करना विज्ञापनदाता के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण एवं दुरूह कार्य है। इसका तात्पर्य यह है कि जानना चाहेगा कि कौन सा माध्यम उनके उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए सर्वोत्तम होगा। सामान्य रूप से एक आदर्श माध्यम के आवश्यक गुण इस प्रकार होना चाहिए :-

1) पहुँच : माध्यम ऐसी होनी चाहिए, जिससे अधिक से अधिक संख्या में लक्ष्यित उपभोक्ताओं तक पहुँचाया जा सके।

2) संदेश : माध्यम ऐसा होना चाहिए जिससे संदेश को समुचित ढंग से उपभोरक्ताओं तक पहुँचाया जा सके।

3) किफायती : माध्यम लागत की दृष्टि से किफायती होना चाहिए जिससे उत्पादकर्ता कम खर्च में अधिक से अधिक लोगों तक पहुँच सके।

4) लचीला : माध्यम ऐसा होना चाहिए, जिससे उत्पाद के आकार, रचना, विन्यास, रंग आदि में परिवर्तन करना सम्भव हो।

5) पुनरावृत्ति के अवसर : माध्यम ऐसे होना चाहिए, जिसमें कुछ समय के अंतरालों पर संदेशों की पुनरावृत्ति की जा सके।

6) उद्देश्य की प्राप्ति - माध्यम ऐसा होना चाहिए, जिसके उपयोग से विक्रय में वृद्धि हो सके।

अब महत्वपूर्ण प्रश्न यह उठता है कि किस माध्यम से सर्वोत्तम मानकर उपयोग किया जाये और किसको छोड़ा जाये? वास्तव में किसी भी एक माध्यम को सभी परिस्थितियों में उपयुक्त नहीं माना जा सकता। इसके लिए हमें एक आदर्श माध्यम की विशेषताओं को ध्यान में रखते हुए प्रत्येक माध्यम का गहन विश्लेषण करना होगा। विभिन्न माध्यमों के तुलनात्मक अध्ययन के लिए अग्रलिखित तालिका को ध्यान से समझना होगा।

तालिका

विज्ञापन माध्यम

आधार	समाचार-पत्र	पत्रिकाएं	रेडियो
पहुँच	शिक्षित लोगों में अधिकतम प्रचलन	शिक्षित लोगों में सीमित प्रचलन	बड़ी संख्या तक पहुँचाता है।
ध्याकर्षण अवधि	एक या दो घंटे की बहुत कम अवधि	एक सप्ताह अथवा इससे अधिक समयावधि	कुछ एक सेकेंड की अवधि
लागत	स्थान के अनुसार परिवर्तन-शील	समाचार-पत्रों की अपेक्षा कम महँगा	समाचार-पत्र एवं पत्रिकाओं से अधिक महँगा
आकार रचना आदि का लोच	अत्यंत लोचदार	समाचार-पत्रों की अपेक्षा कम लोचदार	सीमित लोच जो समय की उपलब्धता पर निर्भर करती है।
उपयुक्तता	जन साधारण द्वारा उपभोग की जाने वाली वस्तुओं के लिए उपयुक्त	औद्योगिक एवं विशिष्ट वस्तुओं के लिए उपयुक्त	जन साधारण उपभोग की जाने वाली वस्तुओं के लिए उपयुक्त
श्रोताओं के चयन की सुविधा	क्षेत्रीय तथा भाषायी चयन संभव	अधिक चयन के लिए सुविधापूर्ण	सीमित/क्षेत्रीय तथा भाषायी चयन में सुविधा
पुनरावृत्ति मूल्य	प्रतिदिन पुनरावृत्ति संभव	प्रकाशन की पुनरावृत्ति पर निर्भर	शीघ्र पुनरावृत्ति पर

टेलीविजन	बाह्य माध्यम	प्रत्यक्ष डाक
रेडियो के श्रोताओं की अपेक्षा दर्शक कम होते हैं	केवल स्थानीय लोगों तक सीमित	केवल डाक सूची के सदस्यों तक सीमित

कुछ सेकेंड की अवधि	संक्षिप्त ध्यानाकर्षण, अनिश्चित	संक्षिप्त ध्यानाकर्षण निश्चित
सबसे अधिक महंगा	विज्ञापन पट्टों को छोड़कर समाचार पत्रों की अपेक्षा कम महंगी होते हैं।	औसत रूप में महंगा, डाक सूची के आकार पर निर्भर
अधिक लागत के कारण सीमित लोच जो समय की उपलब्धता पर निर्भर करती है	औसत लोच जो लागत पर निर्भर करती है।	काफी लोचदार
जनसाधारण द्वारा उपभोग की जाने वाली वस्तुओं के लिए उपर्युक्त	व्यापार चिन्ह के नाम वाली वस्तुओं के लिए उपयुक्त	सीमित बाजार वाली वस्तुओं के लिए उपयुक्त
सीमित/क्षेत्रीय तथा भाषायी चयन में सुविधा	क्षेत्रीय चयन में सुविधा	अधिक चयन सुविधा
शीघ्र पुनरावृत्ति संभव	ग्राहक जब भी इसके समीप से गुजरता है, इसे देखता है	डाक की पुनरावृत्ति पर निर्भर

यदि आप उपरोक्त तालिका का सावधानी पूर्वक अध्ययन करें तो आप पाएंगे कि किसी भी एक माध्यम में आदर्श माध्यम के सभी लक्षण विद्यमान नहीं है। प्रत्येक माध्मय कुछ दृष्टियों से आदर्श है और कुछ अन्य दृष्टियों से नहीं। उदाहरणार्थ समाचार पत्र एवं पत्रिकाओं में व्यापक प्रचलन, दर्शकों के चुनाव की सुविधा आदि गुण है, परन्तु ये अनपढ़ लोगों तक पहुँचाने के लिए उपयोगी सिद्ध नहीं होंगे। टेलीविजन एक दृश्य माध्यम है, जो अत्यंत प्रभावकारी है, किन्तु यह काफी मंहगा होता है। रेडियों का कोई दृश्य प्रभाव नहीं होता। बाह्य माध्यम केवल स्थानीय विज्ञापनों के लिए उपयोगी होते हैं। यदि भावी ग्राहकों की संख्या बहुत अधिक हो तो प्रत्यक्ष डाक उपयुक्त नहीं होती। इस प्रकार कोई एक स्थिति के लिए उपयुक्त हो सकता है। लेकिन अन्य स्थितियों में नहीं। अतः माध्यम का चयन करते समय सतर्क रहने की आवश्यकता होती है तथा स्थिति की आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए उसके अनुरूप माध्यमों का चयन करना चाहिए।

NMDC 130

उपयुक्त माध्यम का चयन बाजार की आवश्यकताओं को माध्यम के सामर्थ्य से आँकने को कहते हैं। हमें किसी ऐसे माध्यम को चुनना होगा, जो बिक्री अथवा छवि प्रतिस्थापना के उद्देश्यों की पूर्ति के लिए सर्वोत्तम और पूर्णतया सक्षम दिखाई दे। किसी माध्यम विशेष का चयन करने से पहले निम्नलिखित कारक को ध्यान में रखना आवश्यक है।

I) विपणन मिश्रण के तत्व :-

जैसा कि हम जानते हैं कि मैकार्थी के अनुसार विपणन मिश्रण के चार प्रकार के तत्वों का संयोजन है। यथा उत्पाद, कीमत, स्थान एवं संवर्धन।

(1) उत्पाद :- यदि आपका उत्पाद तकनीकी अथवा जटिल किस्म का है, तो इसके विज्ञापन में लंबी कापी की आवश्यकता होगी (जिसमें उत्पाद के मुख्य अंगों एवं कार्यप्रणाली आदि की व्याख्या होगी)। इस प्रकार इसके विज्ञापन के लिए सर्वोत्तम माध्यम समाचार पत्र पत्रिकाएँ ही होंगी। ऐसे उत्पाद जिनके प्रभावशाली प्रस्तुतीकरण की आवश्यकता होती है, उनके लिए टी.वी. अधिक श्रेष्ठ सिद्ध होगा जैसे वाहन, महिलाओं के वस्त्रों के विज्ञापन के लिए रंगीन पत्रिकाएँ अधिक उपयुक्त होगी।

(2) कीमत :- प्रायः उत्पाद की कीमत का सीधा संबंध उसके गुणवत्ता से होता है। कीमत जितनी अधिक होगी, उत्पाद उतना ही श्रेष्ठ होगा। अतः ऊंची कीमत वाले उत्पादों के लिए प्रतिष्ठित पत्रिकाओं अथवा टी.वी. पर विज्ञापन देना अधिक लाभदायक होगा, ताकि उसके उच्चकोटि का सही-सही निरूपण हो एवं ग्राहक के हृदय पर उसकी उपयुक्त छाप पड़ सके।

(3) स्थान :- स्थान से अभिप्राय वितरण माध्यमों से है। इसके विज्ञापन माध्यम के चयन पर दो प्रकार से प्रभाव पड़ता है : 1) भौगोलिक पहुँच, और 2) समय (प्रकाश अथवा प्रसारण)

यदि किसी उत्पाद का वितरण देश के केवल एक चुने हुए क्षेत्र में किया जा रहा हो तो टी.वी. के राष्ट्रीय चैनल पर या राष्ट्रीय स्तर पर प्रकाशित पत्र-पत्रिकाओं में इसका विज्ञापन केवल अपव्यय एवं निरर्थक ही सिद्ध होगा। विज्ञापन के प्रकाशन अथवा रेडियो / टी.वी. पर प्रसारण का समय भी पहुत महत्व रखता है। उदाहरणार्थ, उत्पाद के फुटकर व्यापारियों/विक्रेताओं तक पहुँचने के बाद किसी पत्रिका आदि में इसका विज्ञापन श्रेष्ठ फल नहीं देगा। सही समय पर विज्ञापन सहायता उत्पाद पर बिक्री एवं प्रतिष्ठा में बहुत अंतर ला देती है।

(4) संवर्धन :- संवर्धन का आशय संवर्धन मिश्रण के तत्वों अर्थात् विज्ञापन व्यक्तिगत बिक्री, बिक्री संवर्धन एवं प्रचार से है। किसी माध्यम विशेष का चयन इनमें से प्रत्येक पर दिए जाने वाले बल पर निर्भर करेगा। औद्योगिक उत्पादों की बिक्री में व्यक्तिगत विक्रय का बड़ा महत्व होता है। अतः यहाँ केवल चुनिंदा प्रकाशनों/समाचार पत्र-पत्रिकाओं में ही विज्ञापन देना श्रेयस्कर होगा। जैसे-प्रतिष्ठित व्यवसाय से संबंद्ध पत्रिकाएँ अथवा तकनीकी पत्रिकाएँ।

II) विभिन्न माध्यमों की विशेषताएँ :- इनमें निम्नलिखित कारणों का उल्लेख आवश्यक है :-

(1) ग्राहकों के चयन की सुविधा :- विज्ञापनदाता की दृष्टि से एक ही रूचि वाले महत्वपूर्ण ग्राहक समूह तक पहुँच पाने में माध्यम की सापेक्ष सक्षमता को चयन सुविधा कहा जाता है। उदाहरण के लिए 18-20 वर्ष की आयु वर्ग के खिलाड़ियों के लिए टी-

शर्ट व स्पोटर्स शू बनाने वाली कम्पनी के लिए अपने विज्ञापनों का सही माध्यम "क्रिकेट टुडे" तथा इसी प्रकार की खेलों से सम्बन्धित अन्य पत्रिकाएँ होंगी।

(2) भौगोलिक चयन :- इसका अभिप्राय विभिन्न भौगोलिक क्षेत्रों के लोगों तक पहुँच पाने की माध्यम की क्षमता है। बिलबोर्ड तथा बाह्य माध्यमों के विज्ञापनों द्वारा क्षेत्र विशेष में स्थिति ग्राहकों/उपभोक्ताओं तक पहुँचा जा सकता है।

(3) पहुँच :- इसका अभिप्रायः यह है कि एक निश्चित अवधि के दौरान विज्ञापन माध्यम द्वारा विक्रय संदेश कितने लोगों अथवा परिवारों तक पहुँचा। प्रायः पहुँच को हम समाचार-पत्र/पत्रिका की बिक्री संख्या का पर्याय मान लेते हैं। यह नितांत संभव है कि एक ही परिवार में एक ही पत्र आने के बाद ही उसकी पहुँच (पाठकों की संख्या पाँच हो, क्योंकि वे सभी यह पत्र/पत्रिका पढ़ते हैं। प्रसारण माध्यमों में इसी पहुँच को श्रोता वर्ग कहा जाता है।

(4) संदेश की पुनरावृत्ति :- इसका अभिप्राय यह है कि एक व्यक्ति/परिवार के किसी संदेश विशेष से एक निश्चित अवधि के दौरान कितनी बार विज्ञापन संदेश चुना अथवा देखा। जब स्थाई प्रभाव छोड़ना या छवि प्रतिस्थापित करना लक्ष्य हो तो संदेश के प्रकाशन अथवा प्रसारण की कई बार पुनरावृति करनी पड़ती है, जिससे यह ग्राहकों के मन पर अपनी छाप छोड़ सके, या उसे याद कर सके।

(5) प्रकाशन अथवा प्रसारण पर उपयुक्त समय सूचना :- विज्ञापन के अधिकतम प्रभावी होने की सुनिश्चित करने के लिए इसके प्रकाशन अथवा प्रसारण के लिए उपयुक्त समय चुनना भी अत्यन्त आवश्यक होता है। क्या विज्ञापन साल भर दिया जाता रहे अथवा किसी विशेष समय पर दिया जाए। इस प्रश्न पर निर्णय मौसम विशेष, क्रय की पुनरावृत्ति (ग्राहक द्वारा संतुष्ट होने पर), प्रतिस्पर्धा और विज्ञापन बजट आदि तत्वों की तत्कालीन स्थिति को दृष्टि में रखते हुए किया जाता है।

(6) माध्यम लागत :- स्वाभाविक है कि विज्ञापनदाता यह जानना चाहे कि अमुक माध्यम के उपयोग द्वारा विज्ञापन पर कुल कितनी लागत आएगी। प्रसारण माध्यमों में लागत का आकलन प्रसारण समय (अर्थात् प्रति 10 सेकेंड के टी.वी. प्रसारण के हिसाब से) आँकी जाती है, जब कि समाचार पत्रों में यह हिसाब कालम सेंटीमीटर (अर्थात् एक कालम में एक सेंटीमीटर ऊंचाई वाली सामग्री) की दर के हिसाब से आँकी जाती है। पत्रिकाओं में दर पत्रिकाओं में दर प्रति हजार शब्दों के हिसाब से लगाई जाती है।

III) लक्षित उपभोक्ता वर्ग :-

विज्ञापनदाता को यह स्पष्ट होना चाहिए कि वह किस ग्राहक समुदाय विशेष को अपना विज्ञापन लक्षित कर रहा हूँ। इसमें आयु, लिंग, आदतें, रहन-सहन, व्यक्तित्व,

आय स्थिति आदि हो सकते हैं। अतः लक्षित उपभोक्ता समुदाय का पूर्ण लेखा-जोखा ले लेने से उसके लिए सर्वोत्तम प्रभावी माध्यम चयन का कार्य आसान हो जाता है।

IV) संदेश का प्रकार :-

यह आवश्यक है कि चुना गया माध्यम दिये जाने वाले संदेश के उपयुक्त हो। उदाहरण के लिए कालीनों एवं वस्त्रों आदि के विज्ञापन के लिए दृश्य एवं चित्रित माध्यम ही उपयुक्त होंगे, रेडियो नहीं। बीमा जैसे विषय के लिए लम्बे संदेश की आवश्कता होती है। अतः इसके लिए बाह्य माध्यम उपयुक्त नहीं होंगे, बल्कि समाचार पत्र-पत्रिकाएँ अधिक उपर्युक्त होंगी।

V) विज्ञापन बजट :-

विज्ञापनों पर किया जाने वाला व्यय विज्ञापन बजट कहलाता है। इसे किन माध्यमों पर और कितनी बार उपयोग किए जाए, यह बजट की राशि पर निर्भर करता है।

स्वापरख प्रश्न :-

प्र01 परिचित प्रसार माध्यमों को समझाइये तथा इनके अंतर्गत आने वाले विभिन्न माध्यमों को समझाइये ?

....

NMDC-130

....

प्र02 माध्यमों के चयन में किन-किन कारकों को ध्यान में रखा जाता है?

....

....

2.6 प्रभावकारी विज्ञापन प्रति तथा उसके गुण :-

एक विज्ञापन प्रति को प्रभावकारी बनाने के लिए उसमें निम्नलिखित बातों का होना आवश्यक है जो कि अग्रलिखित है-

(1) ध्यान केन्द्रित करना :- विज्ञापन प्रति का सबसे प्रमुख गुण उपभोक्ताओं का ध्यान अपनी ओर खींचता है। इसके लिए विज्ञापन प्रति में बड़े शीर्षक, उपशीर्षक चित्र रंगों में, आदि का उपयोग किया जाता है जिससे कि उपभोक्ता ऐसे विज्ञापनों को देखने के लिए विवश हो और उनकी निगाह ऐसी विज्ञापन प्रति पर अवश्य पड़ जाए। यदि विज्ञापन प्रति उपभोक्ता का ध्यान अपनी ओर आकर्षित करने में असफल रहता है तो ऐसा विज्ञापन प्रभावकारी नहीं हो सकता है।

(2) चाहत पैदा करना :- एक विज्ञापन प्रति में दूसरा गुण पढ़ने वालों में चाहत उत्पन्न करना होता है। इसके लिए विज्ञापन को मनोरंजक बनाया जाना चाहिए जिससे कि उपभोक्ता उसके पढ़े। इसके लिए इन विपणन प्रतियों में स्वास्थ्य, आशय, सफलता, प्रतिष्ठा आदि की बात व्यक्त की जा सकती है तथा चित्र, कहानी, वार्तालाप आदि का सुव्यवस्थित संयोजन हो सकता है।

(3) समझने योग्य :- विज्ञापन प्रति ऐसी होनी चाहिए कि उसकी भाषा को एक साधारण व्यक्ति भी समझ सके और उसको समझने के लिए विशेष ज्ञान अन्य व्यक्ति की आवश्यकता न रहे।

(4) विश्वास करने योग्य :- एक अच्छी विज्ञापन प्रति में ऐसा गुण होना चाहिए कि उसको पढ़ने या देखने पर विश्वास हो जाय कि जो भी उसमें लिखा या चित्रित किया गया है वह सही है। इसके लिए अतिशयोक्ति की बातें न करके सत्य का आचरण करना चाहिए।

(5) उपयोगिता सिद्ध करना :- विज्ञापन प्रति ऐसी होनी चाहिए कि वह उत्पाद की उपयोगिता को सिद्ध करती हो ताकि उपभोक्ता, उसको खरीदने के लिए प्रेरित हो जैसे-आयोडेक्स मलिये और काम पर चलिये।

(6) नवीनता दर्शाना :- विज्ञापन प्रति ऐसी होनी चाहिए कि उसमें नवीनता दर्शायी जाय जिससे कि उपभोक्ताओं को उत्सुकता पैदा हो।

MDC-130

विज्ञापन प्रति में उपर्युक्त बातों के अतिरिक्त कुछ भावनाओं या विचारों को जगाने वाली बात भी होनी चाहिए। इसके लिए स्वास्थ्य, सौन्दर्य, गर्व, आशय, सफलता, पैतृक भय, अनुकरण, मितव्ययता, देशभक्ति आदि भावनाओं का सहारा लिया जा सकता है।

2.7 प्रभावकारी विज्ञापन के लिए आवश्यक कारक :-

प्रायः समस्त विज्ञापन प्रभावकारी नहीं हो सकते हैं। उसको प्रभावकारी बनाने के लिए उनमें निम्न बातों या शर्तों का होना आवश्यक है। जो कि इस प्रकार से है-

(1) ब्राण्ड विभिन्नकरण :- यदि एक उत्पादनकर्ता का ब्राण्ड अन्य उत्पादकर्ताओं के ब्राण्ड से अलग है तो इस बात की प्राथमिकता अधिक होगी कि विज्ञापन प्रभावकारी हो सके और उससे अधिक लाभ प्राप्त किया जा सके। कभी-कभी उत्पादों में विभिन्नीकरण छिपा होता है जिसको उत्पादों को प्रयोग संबंधी निर्देशों का विज्ञापन करके उभारा जा सकता है। जब विभिन्नीकरण छिपा होता है तो विशेषज्ञों का राय का सराहा लेकर विज्ञापन किया जाना चाहिए। यदि विज्ञापन को सफल बनाना है तो उत्पादों के ब्राण्डों मे भारी अन्तर होना चाहिए जिससे अपनी ब्राण्ड के प्रति वफादारी बनायी जा

सके।

(2) माँग में बढ़ोत्तरी :- प्रभावकारी विज्ञापन के लिए आवश्यक है कि उत्पाद की माँग में वृद्धि निरन्तर होती रहे। यदि अकेले विज्ञापन से माँग में वृद्धि हो जाती है तो ऐसी माँग को विस्तार योग्य माँग कहते हैं। यदि विज्ञापन में माँग में वृद्धि नहीं होती का मूल्य घटाने पर ही माँग में वृद्धि होती है तो ऐसी माँग अविस्तार योग्य कहलाती है। एक विपणन प्रबान्धक को विज्ञापन सम्बान्धी निर्णय लेते समय मूल्य के संदर्भ में माँग का अध्ययन करना चाहिए। यदि मूल्य घटाने से माँग में वृद्धि और कुल आगम में वृद्धि होती है या मूल्य बढ़ने से कुल आगम में कमी आती है तो ऐसी माँग मूल्य वृद्धि कुल आगम में वृद्धि कर देती है तो इसे बेलोचदार माँग कहते हैं। एक विपणन प्रबन्धक की मूल्य कटौती कर कुल आगम को बढ़ाना चाहिए।

(3) उत्पाद की माँग का स्वरूप :- उत्पादों की माँग दो प्रकार की होती है-

(i) आधारभूत

(ii) विशिष्ट आधारभूत

माँग में विज्ञापन अधिक प्रभावकारी होता है। इसमें उत्पाद को क्रय करने का आग्रह किया जाता है। उपभोक्ता इन आग्रहों में फंस जाता है। लेकिन जब उत्पाद दूसरी अवस्था (चुनी हुई) में होती है तो विशेष ब्राण्ड को खरीदने का आग्रह किया जाता है। इस दूसरी अवस्था में विज्ञापन विशेष प्रभावकारी नहीं होता है।

(4) शक्तिशाली भावमय क्रय प्रयोजन :- यदि विज्ञापन में शक्तिशाली भावमय क्रय प्रयोजन का समावेश कर दिया गया है तो विज्ञापन प्रभावकारी सिद्ध होगा। इसके विपरीत, यदि वह क्रय प्रयोजन शक्तिशाली नहीं हो तो विज्ञापन प्रभावकारी नहीं हो सकता है।

(5) पर्याप्त धन :- विज्ञापन को प्रभावकारी बनाने के लिए विज्ञापन पर व्यवस्थित ढंग से एक भारी रकम उन स्थानों पर व्यय की जानी चाहिए जहाँ पर वस्तु की माँग उत्पन्न की जाती है।

उपरोक्त पाँच कारकों के अतिरिक्त आइये कुछ अन्य महत्वपूर्ण कारकों पर भी एक नजर डाले जो विज्ञापन को प्रभावकारी बनाने में सहायक होते हैं-

(1) विज्ञापन उद्देश्य परिभाषित करना :-

विज्ञापन को प्रभावकारी बनाने व उसके मूल्यांकन करने के लिए सबसे पहले विज्ञापन उद्देश्य निर्धारित किये जाने चाहिए। यह उद्देश्य स्पष्ट व विशिष्ट होने चाहिए जैसे यदि कहा जाय कि विज्ञापन का उद्देश्य ब्राण्ड प्राथमिकता स्थापित करना है तो

इसका अर्थ यह है कि उद्देश्य विशिष्ट नहीं है। लक्ष्य या उद्देश्य जितने अधिक विशिष्ट होंगे उतनी ही अधिक प्रभावकारी विज्ञापन प्रति बनायी जाय सकेगी। इसका कारण यह है कि उसी प्रकार का संदेश व प्रतिलेख का समावेश उस विज्ञापन में किया जा सकेगा जिस प्रकार की जनता के पास वह विज्ञापन पहुँचेगा।

(2) विज्ञापन विनियोजन :-

विज्ञापन के संबंध में निर्णय करने का दूसरा क्षेत्र विज्ञापन विनियोजन है। इसमें यह निर्णय लेना पड़ता है कि विज्ञापन पर कुल कितना धन व्यय किया जाय? यह व्यय विज्ञापन उद्देश्य पर आधारित होता है।जैसा उद्देश्य होगी उसी अनुरूप विज्ञापन व्यय किया जाएगा। विज्ञापन व्यय का निर्धारण ही विज्ञापन विनियोजन कहलाता है।

(3) विज्ञापन संदेश एवं प्रस्तुतीकरण का ढंग :-

विज्ञापन संदेश का तात्पर्य है कि विज्ञापन में कौन सा संदेश होना चाहिए अर्थात् उसका विषय क्या होना चाहिए? किसी भी उत्पाद का संदेश उस उत्पाद की संभावित विशेषताओं पर आधारित होता है। यह विशेषताएँ भी बहुत सी होती है लेकिन सभी विशेषताओं को विज्ञापन में देना संभव नहीं होता है। अतः उन विशेषताओं में से एक या दो विशेषताओं को छाँटा जाता है। इस प्रकार यहाँ यह निर्णय लेना होता है कि कौन-सी विशेषताएँ विज्ञापन के लिए छाँटी जाएँ तथा विज्ञापन संदेश किस प्रकार कहा जाय कि वह उपभोक्ता की मनोभावनाओं को जाग्रत कर सकें।

विज्ञापन संदेश का विषय ऐसा होना चाहिए कि उसे बार-बार न बदलना पड़े और एक बार जो विषय निर्धारित कर लिया जाय वह वर्षों तक चलता रहे। कुछ विज्ञापनकर्ता संदेश के विषय को समय-समय पर बदलते रहते हैं जो उचित नहीं है। जैसे घड़ी साबुन वर्षों से एक ही संदेश दे रहा है पहले इस्तेमाल करें फिर विश्वास करें। एक प्रभावकारी संदेश बनाने की तीन मुख्य आधार है।

(i) ग्राहकों के ध्यान का अपनी ओर आकर्षित करना,

(ii) आसानी से समझने योग्य होना और

(iii) विश्वास करने योग्य होगा।

इन आधारों को ध्यान में रखकर विज्ञापन संदेश बनाया जाना चाहिए।

(4) विज्ञापन माध्यम का चुनाव :-

जब एक व्यवसायी उपर्युक्त वर्णित बातों पर निर्णय लेता है तो अब उसको विज्ञापन माध्यम के चुनाव के सम्बन्ध में निर्णय लेना पड़ता है। इस बात को इस प्रकार कह सकते हैं कि विज्ञापन सम्बन्धी संदेश जनता तक किस माध्यम से पहुँचाया जाय? विज्ञापन के माध्यम या साधन बहुत से है इनका अध्ययन हम पहले कर चुके हैं।

2.8 विज्ञापन का मूल्यांकन, महत्व तथा सीमायें :-

किसी निर्माता का विज्ञापन प्रभावी रहा या नहीं इस बात का पता लगाने को विज्ञापन इसका मूल्यांकन करते हैं। इसका पता लगाना ही विज्ञापन के प्रभाव का मूल्यांकन कहा जाता है। इससे वास्तव में यह पता लगाया जाता है कि क्या उपभोक्ता ने विज्ञापन से प्रभावित होकर ही उत्पाद का क्रय किया है अथवा नहीं। उपभोक्ता द्वारा उत्पाद का क्रय कई बातों से प्रभावित होकर किया जाता है जिसमें विज्ञापन भी हो सकता है। अतः विज्ञापन की कार्यक्षमता को मापना कठिन है लेकिन फिर भी विज्ञापन की कार्यक्षमता का मूल्यांकन निम्न विधियों से किया जा सकता है-

I) विक्रय अनुसंधान :- विज्ञापन की कार्यक्षमता का मूल्यांकन विक्रय वृद्धि से किया जा सकता है। यदि किसी उत्पाद की बिक्री बढ़ती है तो यह कहा जा सकता है कि यह विज्ञापन के प्रभाव के कारण ही है। लेकिन ऐसा उसी समय संभव है जबकि विज्ञापन के अतिरिक्त अन्य चल स्थर हो और विज्ञापन के तुरन्त बाद विक्रय में वृद्धि हो।

विज्ञापन व विक्रय में संबंध तो होता है लेकिन इतना अधिक नहीं। यह धारणा है कि चालू विक्रय, चालू विज्ञापन का ही प्रभाव है, गलत है।

II) संवर्द्धन अनुसंधान :- किसी विज्ञापन की कार्यक्षमता दो प्रकार से मापी जा सकती है- एक तो विज्ञापन प्रति को विज्ञापन माध्यम को भेजने से पूर्व मापना कि क्या वह विज्ञापन प्रभावकारी होगा? इसको पूर्व-निरीक्षण कहते हैं। दूसरे में जब विज्ञापन जनता तक पहुँच जाता है तब उसकी कार्यक्षमता मापी जाती है। इसको विज्ञापन के बाद परीक्षण कहते हैं। कार्यक्षमता को आँकने के लिए तीन तरीके काम में लाये जाते हैं-

(1) उपभोक्ता पंच परीक्षण,

(2) पहचान परीक्षण, तथा,

(3) पुनः स्मरण परीक्षण।

(4) उपभोक्ता पंच परीक्षण :-

कार्यक्षमता को आँकने की यह पूर्व परीक्षण विधि है। इस तरीके में उपभोक्ता को विज्ञापन प्रति दिखायी जाती है और उनमें उस विज्ञापन के प्रति अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करने को कहा जाता है। साथ ही उनसे पूछा जाता है है कि क्या इस विज्ञापन से उपभोक्ता उत्पाद क्रय करने के लिए भावना जाग्रत होगी? इस तरीके में यो तो उत्पाद को एकत्रित किया जाता है और फिर उनसे अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करने को कहा जाता है या ऐसे ग्राहकों के पास विज्ञापन प्रति की एक नकल व प्रति भेज दिये जाते हैं और उनसे आग्रह किया जाता है वे उसका उत्तर भेज दें। इस परीक्षण के ढंग के निष्कर्षों को रिकार्ड करने

के दो तरीके हैं :

(i) योग्यता - क्रम परीक्षण, तथा

(ii) तुलनात्मक युगल परीक्षण,

(i) योग्यता - क्रम परीक्षण :-

इसमें उपभोक्ता - पंचों को कई सम्भावित विज्ञापन प्रतियाँ दी जाती है और उनमें से क्रय के अनुसार चुनने को कहा जाता है। जो विज्ञापन प्रति उनको सबसे अच्छी लगती है उसके पहले क्रम पर रखा जाता है तथा जो दूसरे स्थान पर अच्छी लगती है उसको बाद में रखा जाता है। बाद में इन सभी प्राप्त क्रमों का संग्रह करके निष्कर्ष निकाल लेते हैं।

(ii) तुलनात्मक युगल परीक्षण :-

इसमें उपभोक्ता - पंचों की सम्भावित विज्ञापन प्रतियाँ जोड़े में दी जाती हैं और उनसे उन दोनों में से एक को जो सबसे अच्छी है चुनने का कहा जाता है। इसके बाद फिर उन दोनों में से एक तथा एक नयी प्रति की तुलना करके उनमें से सबसे अच्छी प्रति को चुनने को कहा जाता है। यह क्रम बराबर चलता रहता है जब तक कि सभी विज्ञापन प्रतियों की तुलना अन्य दूसरी प्रतियों से न हो जाय। जो विज्ञापन प्रति सबसे अधिक बार पसंद आये वही सबसे अच्छी समझी जाती है।

NMDC-30

(2) पहचान परीक्षण :-

विज्ञापन की कार्यक्षमता का परीक्षण पहचान परीक्षण के आधार पर किया जा सकता है। यह तरीका विज्ञापन के बाद के परीक्षण का तरीका है इसमें स्मरण शक्ति को अधिक महत्व दिया गया है। इसमें विज्ञापन को उपभोक्ता को दिखाया जाता है और उनसे पूछा जाता है कि क्या उन्होंने ऐसा विज्ञापन कभी देखा? यदि इसका उत्तर 'हाँ' में आता है तो उससे परिणाम निकाला जा सकाता है कि विज्ञापन की कार्यक्षमता प्रभावी रहा।

(3) पुनः स्मरण परीक्षण :-

यह भी विज्ञापन के परीक्षण का तरीका है। इसमे ग्राहकों से यह पूछा जाता है कि क्या उन्होंने ऐसा विज्ञापन, जिसमें इस प्रकार की बातें है, देखा है? इसमें विज्ञापन उपभोक्ताओं को दिखाया नहीं जाता है। यदि उपभोक्ताओं द्वारा इस प्रकार के प्रश्नों के उत्तर 'हाँ' में दिये जाते हैं तो इसमें यह निष्कर्ष निकलता है कि विज्ञापन प्रभावकारी रहा है। इस पुनः स्मरण परीक्षण के तरीके हैं :-

(i) गैलप एवं रोबिन्सन परीक्षण,

(ii) रेडियों एवं टेलीविजन पुनः स्मरण परीक्षण।

(iii) तुलनात्मक युगल सहचर्य परीक्षण तथा,

(iv) ज्ञान परीक्षण।

(i) गैलप एवं रोबिन्सन परीक्षण :-

इस परीक्षण को निम्न चरणों में विभक्त किया गया है-

(1) इसमें उत्तर देने वाले को पहले वह पत्रिका दिखायी जाती है जिसमें विज्ञापन छपा था।

(2) उनसे पूछा जाता है कि क्या उन्होंने उस पत्रिका का अवलोकन किया है? यदि उत्तर 'हाँ' में आता है तो फिर उसके समक्ष कई ब्राण्डों को कार्य दिये जाते हैं और उनसे यह पूछा जाता है कि उन्होंने इसमें से किस ब्राण्ड के विज्ञापन को देखा है।

(3) फिर उनसे उस ब्राण्ड के विज्ञापन के बारे में याद करके उसकी विशेषताओं का बताने को कहा जाता है और कुछ प्रश्न इस प्रकार के किये जाते हैं कि "विज्ञापन में यह कहा गया है?" क्या इससे उत्पाद को क्रय करने के लिए आप आकर्षित हुए हैं?

(4) इन सभी उत्तरों को लिख दिया जाता है।

(5) अब पत्रिका को खोलकर उत्तर देने वाले को वह विज्ञापन दिखाया जाता है और पूछा जाता है कि "क्या यह वही विज्ञापन है।

(6) यदि उत्तर देने वालों में से अधिकतर व्यक्ति विज्ञापनकर्ता के हित की दृष्टि से उत्तर देते हैं तो यह कहा जाता है कि वह विज्ञापन प्रभावकारी रहा है। यह तरीका पुनः स्मरण पर आधारित है तथा विज्ञापन के बाद परीक्षण का तरीका है।

(ii) रेडियो एवं टेलीविजन पुनः स्मरण परीक्षण :-

वे विज्ञापन जो रेडियो एवं टेलीविजन से किये जाते हैं उन विज्ञापनों के परीक्षण के लिए यह तरीका अपनाया जाता है। इसमें रेडियो प्रसारण व टेलीविजन के द्वारा विज्ञापन के दूसरे दिन टेलीफोन से या घर-घर जाकर पूछताछ की जाती है कि क्या उन्होंने अमुक ब्राण्ड का विज्ञापन रेडियो से सुना या टेलीविजन से देखा? यदि उस ब्राण्ड के लिए अधिकांश उत्तर हाँ में आते हैं तो यह समझा जाता है कि विज्ञापन प्रभावशाली रहा है। यह तरीका पुनः स्मरण पर आधारित है तथा विज्ञापन के बाद के परीक्षण का तरीका है।

(iii) सहचर्य परीक्षण :-

यह विज्ञापन के बाद के परीक्षण की विधि है। इसमें उत्तर देने वालों से यह पूछा

जाता है कि ऐसा कौन से ब्लेड का विज्ञापन है जिसमें यह लिखा है, "त्वचा के लिए मुलायम दाढ़ी के लिए जालिम" ऐसे प्रश्न सहचर्य के प्रतीक हैं-एक ओर तो वस्तु हैं, दूसरी ओर उस वस्तु का नाम व तीसरी ओर उस वस्तु के ब्राण्ड का नाम। जितने अधिक उत्तर देने वाले इस बात का सही उत्तर देते हैं उतना ही वह विज्ञापन प्रभावकारी माना जाता है। यह तरीका भी पुनः स्मरण पर आधारित है।

(iv) ज्ञान परीक्षण :-

इस तरीके में उत्तर देने वाले से भिन्न प्रकार के प्रश्न किये जाते हैं जिनसे यह पता चले कि क्या उसको उस उत्पाद की जानकारी है? जैसे, "क्या आपने कभी **'Indane'** का नाम सुना है?" क्या आपने **'Bharat Petroleum'** का नाम सुना है?" इसमें विज्ञापन के प्रभावकारी होने का अन्दाज लग जाता है। कुछ व्यक्ति इसको ज्ञान परीक्षण का नाम देते हैं। यह तरीका भी पुनः स्मरण पर आधारित है।

अभी हमने विज्ञापन को मापने की कई विधियों का अध्ययन किया है लेकिन अब प्रश्न यह उठता है कि इन विधियों में कौन सी विधि सबसे अच्छी है? वास्तव में विश्वास के साथ यह नहीं कहा जा सकता है कि अमुक तरीका शत-प्रतिशत अच्छा है। इसका कारण यह है कि प्रत्येक तरीके में कोई न कोई कमी आवश्य ही कही जा सकती है कि प्रभाव को किसी उद्देश्य को रखकर ही मापना चाहिए।

NMDC-130

विज्ञापन कराने का उद्देश्य विक्रय बढ़ाना एवं लाभ प्राप्त करना है लेकिन विज्ञापन के विभिन्न साधनों में से एक से परिणाम निकलते हैं। साधारणतया यह कहा जाता है कि विज्ञापन पर अधिकांश व्यय व्यर्थ ही जाता है अतः आवश्यकता इस बात की है कि विज्ञापन के विभिन्न साधनों का इस प्रकार उपयोग किया जाय कि लाभ अधिक से अधिक हो सके।

विज्ञापन परीक्षण अनुभवों में वृद्धि करता है जिससे उचित विज्ञापन साधन चुनने में सहायता मिलती है और अधिक अवसर इस बात के होते हैं कि गलती न हो और प्रभावकारी विज्ञापन साधन चुना जा सके। एक विज्ञापन करने वाला यह तो जानता चाहता ही है कि अच्छा विज्ञापन कौन सा है जिससे अधिक ग्राहक प्रभावित हो सकें लेकिन साथ ही यह भी जानना चाहता है कि किस विज्ञापन में प्रभावोत्पादकता अधिक है परीक्षण विकल्पों को सामने लाता है और उन धारणाओं को गलत सिद्ध कर देता है जो कि एक विज्ञापनकर्ता में है।

विज्ञापन परीक्षण में इस बात का ध्यान तो रखना ही चाहिए कि विज्ञापन की सफलता के लिए बहुत से घटक उत्तरदायी होते हैं।

विज्ञापन प्रभावोत्पादकता मूल्यांकन में कठिनाइयाँ एवं सीमाएँ -

विज्ञापन की प्रभावोत्पादकता का मूल्यांकन करने में अनेक कठिनाईयाँ एवं सीमाएँ हैं। हम यहाँ कुछ प्रमुख कठिनाइयों एवं सीमाओं को ले रहे हैं :-

(1) सबसे पहली समस्या यह है कि यह समझा जाता है कि वर्तमान विक्रय विज्ञापन का प्रभाव है लेकिन वास्तविक यह है कि वर्तमान बिक्री वर्तमान विज्ञापन एवं पूर्व विज्ञापनों के संयुक्त प्रभाव से होती है। अतः वर्तमान विज्ञापन के प्रभाव को ठीक-ठाक रूप में मापा नहीं जा सकता है।

(2) दूसरी समस्या यह है कि विज्ञापन के प्रभाव को डाक द्वारा विज्ञापन में तो सही-सही माप सकते हैं लेकिन अन्य प्रकार के व्यवसायी एवं सेवाओं में नहीं माप सकते हैं। इसका कारण यह है कि वस्तु के विक्रय में अकेला विज्ञापन ही कार्य नहीं करता बल्कि वस्तु का नियोजन, वस्तु अनुसंधान, वैयक्तिक, गारण्टी सेवा व विक्रय संवर्द्धन आदि भी कार्य करते हैं। यह सब एक दूसरे से इस प्रकार सम्बन्धित है कि इनके प्रभावों को अलग-अलग मापना कठिन ही नहीं बल्कि असंभव है।

(3) कुछ विज्ञापन इस उद्देश्य से किये जाते हैं कि कम्पनी की ख्याति बढ़े तथा कम्पनी छवि का सृजन हो जिससे कि ग्राहकों पर अच्छा प्रभाव पड़े। जैसे कभी-कभी अखबारों में आता है कि अमुक कम्पनी में जनता की भलाई के लिए एक आधुनिक अस्पताल बनवाया है। इस प्रकार के विज्ञापनों का विक्रय पर कितना प्रभाव पड़ा इसको मापना भी कठिन होता है।

NMDC-

(4) विज्ञापन प्रभावोत्पादकता को मापने के जो तरीके हैं वे सिर्फ यह बताते हैं कि कौन सी विज्ञापन प्रति सर्वोत्तम है लेकिन यह नहीं बताते कि विज्ञापन प्रति में कौन-कौन सी बातें और होनी चाहिए जिससे कि वह अधिक प्रभावशाली हो सके।

(5) सर्वोत्तम विज्ञापन प्रति का चुनाव करने के बाद भी निश्चितता के साथ यह नहीं कहा जा सकता कि यह विज्ञापन विक्रय परिणाम बढ़ाने में सहायक होगा।

2.9 विज्ञापन के विभिन्न कार्यकारी पक्ष :-

विज्ञापन कार्य में सामान्यतः निम्नलिखित पाँच संस्थाएँ कार्यरत होती हैं -

(1) विज्ञापनदाता :- विज्ञापनदाता, विज्ञापन के प्रयोजक लोग होते हैं। जैसे-उत्पादक, विनिर्माता, फुटकर व्यापारी, थोक विक्रेता, सेवा संगठन, श्रमिक संघ, विद्यालय, सरकार, राजनीतिज्ञ, जनसामान्य आदि। संक्षेप में विज्ञापनदाता वे लोग या संस्थाएँ हैं, जो विज्ञापनों के प्रकाशन एवं प्रसारण पर आने वाले व्यय का वहन करते हैं।

(2) विज्ञापन एजेंसियाँ :- ये वे स्वतंत्र व्यवसायी संस्थाएँ हैं, जो विज्ञापन

की परिकल्पना एवं विकास करती है और विभिन्न प्रसारण माध्यमों में उनके प्रकाशन की व्यवस्था करती है। ये कार्य वे अपनी ग्राहक कम्पनियों से निश्चित शुल्क के बदले में करती हैं। वस्तुतः ये एजेंसियाँ अपनी ग्राहक कंपनियों को विविध प्रकार की सेवाएँ देती हैं, जिनसे विज्ञापन सामग्री के तैयार होने में मदद मिलती है। इनमें निम्नलिखित उल्लेखनीय हैं :-

(i) कापी लेखन :-

कापी लेखन विज्ञापन के लिखित अंश को कहते हैं, जिसमें शीर्षक, संदेश और उत्पाद का विवरण आते हैं। प्रसारण माध्यम में इस कापी को "स्क्रिप्ट" लेखन कहते हैं।

(ii) विज्ञापन की कला सामग्री :-

इसमें चित्र, रेखांकन, फोटो तथा अन्य सामग्रियाँ आती हैं, जिनका उपयोग विज्ञापन के लिखित अंश के प्रभाव को संवर्धित करने के लिए किया जाता है।

(iii) प्रसार माध्यमों की खरीदारी :-

इसका अभिप्राय ऐसे विशेषज्ञों से है जो विभिन्न प्रकार माध्यमों में स्थान (जैसे- समाचार पत्र, पत्र-पत्रिकाओं में) तथा समय (रेडियो, टी.वी. आदि में) आदि में खरीद एवं आरक्षण आदि की व्यवस्था करते हैं।

(iv) ग्राहक सेवा :-

विज्ञापन एजेंसियों में प्रत्येक ग्राहक कम्पनी का कार्य विशेष अधिकारी देखते हैं, जो ग्राहक कम्पनी और एजेंसी विज्ञापन कला विभाग के बीच संपर्क कड़ी के रूप में कार्य करता है।

(3) सहायक संगठन :-

आज के विज्ञापन कार्य में कतिपय ऐसे विशेषज्ञ कर्मियों की आवश्यकता पड़ती है, वो न ग्राहक कम्पनी और यही विज्ञापन एजेन्सी के कर्मचारी होते हैं। ये कलाकार चयन करती है। सिनेफोटोग्राफर, फिल्म / टेप सम्पादक, फोटोग्राफर, संगीत एवं साउंड इफेक्ट विशेषज्ञ आदि है। इसका तात्पर्य यह है कि विज्ञापन सामग्री की तैयारी में कई प्रकार के बाह्य सहयोग की आवश्यकता पड़ती है जिसके बिना एजेन्सी एक प्रभावी और श्रेष्ठ विज्ञापन तैयार नहीं कर सकती। इसके अतिरिक्त आज के वर्तमान परिवेश में अधिकांश विज्ञापन संबंधी निर्णय के लिये, विशेषकर उपभोक्ता दृष्टिकोण, व्यवहार एवं प्रतिक्रिया आदि का पता लगाने में, अनुसंधान महत्व काफी बढ़ गया है। किसी भी एजेन्सी अथवा कम्पनी के लिए ये सभी कार्य अपने यहाँ करना असंभव होगा। अतः वे सभी संस्थाएँ जो इस प्रकार की सहायक सेवायें प्रदान करती हैं उन्हें सहायक संस्थाएँ

कहा जाता है।

(4) प्रसार माध्यम :-

जैसा कि आप पूर्व से जानते हैं कि विज्ञापन एक प्रकार का प्रसार कार्य ही है। इस प्रकार ऐसे उत्पाद की सहायता से प्रसारित किया गया है जिससे इसमें निहित संदेश अधिकाधिक लोगों, विशेषकर लक्षित उपभोक्ताओं तक पहुँच सके। इसे माध्यम कहते हैं, इसकी परिभाषा में समाचार पत्र, पत्रिकाऐं, रेडियों, टेलीविजन, होर्डिंग, सिनेमा स्लाइड, चल वाहन आदि आते हैं। प्रसार माध्यम की चर्चा हम इसी इकाई में पूर्व में कर चुके हैं।

(5) उपभोक्ता :-

उपभोक्ता वह जनसमूह है, जिसे विज्ञापनदाता तुष्ट करना चाहता है। इसके लिए उपयुक्त शब्दावली संक्षिप्त जनसमूह है।

2.10 भारत में विज्ञापन की दशा और दिशा

वर्तमान व्यावसायिक जगत में भारत एक महाशक्ति बनकर उभरा है। विशेषतः 1992 के बाद की एल0पी0जी0 नीति द्वारा (उदारीकरण, निजीकरण, भूमण्डलीकरण) यह व्यवसायिक जगत एक ध्रुव बन गया है। किन्तु आश्चर्यजनक तथ्य यह है कि आज भी मूल भारतीय औद्योगिक संगठन विज्ञापन पर काफी कम व्यय करते हैं। एक अनुमान के अनुसार भारतीय कम्पनियाँ अपनी जी0एन0पी0 का 2 प्रतिशत ही विज्ञापन पर व्यय करती है जबकि संयुक्त राज्य अमेरिका 5 प्रतिशत, बिट्रेन 4 प्रतिशत तथा जापान 3 प्रतिशत तक का व्यय विज्ञापन पर करते हैं। विकसित देशों की तुलना में यह की यह स्थिति अग्रलिखित कारकों की वजह से है:-

IMD-130

(1) भाषा की समस्या :- यहाँ पर कोई एक भाषा नहीं है जिसको बोला जाता है और सुना जाता हो। वहाँ पर 16 भाषाएँ हैं। साथ ही यहाँ की 64 प्रतिशत जनसंख्या अशिक्षित है। विज्ञापन के विकास में अशिक्षा सबसे बड़ी बाधा है तथा भाषा भिन्नता विज्ञापन व्ययों में वृद्धि कर देती है।

(2) कुशल विज्ञापन कर्मचारियों का अभावः- भारत में विज्ञापन कर्मचारियों का अभाव है। यहाँ पर कर्मचारियों को विज्ञापन कला में प्रशिक्षण देने के लिए एक अच्छे संस्थान का भी अभाव है।

(3) विज्ञापन अनुसंधान का अभाव :- भारत में विज्ञापन अनुसंधान तोकभी वास्तव में शुरूआत की स्थिति में भी नहीं है। इसका कारण यह है कि यहाँ पर विज्ञापन व्यय ही बहुत कम होता है। निर्माताओं द्वारा विज्ञापन पर अधिक ध्यान नहीं दिया जाता है। इसका मुख्य कारण निर्माता बाजारों का होना है।

(4) वैज्ञानिक विज्ञापन का अभाव :- भारत में अधिकांश विज्ञापन इस उद्देश्य से किया जाता है कि उपभोक्ता को वस्तु की जानकारी हो जाय जबकि विज्ञापन का प्रथम

आधारभूत सिद्धान्त उपभोक्ता में वस्तु के प्रति आकर्षण उत्पन्न करना है।

लेकिन उपयुक्त कठिनाइयों एवं समस्याओं के बावजूद भी भारत में विज्ञापन व्ययों में बराबर वृद्धि हो रही है, जनसंख्या की आय बढ़ रही है, रहन-सहन का स्तर ऊँचा उठ रहा है, शिक्षा का प्रसार हो रहा है गाँवों एवं शहरों को सड़कों से जोड़ा जा रहा है तथा पुरानी विचारधाराओं में भी परिवर्तन लाया जा रहा है। इन सबके होने से उपभोक्ताओं की रूचियों में भी परिवर्तन हो रहा है जो इस बात के लिए विवश कर रहा है कि उसको अधिक से अधिक वस्तुओं की जानकारी दी जाय जिसके परिणाम स्वरूप विज्ञापन का महत्व दिन-प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है और आशा है कि भाषा की कठिनाई को छोड़कर शेष कठिनाइयाँ हल हो जायेंगी। यद्यपि भाषा के बारे में भी एक भाषा नीति (हिन्दी) को बढ़ावा दिया जा रहा है।

2.11 प्रचार :-

हम संवर्धन मिश्रण के अन्तर्गत यह जान चुके हैं कि इसके चार तत्व होते हैं- विज्ञापन, विक्रय संवर्धन, व्यक्तिगत विक्रय तथा प्रचार। विज्ञापन का विस्तृत अध्ययन करने के पश्चात् आइए, अब प्रचार को सुव्यवस्थित एवं क्रमबद्ध रूप से समझने का प्रयास करें।

NMC-130

किसी प्रकाशित अथवा प्रसारित अथवा संघ से जनता को किसी कंपनी अथवा इसके उत्पाद, सेवा अथवा व्यवसाय के प्रति सद्भावना अथवा व्यापारिक लाभ की स्थिति बनाने अर्थात् माँग बढ़ाने का अव्यक्तिगत प्रयास, जिसके लिए कंपनी को कोई भुगतान नहीं करना पड़े, प्रचार कहलाता है। इस परिभाषा की मुख्य विशेषताएँ निम्नलिखित हैं :

(1) अव्यक्तिगत/जन माध्यम :- विज्ञापन के ही समान प्रचार भी समाचार पत्रों, पत्रिकाओं, रेडियो, टेलीविजन जैसे जन माध्यमों के द्वारा एक ही समय में लोगों की बहुत बड़ी संख्या तक पहुँचता है (अतः इसे अव्यक्तिगत कहा जाता है।)

(2) व्यापारिक दृष्टि से महत्वपूर्ण समाचार :- यह उन विशेषताओं में से एक है जो प्रचार को विज्ञापन से अलग करती है। जब जन माध्यम किसी कंपनी या उत्पाद संबंधी किसी सूचना को समाचार योग्य समझते हैं तब वे मुफ्त में ही उसे प्रसारित कर देते हैं। चूंकि इस प्रकार की अधिकतर प्रचार सामग्री की शुरूआत विज्ञापकों की ओर से नहीं बल्कि जन माध्यमों की ओर से होती है और वे समाचार या लेखों के रूप में होती है अतः उन पर लोग अधिक विश्वास करते हैं।

(3) गैर प्रायोजित :- चूंकि सूचना माध्यमों की ओर से आती है अतः इनका कोई प्रायोजक नहीं होता। इसका अर्थ है कि संदेश अहस्ताक्षरित होता है। विज्ञापन और प्रचार के बीच यह एक दूसरा भेद है।

(4) बिना भुगतान के :- चूंकि प्रचार किसी एक प्रायोजक के साथ जुड़ी नहीं होना चाहिए और सूचना प्रसारण उसके कहने पर नहीं किया जाता अतः उसे कुछ भुगतान भी नहीं करना पड़ता। विज्ञापन और प्रचार के बीच यह तीसरा भेद है।

(5) माँग वृद्धि में सहायता देना :- कतिपय परिस्थितियों में, यदि प्रचार नियोजित ढंग से किया जाए तो इससे कंपनी तथा इसके उत्पादों/सेवाओं के बारे में लोक छवि में सुधार होता है, जिसके परिणामस्वरूप ग्राहक उनकी ओर सकारात्मक दृष्टिकोण अपनाने लगते हैं। इसकी परिणिति कंपनी के उत्पादों व सेवाओं की अधिक माँग से रूप में होती है।

उदाहरण के लिए डी0एल0एफ0 द्वारा प्रायोजित 20-20 प्रतियोगिता तथा एल0जी0 कम्पनी द्वारा एशिया कप क्रिकेट के विषय में जब प्रशंसात्मक समीक्षाएँ पत्र-पत्रिकाओं में छपी तो उसका उद्देश्य कंपनी की छवि को बढ़ाना था। इसी प्रकार डाबर कंपनी द्वारा प्रायोजित एड्स जागरूकता जैसी विज्ञापन प्रयास है जिसका उद्देश्य संस्था की छवि एवं प्रतिष्ठा को बढ़ाना है।

यहाँ यह भी कहना अप्रासंगिक न होगा कि प्रतिकूल प्रचार से कंपनी की प्रतिष्ठा एवं छवि गिर भी सकती है और उसके उत्पाद की माँग पर भी प्रतिकूल प्रभाव पड़ सकता है। परिणामस्वरूप इसकी सकल बिक्री में गिरावट दर्ज की गई है। इसी प्रकार अपने उत्पादों में गाय की चर्बी के कथित उपयोग के प्रचारित किए जाने का कुप्रभाव जैन शुद्ध वनस्पति कंपनी के व्यापार पर पड़ा और उपभोक्ताओं ने उसका उत्पाद खरीदना बंद कर दिया। ये सभी उदाहरण कुप्रचारच के प्रभावों को स्पष्ट करने के लिए दिए गए हैं।

2.11 प्रचार तथा विज्ञापन में अंतर :-

अग्रलिखित तालिका में विज्ञापन तथा प्रचार के बीच अंतर को स्पष्ट किया गया है। इस तालिका को सावधानी पूर्वक पढ़िए। इसे देखने के बाद आप इन दोनों के बीच के अंतर को स्पष्ट कर सकेंगे।

तालिका - विज्ञापन तथा प्रचार में अंतर

विवरण	विज्ञापन	प्रत्यक्ष डाक
1) भुगतान	प्रायोजक कंपनी प्रयोग किए गए स्थान अथवा समय के लिए भुगतान करती है।	कंपनी माध्यम की कोई पैसा नहीं देती है।
2) प्रायोजक	विज्ञापनकर्ता की पहचान की जा सकती है। प्रायः एक कंपनी इसका प्रयोजन अपने उत्पाद अथवा सेवा के लिए करती है।	प्रायोजक की पहचान नहीं की जा सकती। माध्यम ऐच्छिक रूप से इसकी प्रस्तुति करता है।

3) विषयवस्तु	कंपनी का विज्ञापन/संदेश की विषयवस्तु एवं पहुँच पर पूर्ण नियंत्रण होता है।	कंपनी का संदेश की विषयवस्तु और पहुँच पर कोई नियंत्रण नहीं होता। यद्यपि वह संभव है कि संदेश के प्रति जन-सामान्य में रूचि जागृत करने के लिए यह आवश्यक जानकारी जुटाने में मदद करें।
4) आवृत्ति	कंपनी संदेश की जितनी बार चाहे पुनरावृत्ति कर सकती है।	कंपनी के लिए संदेश की पुनरावृत्ति संभव नहीं है।
5) उद्देश्य	इसका उद्देश्य कंपनी तथा इसके उत्पाद के बारे में सद्भावना जागृत करना, इसके बनाए रखना और इसमें वृद्धि करना होता है।	केवल समाचार/सूचना सामग्री के रूप में प्रस्तुत, अतः उपयुक्त नहीं। अनुकूल अथवा प्रतिकूल कैसा भी प्रभाव पड़ सकता है।
6) विश्वसनीयता	न्यून से सामान्य	उच्च

प्रचार विज्ञापन जैसा ही है। अंतर इतना ही है कि इसमें माध्यम की समानता होते हुए भी संदेश अव्यक्तिगत रूप में प्रस्तुत किया जाता है और इसके लिए किसी किस्म का भुगतान नहीं किया जाता।

NMDC-130

लाभ तथा दोष -

लाभ : संवर्धन साधन के रूप में प्रचार के कई लाभ है-

1) प्रचार द्वारा उन लोगों तक पहुँचा जा सकता है, जो सामान्यतः विज्ञापन, बिक्री संवर्धन अथवा विक्रेता दलों की ओर ध्यान नहीं देते।

2) प्रचार, विज्ञापनों की तुलना में अधिक विश्वसनीय होता है, क्योंकि यह संपादकीय अथवा लेखों के रूप में प्रस्तुत किया जाता है।

3) प्रचार कार्य पर अपेक्षाकृत कम लागत आती है। थोड़े व्यय द्वारा की गुना अधिक लोगों तक पहुँचा जा सकता है।

4) यह उत्पाद कोटि विशेष में दिलचस्पी बढ़ा सकता है। कुछ कंपनियों एवं व्यापार संघों ने अंड़ों व दूध जैसे पदार्थों में जनरूचि की पुनर्जागृत करने में प्रचार तथा जनसंपर्क का उपयोग सफलतापूर्वक किया है।

दोष -

1) विज्ञापनकर्ताओं के विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं के संपादकों द्वारा विज्ञापन सामग्री का मनचाहे उपयोग करने पर नियंत्रण का कोई साधन नहीं।

2) प्रसार माध्यमों में कार्यरत लोग उस सामग्री की अवहेलना कर देते हैं तथा उस पर ध्यान नहीं देते जिसे वे असामयिक और गैर दिलचस्प और गलत मानते हैं।

3) सामग्री के ध्यान योग्य होने पर भी, विज्ञापनकर्ताओं के पास ऐसे कोई साधन नहीं है जिसके द्वारा इसको अपनी इच्छानुसार उपयोग/प्रस्तुति को सुनिश्चित कर सकें।

2.13 प्रचार के साधन :-

जब भी कोई बड़ा उद्योग समूह एक चिकित्सालय या शोध संस्थान अथवा स्नातकोत्तर प्रबंध संस्थान की स्थापना करने की घोषणा करता है तो समाचारपत्र तथा टेलीविजन वाले विस्तृत जानकारी के लिए उनसे संपर्क करते हैं। समाचार एवं दिलचस्पी की दृष्टि से यह बड़ी उपयोगी घटना बन जाती है। इसी प्रकार जब एम.आर.एफ. कंपनी विश्व बाक्सिंग कप या रिलायंस कंपनी विश्व क्रिकेट चैम्पियनशिप या आई.टी.सी. संगीत सम्मेलन का आयोजन करती है तो इन सबके जरिए इन संख्याओं के संबंध में प्रचार भी होता है। इस प्रकार के अनेके साधन हैं। प्रचार के कुछ मुख्य साधन निम्नलिखित हैं :

(1) समाचार देना : -

सामान्यतः एक पृष्ठ की इस समाचार सामग्री का उद्देश्य प्रेस की संस्था के बारे में जानकारी देना होता है। समाचार सामग्री रोचक और प्रभावी होना चाहिए। इसके लिए विज्ञापनकर्ता को अधिकाधिक संपादकों तथा संवाददाताओं से अच्छे संबंध बनाकर रखना लाभदायक रहता है।

NMDC-130

(2) विशेष लेख : -

ये विस्तृत एवं पूरी मेहनत से तैयार किए जाते हैं और विशेष पत्र-पत्रिकाओं (विज्ञापनकर्ता के लिए व्यावसायिक दृष्टि से उपयोगी) में प्रकाशन के लिए दिए जाते हैं। इकानामिक टाइम्स तथा अन्य व्यापारिक पत्रिकाओं में छपने से इनका मूल्य कई गुना बढ़ जाता है। इनमें सामान्यतः कंपनी की पिछली उपलब्धियो, विस्तार योजनाओं तथा विविधीकरण योजनाओं की ही जानकारी दी जाती है।

(3) प्रेस वार्ता : -

कंपनी के महत्वपूर्ण भावी योजनाओं अथवा आयोजनों की घोषणा करने/जानकारी देने के लिए संवाददाता सम्मेलनों का आयोजन किया जाता है, जिनमें प्रसार माध्यमों के प्रमुख लोगों को आमंत्रित किया जाता है। उन्हें उस विशिष्ट आयोजन के संबंध में लिखित जानकारी, प्रकाशित सामग्री, फोटो आदि दिए जाते हैं, ताकि अपने पत्रों में वे उनका समुचित उपयोग कर सकें।

(4) संपादक को पत्र : -

समाचार पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित इन विशेष लेखों की प्रतिक्रिया के रूप में संपादक को पत्र लिखे जाते हैं।

(5) श्रव्य-दृश्य सामग्री : -

फिल्मों स्लाइडों, वीडियों और आडियों टेपों आदि सामग्री की टेलीविजन व रेडियो स्टेशनों को भेजकर उन्हें प्रसारित करने के अनुरोध किए जाते हैं।

स्व-परख प्रश्न

प्र01 विज्ञापन प्रचार के समान है अथवा भिन्न, समझाइये ?

....

....

प्र02 प्रचार के विभिन्न उपकरण के बारे में बताइये ?

....

....

प्र03 नीचे चार परिस्थितियाँ दी गई है। इनमें से किसे विज्ञापन अथवा प्रचार या इनमें कोई भी ''नहीं'' कहा जा सकता है?

i) एक ग्राहक एक टी.वी. शोरूम में जाता है। वहाँ दुकानदार उसे बताता है कि ब्रांड ''क'' ब्रांड ''ख'' के टी.वी. से किन कारणों से बेहतर है?

ii) एक पांच तारा होटल का एक उच्च अधिकारी एक बड़े यात्री एजेन्सी के महाप्रबंधक से मुलाकात करके उसे उक्त होटल में उपलब्ध सेवाओं की जानकारी देता है।

NMDC-130

iii) एक किराने की दुकान में लक्स साबून खरीदते हुए एक ग्राहक को यह बताया जाता है कि ''हमाम'' साबुन खरीदने पर उसे एक स्टेनलेस स्टील चम्मच मुफ्त मिलेगा। अतः वह हमाम साबुन खरीद लेता है। इसे आप क्या कहेंगे?

iv) एक टूथपेस्ट विज्ञापन में यह दावा किया गया है कि इसके उपयोग में दाँत एकदम सफेद चमकने लगते हैं। कुछ दिनों बाद दंत चिकित्सकों की एक बैठक में यह रहस्योद्घाटन किया जाता है कि टूथपेस्ट में दांतों में सफेदी लाने वाला कोई तत्व नहीं है।

2.14 सारांश :-

किसी पहचाने जा सकने वाले विज्ञापनकर्ता द्वारा विचारों, वस्तुओं तथा सेवाओं को अव्यक्तिगत रूप से शुल्क से देकर व्यक्त करना विज्ञापन कहलाता है। इसका उद्देश्य लोगों को प्रभावित करना होता है।

एक अच्छे एवं प्रभावी विज्ञापन में निम्नलिखित गुणों का होना अनिवार्य है-ध्यान आकर्षित करना, विश्वसनीय होना, आसानी से समझ में आना, याद रह सकने वाला होना। विज्ञापन के आधारभूत तीन उद्देश्य होते हैं: सूचित करना, ग्राहक को लुभाना,

लक्षित ग्राहक समुदाय को उत्पाद/सेवा या विचारच की याद दिलाना।

इन आधारभूत उद्देश्यों के अतिरिक्त अन्य सामान्यीकृत उद्देश्य भी होते हैं जैसेः नए उत्पाद की घोषणा करना, बाजार विस्तार एवं नए ग्राहक बनाना, उत्पाद में सुधार एवं नई विशिष्टताओं की जानकारी देना, विशेष ऑफर की घोषणा करना, स्टॉकिस्टों व वितरकों के नाम-पते बताना, ग्राहकों को शिक्षित एवं सूचित करना, उपभोक्ताओं को उत्पाद की याद दिलाना, स्टॉकिस्टों को संतुष्ट करना, ब्रांड आसक्ति पैदा करना।

विज्ञापन का एक मुख्य उद्देश्य उपभोक्ताओं के दृष्टिकोण एवं पसंद को इस प्रकार प्रभावित करना होता है, जिससे वह कंपनी विशेष के उत्पादों को वरीयता देने लगे और प्रभाव सोपान में दिए गए क्रम के अनुसार उत्पाद विशेष को खरीदने के लिए मानसिक रूप से तैयार हो सके।

विज्ञापन आज के युग में परिवार नियोजन, बेहतर स्वास्थ्य, मद्यनिषेध आदि सामाजिक उद्देश्यों की प्राप्ति में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। शैक्षिक एवं सूचनादाता के रूप में उनकी इस भूमिका का बड़ा महत्व है, जिसका उपयोग आज उत्तरोत्तर बढ़ रहा है। यह भी कहा जाता है कि विज्ञापन कीमतों में वृद्धि करता है, उपभोक्ता की सहजबुद्धि की अवहेलना करता है, असंतोष जगाता है, एकाधिकार की प्रवृत्ति बढ़ाता है और लोगों की आवश्यकताओं एवं अपेक्षाओं को बढ़ाता है। विज्ञापन कार्य में कार्यरत पाँच श्रेणियों के लोग होते हैं- विज्ञापनकर्ता, विज्ञापन एजेंसियाँ, सहायक संस्थाएँ, प्रसार माध्यम और उपभोक्ता।

NMDC130

माध्यम उस साधन को कहते हैं जिसके उपयोग में विज्ञापनदाता का संदेश उसके लक्षित श्रोता व दर्शक समूह तक पहुँचता है। माध्यमों के मुख्यतः चार प्रकार होते हैं, जैसे- प्रेस (समाचार पत्र, पत्रिकाएँ आदि) प्रसार माध्यम (रेडियो, टी.वी.) प्रत्यक्ष माध्याम (विशिष्ट विज्ञापन, निर्देशिकाएँ, व्यावसायिक संगठनों द्वारा आयोजित/प्रकाशित प्रकाशन, प्रत्यक्ष डाक आदि) माध्यम (होर्डिंग, बिलबोर्ड आदि)। माध्यम का चयन अंततः इन बातों पर निर्भर करता है :

1) विपणन मिश्रण के तत्व,

2) माध्यम की विशेषताएँ,

3) माध्यम की विशेषताएँ,

4) संदेश और

5) विज्ञापन के लिए आरक्षित बजट।

एक कम्पनी अथवा उसके उत्पादों, नीतियों, कर्मचारीवर्ग अथवा विशेष आयोजन आदि व्यापारिक महत्व वाली सूचना का गैर प्रायोजक समाचार प्रचार कहलाता है। प्रचार अव्यक्तिगत माध्यम द्वारा जनता के बीच किया जाता है और इसके लिए कम्पनी से शुल्क

नहीं लिया जाता। प्रचार के मुख्य साधन हैं समाचार सामग्री, विशेष लेख, संवाददाता सम्मेलन, संपादक को पत्र तथा श्रव्य-दृश्य सामग्री।

2.16 उपयोगी शब्द कोष :-

विज्ञापन माध्यम :- उन प्रचार साधनों को कहते हैं, जिनके उपयोग द्वारा विज्ञापनकर्ता का संदेश लक्षित जनसमूह तक पहुँचाता है।

प्रसार माध्यम :- वह माध्यम (रेडियो, टेलीविजन) जिससे संदेश प्रसारित होकर लोगों तक पहुँचता है।

प्रत्यक्ष विज्ञापन माध्यम :- वह माध्यम जिसके जरिए विज्ञापन लोगों के साथ सीधा सम्पर्क कायम करते हैं।

पुनरावृत्ति :- एक निश्चित अवधि के दौरान विज्ञापित संदेश की आवृत्ति लोगों तक जितने बार जाती है।

भौगोलिक चयन :- चुने हुए भौगोलिक क्षेत्रों में स्थित लोगों तक पहुँचने का माध्यम विशेष की सापेक्षिक क्षमता।

पहुँच :- एक निर्धारित अवधि में संदेश प्राप्त करने वाले लोगों या परिवारों की संख्या।

लक्षित जनसमूह :- वे सभी लोग जिनके लिए विज्ञापनकर्ता विज्ञापन देते हैं, इसकी परिभाषा में आते हैं। इसमें वर्तमान तथा संभाव्य दोनों प्रकार के ग्राहक/ उपभोक्ता आ जाते हैं।

2.17 महत्वपूर्ण प्रश्नावली :-

प्रश्न-1 "विज्ञापन साधनों का अपव्यय मात्र है" इस कथन से क्या आप सहमत हैं?

प्रश्न-2 विज्ञापन से क्या अभिप्राय है? इसमें और प्रचार में क्या अन्तर है?

प्रश्न-3 "कोई भी प्रसार माध्यम अपने आप में महत्वपूर्ण नहीं", इस कथन का विवेचन कीजिए।

प्रश्न-4 विज्ञापन के विविध माध्यमों का विवरण देकर उनके गुण-दोषों की व्याख्या कीजिए।

प्रश्न-5 विज्ञापन के लिए उपयुक्त माध्यम के चयन में किन बातों का ध्यान रखना आवश्यक है?

प्रश्न-6 प्रचार से क्या अभिप्राय है? प्रचार के विभिन्न माध्यमों का विवरण दीजिए।

प्रश्न-7 विज्ञापन एवं प्रचार में क्या अंतर है? प्रचार के लाभों एवं दोषों की व्याख्या

कीजिए।

प्रश्न-8 विज्ञापन एजेंसी किसे कहते हैं? विज्ञापन साधन सम्बन्धित निर्णयों में किन तत्वों पर विचार किया जाता है?

प्रश्न-9 (अ) एक विपणन यंत्र के रूप में विज्ञापन के कार्यों की विवेचना कीजिए।

(ब) एक विज्ञापन के प्रभावीपन का आप किस प्रकार मूल्यांकन करेंगे?

प्रश्न-10 विज्ञापन की परिभाषा दीजिए। आधुनिक व्यवसाय में विज्ञापन के उद्देश्य एवं उपयोगिता समझाइए।

प्रश्न-11 व्याख्या कीजिए-

(अ) विज्ञापन करने से लाभ होता है?

(ब) विज्ञापन पर व्यय की गयी धनराशि व्यर्थ जाती है।

प्रश्न-12 भारत में विज्ञापन के कौन-कौन से प्रारूप अधिक लोकप्रिय है?

प्रश्न-14 विक्रय वृद्धि में विज्ञापन का क्या स्थान है? विस्तार में समझाइए।

इकाई 3 : व्यक्तिगत विक्रय एवं विक्रय संवर्धन

इकाई रूपरेखा

3.0 उद्देश्य

3.1 प्रस्तावना

3.2 व्यक्तिगत विक्रय का तात्पर्य तथा प्रकृति

3.3 व्यक्तिगत विक्रय के प्रकार का महत्व

3.4 व्यक्तिगत विक्रय की युक्तियाँ

3.5 व्यक्तिगत विक्रय प्रक्रिया

3.6 विक्रयकर्ता तथा उसके गुण

3.7 वैयक्तिक विक्रय के लाभ

3.8 विक्रय संवर्धन परिचय तथा उद्देश्य

3.9 विक्रय संवर्धन के कार्य तथा महत्व

3.10 विक्रय संवर्धन के प्रमुख उपकरण

3.11 व्यक्तिगत विक्रय एवं विक्रय संवर्धन में अन्तर

3.12 भारत में विक्रय संवर्द्धन दशा और दिशा

3.13 सारांश

3.14 उपयोगी शब्दकोष

3.15 महत्वपूर्ण प्रश्नावली

NMDC-130

2.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययनोपरान्त आप छात्रगण -

- व्यक्तिगत विक्रय का तात्पर्य, प्रकृति, प्रकार एवं महत्त्व को विस्तार से समझा सकेंगे।
- व्यक्तिगत विक्रय के विभिन्न सिद्धान्तों का विवेचन कर सकेंगे।
- एक सफल विक्रय प्रक्रिया तथा उससे जुड़े विक्रयकर्ता के गुणों की व्याख्या कर सकेंगे।
- विक्रय संवर्द्धन के उद्देश्य, कार्य तथा महत्व को सरलता से आत्मसात कर सकेंगे, तथा

- विक्रय संवर्द्धन के विभिन्न उपकरणों के ज्ञान के साथ-साथ भारत में इसकी दशा और दिशा पर भी चर्चा कर सकेंगे।

3.1 प्रस्तावना

पिछली इकाई में आप ने संवर्द्धन मिश्र के दो प्रमुख उपकरणों, विज्ञापन और प्रचार का गहनता से विश्लेषण कर ज्ञान प्राप्त किया। इस इकाई में आप व्यक्तिगत विक्रय के साथ-साथ इसके विभिन्न सिद्धान्तों, प्रक्रिया तथा सीमाओं आदि का विस्तृत विवेचन किया जाएगा और एक अच्छे विक्रयकर्ता के गुणों को भी रेखांकित करने का प्रयास किया जाएगा। व्यक्तिगत विक्रय के साथ-साथ विक्रय प्रकृति का महत्व, उपकरण तथा भारत में इसकी दशा और दिशा की भी चर्चा की जाएगी जिससे आप सभी विद्यार्थीगण संवर्द्धन मिश्र के बचे हुए दोनों उपकरणों को भी आसानी से आत्मसात कर सकेगे।

3.2 व्यक्तिगत विक्रय का तात्पर्य तथा प्रकृति

व्यक्तिगत विक्रय कला, उपभोक्ता और विक्रेता के बीच ऐसा जनसंपर्क है, जिसका उद्देश्य आमने-सामने विचार-विमर्श द्वारा उपभोक्ता को अपना दृष्टिकोण स्वीकार करवाना और उसे एक निर्णय लेने पर राजी करना होता है। इस प्रकार व्यक्तिगत विक्रय मूलतः मानवीय संपर्क पर आधारित विक्रय संवर्धन किया है। इसमें अव्यक्तिगत और बृहत् संचार के बजाय व्यक्तिगत और मौखिक संचार होता है। व्यक्तिगत विक्रयकर्ता का कार्य मूलतः उपभोक्ता को केवल याद दिलाना, सूचना देना और उसको विक्रय के लिए तैयार करना होता है। सामान्यतः विक्रेता का दायित्व वर्तमान उपभोक्ता को कंपनी के उत्पादनों उत्पादों व सेवाओं के बारे में सूचित एवं संतुष्ट रखना और भावी उपभोक्ता को इनके बारे में बताना होता है। वे उपभोक्ता को कंपनी की विभिन्न रियायतों तथा उनकी सुविधा हेतु चलाई गई विक्रय योजनाओं की जानकारी भी उन्हें देते रहते हैं।

NMC-130

इस प्रकार एक व्यावसाय में वैयक्तिक विक्रय का अपना ही महत्व होता है। इसमें उत्पादों की विक्रय हेतु उपभोक्ता एवं विक्रयकर्ता के मध्य आमने सामने की चर्चा होती है जिसमें विक्रयकर्ता उपभोक्ता को प्रभावित कर अपने उत्पाद को विक्रय करने की चेष्टा करता है। अतः हम कह सकते हैं कि वैयक्तिक विक्रय में अकेल व्यक्तिगत सन्देश शामिल होता है जो अव्यक्तिगत सन्देश, विज्ञापन, विक्रय संवर्द्धन व अन्य संवर्द्धन उपकरणों के विपरीत होता है। वास्तव में व्यक्तिगत विक्रय काफी खर्चीला होता है। इसमें विक्रय प्रतिनिधि को अपने उत्पाद के बारे में विशिष्ट संदेश विकसित करने और इसे प्रभावपूर्ण ढंग से उपभोक्ताओं तक पहुँचाने के लिए पूर्णरूपेण प्रशिक्षित एवं पारंगत होना चाहिए।

व्यक्तिगत विक्रेता उपभोक्ता विशेष की पसंद और आवश्यकता के अनुसार तुरंन्त अपनी प्रस्तुति बदल लेता है और इसे उपभोक्ता के अनुरूप ढ़ालने में सक्षम होता है, जिसके सुखद परिणाम मिलते हैं। उधर समाचार पत्र, टी.वी. और रेडियो तथा बिक्री

संवर्धन के अन्य माध्यमों से अलग, एक व्यक्तिगत विक्रयकर्ता सीधे अपने उत्पाद को निश्चित उपभोक्ताओं पर ही केन्द्रित कर सकता है। तुरंत उपभोक्ता संतुष्टि का पता लगना और उनके द्वारा उत्पाद की स्वीकृति का पता लगाना व्यक्तिगत विक्रय का एक और महत्वपूर्ण लाभ है, जो उपरोक्त गैर व्यक्तिगत माध्यमों पर उपलब्ध नहीं होता।

इस प्रकार वैयक्तिक विक्रय में (1) विक्रयकर्ता व उपभोक्ता दोनों का एक-दूसरे से प्रत्यक्ष व्यक्तिगत सम्पर्क होता है (2) इसके द्वारा उत्पादों का विक्रय किया जाता है। (3) इसमें प्रस्तुतीकरण मौखिक रूप से किया जाता है। (4) यह सचार का एक तरीका है। (5) इसमें दोनों व्यक्तिगत और सामाजिक शामिल होता है।

एक वैयक्तिक विक्रय कार्य करने वाले को विक्रय-कार्य के अतिरिक्त बहुत से अन्य कार्य भी करने पड़ते हैं। बिक्री का रिकार्ड रखना पड़ता है, नये विक्रयकर्ताओं को प्रशिक्षण प्रदान करना पड़ता है। प्रबन्धक को सुझाव देने पड़ते हैं तथा संस्था की ख्याति को बनाना व बढ़ाना भी पड़ता है। एक व्यक्तिगत विक्रेता को साधरणतया अग्रलिखित दायित्वों का निर्वाहन करना पड़ता है।

(1) विक्रय - वैयक्तिक विक्रय का यह प्रमुख कार्य है जिसका दायित्व एक विक्रयकर्ता के कंधों पर होता है। विक्रय नये उपभोक्ताओं व पुराने दोनों प्रकार के उपभोक्ताओं को किया जाता है। नये उपभोक्ताओं के आदेश नये आदेश व पुराने उपभोक्ताओं के आदेश पुनः आदेश कहलाते हैं।

NMDC-130

(2) उपभोक्तान्मुखी व्यवहार - वैयक्तिक विक्रय का दूसरा कार्य उपभोक्तान्मुखी व्यवहार करना है। इसके लिए वह उत्पाद का प्रदर्शन करता है व उपभोक्ता को उचित सलाह देता है तथा इस बात को बताता है कि उत्पादों से सर्वाधिक सन्तुष्टि किस प्रकार की जा सकती है। साथ ही, उत्पाद को खराब होने से बचाने के लिए उचित कदम भी बताता है।

(3) विक्रय का ब्यौरा रखना - यह विक्रय का ब्यौरा अर्थात् रिकार्ड रखता है अर्थात् बिक्री किसको व किस मात्रा में व कब की गयी है इसका हिसाब रखता है। यदि विक्रयकर्ता यात्री विक्रयकर्ता हो तो इसकी अपनी रिपोर्ट भी विक्रय कार्यालय को निरन्तर भेजनी पड़ती है। इस रिपोर्ट में बहुत-सी सूचनायें होती है जो कि निर्णय लेने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई जाती है।

(4) प्रशासनिक दायित्व - इनको अल्पकालिक व दीर्घकालिक कार्यक्रम बनाने पड़ते हैं। यह अपने नये साथी विक्रयकर्ताओं को अपने साथ रखकर प्रशिक्षण के कार्यक्रम को आयोजित करता है। यह बाजार की व्यापारिक परिस्थितियों का अध्ययन कर प्रबन्धन को अपने सुझाव देता है व अपने साथियों व निरीक्षकों से मिलकर विपणन सम्बन्धी कठिनाइयों को भी सुलझाता है।

(5) अपनी एवं संस्था की ख्याति में वृद्धि करना - विक्रयकर्ता अन्य

बहुत से कार्य करता है जिससे उसकी व संस्था की ख्याति में निरन्तर बढ़ोत्तरी होती रहती है जैसे फुटकर विक्रेताओं के उत्पादों को प्रदर्शित करने में सहायता करना तथा लगातार उनको गुणवत्ता युक्त सेवा प्रदान करते रहना, आदि।

3.3 व्यक्तिगत विक्रय के प्रकार तथा महत्व :-

विक्रयकर्ता की विभिन्न स्थितियाँ इस प्रकार हैं : (1) क्रय आदेश लेना, (2) आदेश प्राप्ति, और (3) विक्रय समर्थन स्थितियाँ, इनमें से प्रत्येक के लिए विशेष कौशल एवं गुणों का होना आवश्यक है। आइए हम इनको क्रमशः समझने का प्रयास करें :-

(1) क्रय आदेश लेना :- विक्रयकार्य में लगे अधिकांश लोग नैत्यिक कार्य करते हैं जिनमें कल्पनाशील अथवा सृजनात्मक विक्रय की अधिक गुंजाइश नहीं होती। इन्हें क्रय आदेश लेने वाला या संग्राहक कहा जाता है। इन लोगों का कार्य केवल आदेशों को नोट करना और उनको समय पर सुपुर्दगी देना है। अधिकांश स्थितियों में खरीदे जाने वाले माल के प्रकार व मात्रा का ग्राहक पहले से ही निश्चत कर लेता है। आदेश-संग्राहक तीन प्रकार के होते हैं -

(1) वाहक विक्रयकर्ता - इस श्रेणी में पेय पदार्थों, दूध एवं पेट्रोलियम पदार्थों के विक्रयकर्ता आते हैं, इन लोगों का विक्रय संबंधी दायित्व विशेष नहीं होता। उनका कार्य केवल उपभोक्ता द्वारा आदेशित मात्रा में माल या पदार्थों की आपूर्ति करना है। थोड़ा अधिक विक्रय के कारण इन लोगों का उपभोक्ता से अच्छी घनिष्ठता हो जाती है।

(2) आंतरिक आदेश-संग्राहक - किसी दुकान के अउंटर पर बैठे हुए लिपिक को आंतरिक आदेश संग्राहक कहा जाता है। जब उपभोक्ता दुकान में आता है तब वह क्रय का निर्णय ले चुका होता है। वहां पर तैनात विक्रेता केवल उसके आदेश की पूर्ति करता है। ज्यादा से ज्यादा व उसे किसी अन्य उत्पाद को उपभोक्ता के समक्ष प्रस्तुत कर सकता है इस प्रकार के विक्रय कार्य में सृजनात्मक या कल्पनाशील प्रयास का विशेष स्थान नहीं होता है।

(3) बाह्य आदेश-संग्राहक - जो विक्रता खुले बाजार में या उपभोक्ताओं के पास जाकर उनके क्रय आदेश लेता है, उसे बाह्य आदेश संग्राहक कहते हैं। उदाहरण के लिए विक्रय प्रतिनिधि जो सामान्य उत्पादों की दुकानों को मंजन, साबुन एवं दैनिक आवश्यकता की अन्य उत्पाद विक्रय के आदेश देते हैं, इस श्रेणी में आते हैं। इन्हें छोटे-छोटे साधनों से दुकानों को माल आपूर्ति करते हुए हम अक्सर बाजार में देखते हैं। ये प्रत्येक दुकानदार से उसकी आवश्यकतानुसार उत्पाद के क्रय का आदेश नोट करते हैं तत्पश्चात् माल की आपूर्ति करते हैं।

(2) आदेश प्राप्ति

यह कार्य सामान्य प्रकार का नहीं है। इस श्रेणी के विक्रयकर्ताओं के उपभोक्ताओं और अपने उत्पादों के गुणों का वर्णन कर उन्हें क्रय के लिए तैयार कर उसे क्रय-आदेश प्राप्त करना होता है। क्रय के प्रकार व मात्रा विक्रेता की कुशलता एवं प्रभावित का निर्णय करती है।

आप देखेंगे कि आदेश संग्राहक का कार्य विक्रय बनाए रखना है, जबकि आदेश प्राप्त करने वाले का कार्य आदेश अर्जित करना है। इसके लिए उन्नत प्रकार की सृजनशीलता का होना अनिवार्य है। आदेश प्राप्तकर्ताओं के निम्नलिखित प्रकार हैं-

(1) मूर्त उत्पादों के सृजनशील विक्रेता - संदर्भ ग्रन्थों, वैक्युमक्लीनरों, कम्प्यूटरों, आदि के विक्रेता इस श्रेणी में आते हैं। यदि उत्पाद परिष्कृत प्रकार का है, तो विक्रय इंजीनियरों की सेवाओं का उपयोग लाभदायक रहेगा। यहाँ प्रतिभावान विक्रेताओं का उपयोग इसलिए भी ठीक होता है क्योंकि अधिकांश उपभोक्ताओं को उत्पाद के बारे में ज्यादा जानकारी नहीं होती और न ही उनमें यह योग्यता होती है कि वे यह समझ सकें कि नए उत्पाद के बारे में उनकी सुविधा में किस प्रकार वृद्धि होगी।

(2) सेवाओं के सर्जनशील विक्रेता - पर्यटन कार्यक्रमों, विज्ञापन और सलाहकार सेवाओं के विक्रेता इस श्रेणी में आते हैं। इन सेवाओं के अमूर्त होने के कारण इनका विक्रय मूर्त उत्पादों की तुलना में कही अधिक श्रम साध्य है।

(3) बिक्री समर्थन स्थितियाँ :-

यहाँ विक्रेता को क्रय आदेश लेने या इसके लिए प्रयास की आवश्यकता नहीं होती। उनका कार्य केवल निश्चित संस्था या सेवा के लिए सद्भावना के लिए कार्य करना, संवर्धन प्रयास आयोजित करना और उपभोक्ताओं को विभिन्न सेवाएँ प्रदान करना है। होटलों के जनसंपर्क अधिकारी तथा अन्य अधिकारी बड़ी कम्पनियों में जाकर बिना बुकिंग आदि की बात किए अपने होटल में उपलब्ध विशेष सुविधाओं की जानकारी देते हैं या फिर प्राप्त शिकायतों को दूर करने की सूचना या फिर नई सुविधा व्यवस्थाओं के बारे में बताते हैं। इसी प्रकार औषधि-निर्माता कंपनियों के मेडिकल प्रतिनिधि डाक्टरों के पास व्यक्तिगत रूप से जाकर नवनिर्मित दवाओं के बारे में बताते हैं और उन्हें मुद्रित सूचना सामग्री एवं सैम्पल प्रदान करते हैं। वस्तुतः उनका विक्रय तब स्वयमेव हो जाता है, जब डाक्टर मरीज के उपचार-पर्ची में उनकी कंपनी की बनी हुई दवा लिख देता है।

उत्पादों को बेचने का सबसे पुराना तरीका वैयक्तिक विक्रय है। व्यावसाय में जब से अदला-बदली की प्रथा आरम्भ हुई तभी से व्यक्तिक विक्रय का अभ्युिदय हुआ माना जाता है। आज भी वैयक्तिक विक्रय का बड़ा महत्त्व है और यही कारण है कि अमरीका

में कुल श्रमिक-शक्ति का 10 प्रतिशत विक्रय कार्यों में लगा हुआ है। वैयक्तिक विक्रय में अग्रलिखित महत्व है-

(1) विपणन प्रयत्न का मूल उद्देश्य उपभोक्ताओं को अधिकतम सन्तुष्टि देकर लाभों में निरन्तर वृद्धि करना है। वैयक्तिक विक्रय इस उद्देश्य की प्राप्ति में भरपूर सहयोग देता है। शायद इतना सहयोग विज्ञापन, विक्रय-संवर्द्धन व अन्य साधनों से भी नहीं हो सकता है।

(2) वैयक्तिक विक्रय बिक्री करने में सबसे अधिक प्रभावशाली उपकरण सिद्ध हुआ है। इसके द्वारा उपभोक्ता में आवश्यकता उत्पन्न कर उन्हें क्रय करने के लिए प्रेरित किया जा सकता है और क्रेता के हाव भाव के अनुसार विक्रयकर्ता अपने व्यवहार में उचित समायोजन कर सकता है। वैयक्तिक विक्रय तुलनात्मक अध्ययन व वर्णन के द्वारा शंकाओं का समाधान कर विक्रय के लिए एक पृष्ठभूमि तैयार करता है और उपभोक्ताओं में प्रेरणा जागृत कर विक्रय किया जाता है।

(3) वैयक्तिक विक्रय प्रबन्ध के लिए भी एक महत्वपूर्ण प्रक्रिया है। इसके माध्यम से विभिन्न प्रकार की सूचनाएँ एकत्रित की जा सकती हैं व उत्पादों को उसी अनुरूप परिवर्तन कर उपभोक्ताओं को और अधिक सन्तुष्ट किया जा सकता है।

(4) उपभोक्ताओं के लिए वैयक्तिक विक्रय महत्वपूर्ण है इसका कारण यह है कि (i) उत्पाद की कार्य प्रणाली का प्रदर्शन भी वैयक्तिक विक्रय में सम्मिलित किया जाता है। जिससे उपभोक्ता उसकी कार्य पद्धति से परिचित हो जाता है। कभी-कभी विक्रयकर्ता स्वयं से उसको चलाने का आग्रह करते हैं। (ii) वैयक्तिक विक्रय उपभोक्ताओं की शंकाओं एवं आपत्तियों का समाधान करता है और उनके लिए उस उत्पाद उपयोगिता को बताता है। (iii) वैयक्तिक विक्रय उपभोक्ताओं को इच्छित सूचनाएँ भी उपलब्ध करवाता है।

NMDC-130

अतः वर्तमान परिवेश में किसी भी निर्माता अथवा उत्पादक संगठन का अपने उपभोक्ताओं से व्यक्तिगत संपर्क न होना पूर्णतया असंभव है, क्योंकि इसके बिना संगठन चल ही नहीं पाएगा। अतः अनेक रूपों में व्यक्तिगत विक्रय आज के युग का सर्वाधिक प्रयुक्त विक्रय संवर्धन माध्यम माना जा सकता है। यहाँ तक कि लेखाकार, शेयर ब्रोकर, दंत चिकित्सक, वकील,प्रबंध-सलाहकार तथा अन्य पेशों के लोग भी इसी श्रेणी में रखे जा सकते हैं क्योंकि ये उपभोक्ताओं को अपनी सेवाएँ निश्चित शुल्क चुकाने के पश्चात् ही उपलब्ध करते हैं।

व्यक्तिगत विक्रय पर विपणन लागत का एक मुख्य भाग लग जाता है। अतः इसे लेकर प्रबंधक मंडल को विक्रय अभियान के आयोजन, संयोजन तथा विक्रयकर्ताओं के दल के चयन, प्रशिक्षण से तुष्टि एवं विकास आदि जटिल कार्य-पक्षों संबंधी निर्णय लेने पड़ते हैं। धन-व्यय की दृष्टि से व्यक्तिगत विक्रय सबसे महत्वपूर्ण संवर्धन का साधन है।

3.4 व्यक्तिगत विक्रय की चुनौतियाँ :-

व्यक्तिक विक्रय का प्रबन्धन कार्य प्रायः एक विक्रय प्रबन्धक के हाथों में होता है और वही विक्रय प्रतिनिधियों के नियोजन, प्रशिक्षण व उनके सुव्यवस्थित तथा क्रमबद्ध उपयोग के लिए उत्तरदायी होता है। उपरोक्त उत्तरदायित्वों के सुव्यवस्थित तथा प्रभावपूर्ण निर्वहन हेतु उन्हें अग्रलिखित कार्य करने पड़ते हैं, जिन्हें व्यक्तिगत विक्रय से सम्बन्धित युक्तियों की संज्ञा दी जाती है।

(1) व्यक्तिक विक्रय युक्ति में सर्वप्रथम वैयक्तिक विक्रय-व्ययों का निश्चय किया जाता है। इन व्ययों को निश्चित करने का आधार लक्षित बिक्री होती है जिसका निर्धारण आने वाले समय के लिए एक प्रबन्ध द्वारा पूर्व में ही कर लिया जाता है। यदि प्रबन्ध का लक्षित बिक्री-उद्देश्य पिछली बिक्री से अधिक है तो इसका तात्पर्य यह हो सकता है कि अधिक विक्रयकर्ताओं को भी नियुक्त करने की आवश्यकता हो और उनके निरीक्षण के लिए निरीक्षणों को भी नियुक्त करना पड़े। इन निरीक्षकों व विक्रयकर्ताओं को उनके पारिश्रमिक के अतिरिक्त कुछ अन्य व्यय भी देने पड़ते हैं, जैसे मार्ग व्यय। अतः वैयक्तिक विक्रय-व्याय को निर्धारित करते समय प्रबान्ध को निम्न कार्य करने पड़ते हैं - (i) एक तो प्रत्येक क्रिया द्वारा सम्पादित किये जाने वाले कार्यों का अनुमान व (ii) दूसरे उन अनुमानों को रूपयों के अनुमानों में बदलना।

NMC-130

वैयक्तिक विक्रय-व्ययों के निर्धारण से पूर्व सबसे पहले लक्षित बिक्री का अनुमान लगाकर उस पर होने वाले सकल संवर्धन व्ययों को निर्धारित कर लेना चाहिए। इसके बाद वैयक्तिक विक्रय-व्ययों का निर्धारण किया जाना चाहिए।

वैयक्तिक विक्रय-व्ययों में विक्रयकर्ताओं की भर्ती चयन का चुनाव प्रशिक्षण करने के व्यय, उनको प्रेरणा देने व निरीक्षण के व्यय व उनके प्रबंधन के व्यय आते हैं। अतः वैयक्तिक विक्रय-व्ययों का निर्धारण करते समय इस बात का ध्यान अवश्य ही रखा जाना चाहिए कि वे इतने अवश्य हों कि उपयुक्त वर्णित व्ययों को पूरा किया जा सके।

(2) "कार्य-विवरण एक विशिष्ट कार्य के उद्देश्य, कर्तव्यों एवं उत्तरदायित्वों का व्यापक कथन है।" इसमें मुख्य रूप से कार्य - सारांश, कर्तव्यों और दायित्वों का विवरण, प्रशिक्षण कार्य की दशाएँ कार्य के लिए वांछित उपकरणों, मशीनों एवं सामग्रियों का विवरण, शारीरिक एवं मानसिक गुण, वेतन एवं भत्ते आदि, बातें लिखित रूप से आती हैं।

विक्रय-प्रबन्ध का प्रथम व सबसे महत्वपूर्ण कार्य, कार्य-विवरण तैयार करना है। यह कार्य-विवरण बिल्कुल स्पष्ट, पूर्ण एवं उचित होना चाहिए। वैयक्तिक विक्रय युक्ति आवश्यक अंग है। इसी के आधार पर प्रबन्ध के द्वारा उन गुणों एवं योग्यताओं का निर्धारण किया जाता है जिनका एक विक्रयकर्ता में होना अनिवार्य है। इसी के आधार पर पारिश्रमिक व निरीक्षण योजनाएँ बनायी जाती हैं और यही कार्य-विवरण प्रबन्ध के

लिए मांग-प्रदर्शन का कार्य करता है।

कुछ अच्छी कम्पनियाँ कार्य-विवरण के साथ-साथ एक प्रमाप-कार्य का विवरण भी तैयार करती है जिससे कि आगे चलकर एक विक्रयकर्ता के कार्य की तुलना उस प्रमाण-कार्य के विवरण से करके उसके कार्य का मूल्यांकन किया जा सके।

साधारणतया प्रत्येक प्रकार के उत्पाद के विक्रयकर्ताओं के लिए एक से ही कर्तव्य एवं दायित्व होते हैं लेकिन विक्रय पदों का स्वागत एक कम्पनी से दूसरी कम्पनी में भिन्न होता है। साथ ही प्रत्येक कम्पनी के लक्ष्य भी भिन्न होते हैं। इसका कारण यह है कि प्रत्येक कम्पनी अपनी-अपनी विपणन युक्ति अपनाती है।

(3) विक्रय बल में परिवर्तन की दर - साधारणतया प्रत्येक संस्था में प्रति वर्ष कुछ विक्रयकर्ता इस्तीफा दे जाते हैं, सेवानिवृत्ति हो जाते हैं या किन्हीं कारणों से अलग कर दिये जाते हैं। व्यक्तिक विक्रय के नियोजन में इस बात का भी ध्यान रखना पड़ता है कि प्रतिवर्ष इन उपर्युक्त वर्णित कारणों में कितने प्रतिशत विक्रयकर्ता संस्था से अलग नियोजन होगें जिससे कि उनके स्थान पर नये विक्रयकर्ता नियुक्त करने के लिए पहले से ही उचित कर लिया जाये। जिस दर से विक्रयकर्ता निवृक्त होते हैं उसी दर को विक्रय शक्ति के बदलने की दर कहते हैं। इस दर को प्रतिशत में निकालने के लिए निम्नलिखित सूत्र काम में लाया जाता है :-

NMDC-130

$$\text{विक्रय बल के बदलने की प्रतिशत दर} = \frac{\text{अलग होने वाले विक्रय की संख्या}}{\text{विक्रय बल का औसत आकार}} \times 100$$

विपणन से सम्बन्धित सभी व्यक्ति जानते हैं कि नये विक्रयकर्ताओं को प्रशिक्षित करने में व्यय होता है। अतः विपणन प्रबन्धक को इस विक्रय बल के परिवर्तन की दर निम्न से निम्न रखने का प्रयास करना चाहिए। यदि दर बढ़नी है तो विक्रय बल के प्रबन्ध व्यय भी बढ़ते हैं। इसके साथ-साथ जितना व्यवसाय पुराने विक्रयकर्ता दे पाते हैं उतना नये विक्रयकर्ता नहीं दे पाते हैं।

(4) विक्रय बल का आकार - विक्रय बल का आकार कितना बड़ा हो यह संस्था की अनुमानित बिक्री व उससे सम्बन्धी उद्देश्यों पर निर्भर करती है इसके साथ-साथ एक विक्रयकर्ता का कार्य-विवरण भी आवश्यक है जिससे कि यह अनुमान लगाया कि एक विक्रयकर्ता कितने रूपये का उत्पाद विक्रय कर सकता है। लेकिन ऐसा करते समय विक्रय बल के बदलने की दर का ध्यान सदैव रखना चाहिए। इस प्रकार विक्रय बल को निकालने के लिए अग्रसूत्र काम में लाया जा सकता है।

N = विक्रयकर्ताओं की संख्या

S = बिक्री का पूर्वानुमान

P = एक विक्रयकर्ता की विक्रय क्षमता

T = विक्रय शक्ति के बदलने की दर

3.5 व्यक्तिगत विक्रय की चुनौतियाँ :-

जैसा कि हम जानते हैं कि व्यक्तिगत विक्रय प्रक्रिया के निम्न लक्ष्य होते हैं-

(1) भावी उपभोक्ताओं व उपभोक्ताओं का पूर्वेक्षण करना।

(2) उन्हें अपने उपभोक्ता बनाना और

(3) इन्हें संतुष्ट और स्थाई उपभोक्ता बनाए रखना। इन तीनों उद्देश्यों की सफलता प्राप्ति में व्यक्तिगत विक्रय महत्व की भूमिका निभाता है।

व्यक्तिगत विक्रय प्रक्रिया जिसे कल्पनाशील विक्रय प्रक्रिया कहते हैं, इनमें मूलतः विक्रेता द्वारा भावी उपभोक्ता का पता लगाना व पहचानना, उसे अपना माल खरीदने के लिए राजी करना और नियमित रूप से अपना उपभोक्ता बनाये रखना, ये तीन कार्य आते हैं। इस प्रकार इस प्रक्रिया में निम्नलिखित चरण सम्मिलित किये जाते हैं।

(1) पूर्वेक्षण करना, (2) उससे मिलने की तैयारी करना, (3) मुलाकात अथवा व्यक्तिगत संपर्क, (4) विक्रय प्रस्ताव, (5) शंकाओं व आपत्तियों का निराकरण, (6) विक्रय संपन्न करना और (7) विक्रयोत्तर सेवा। आइये अब इन्हें क्रमशः समझने का प्रयास करें।

NMDC 30

(1) पूर्वेक्षण करना - अपने उत्पाद के भावी उपभोक्ता का पता लगाना, उसे पहचानना और उसे अपना भावी उपभोक्ता के रूप में देखने की क्रिया को पूर्वेक्षण करना कहते हैं।

विक्रयकर्ताओं द्वारा अपने स्थाई उपभोक्ताओं से संपर्क साधना विक्रय क्रिया का ही एक अंग है। वस्तुतः व्यापार में वृद्धि के लिए नित नए, उपभोक्ताओं का पता लगाना नितान्त आवश्यक है, जिसमें पहला कदम सूत्रों का सृजन करना है। विक्रय के संदर्भ में विक्रय सूत्र उन लोगों या संस्थाओं को कहते हैं जिन्हें विक्रयकर्ता द्वारा प्रस्तुत उत्पादों की आवश्यकता होती है। इसका प्रमुख स्त्रोत व्यापार पत्रिका एवं व्यापार निर्देशिका तथा विज्ञापन संबंधी पूछताछ (जैसे-विज्ञापन के प्रत्युत्तर में लौटाए गए कूपन आदि), समाचार पत्रों में प्रकाशित व्यावसायिक स्तंभ, व्यापार मेरे और यहाँ तक कि वर्तमान उपभोक्ता भी है। वाणिज्यिक संघ तथा सरकारी पत्र पत्रिकाएँ भी इस संबंधी सूचनाओं के उपयोगी साधन हैं। परन्तु ये भी निश्चित सूत्र के लिए भावी उपभोक्ता को उत्पाद संबंधी आवश्यकता की पुष्टि का संकेत देना होता है। साथ ही उसकी क्रयशक्ति असंदिग्ध हो और वह क्रय संबंधी निर्णय लेने में सर्वरूपेण समर्थ एवं अधिक संपन्न हो। एक अन्य

तत्व यह भी देखना होगा कि प्राप्त क्रय-आदेश संतोषजनक है अर्थात् कितना बड़ा है। केवल वही कम्पनियाँ या व्यक्ति जो इन शर्तों को पूरा करते हैं, पत्र-ग्राहक कहलायेंगे।

(2) पूर्व तैयारी : भावी उपभोक्ता एवं क्रेता से मिलने या व्यक्तिगत संपर्क के लिए पूर्व तैयारी अत्यंत आवश्यक है। इसमें उपभोक्ता के विषय में जानकारी, उत्पाद-सम्बन्धी आवश्यकताओं, व्यक्तिगत भाव, एवं गुण-दोष का ज्ञान आदि जानकारी का होना लाभदायक होगा। जानकारी समग्र और यथासंभव विस्तृत होनी चाहिए। उदाहरण के लिए किसी व्यक्ति विशेष के मामले में उसकी आयु, विवाहित या अविवाहित स्थिति, रूचि एवं पसंद, व्यापार में कितने वर्षो से है, शिक्षा-स्तर आदि की जानकारी होना आवश्यक है, जब कि कम्पनी के मामले में उसकी पृष्ठभूमि, निर्मित उत्पादों का प्रकार, वर्तमान आपूर्तिकर्ताओं का नाम/पता, वास्तविक माँग, कंपनी के अधिकारीगण और महत्वपूर्ण अधिकारी, इत्यादि जानकारी का होना महत्वपूर्ण होगा। इस जानकारी से विक्रयकर्ता को निम्नलिखित प्रकार से लाभ मिलेगा।

(1) इससे उसे अपने उत्पाद के विक्रय प्रस्ताव के प्रस्तुतीकरण में भूल से बचने में मदद मिलेगी। उदाहरणार्थ, वह भावी उपभोक्ताओं के साथ वार्तालाप के दौरान उन दृष्टिकोणों की आलोचना करने से बचने का प्रयास करेगा, जो भावी सोच के अंग हैं। यदि ऐसी सावधानी या पूर्व जानकारी उसे न होगी, तो निश्चय ही भावी उपभोक्ताओं विक्रयकर्ता की छुट्टी कर देगा।

NMDC-13

(2) पूर्व जानकारी की सहायता से विक्रयकर्ता भावी उपभोक्ता की पसंद के अनुसार उससे मिलने की तैयारी कर सकता है।

(3) पूर्व तैयारी के दौरान विक्रयकर्ता को कई समान रूचि के विषयों की जानकारी भी मिल सकती है। जैसे-वह और भावी ग्राहक दोनों तैराकी या क्रिकेट के शौकिन हैं या फिर कोई और रूचि दोनों में है, इत्यादि। इससे विक्रयकर्ता अधिक आत्मविश्वास के साथ भावी उपभोक्ता से वार्ता कर सकेगा और यह समानता ही बातचीत की शुरूआत बिन्दु हो सकती है। प्रायः यह कहा जाता है भावी उपभोक्ता के विषय में थोड़ी सी सूचना भी उत्पाद के लिए उपयोगी सिद्ध हो सकती है।

(3) व्यक्तिगत संपर्क : इसमें भावी उपभोक्ता से शुरूआत संपर्क एवं घनिष्ठता स्थापित करना आदि कार्य आते हैं। वस्तुतः यह वह विधि है, जिससे विक्रेता भावी उपभोक्ता से संपर्क साधता है और उसका ध्यान एवं रूचि अपनी ओर आकर्षित करने में सफल होता है। इसमें उसका प्रथम प्रभाव कैसा रहता है, इसी से उपभोक्ता का कुल व्यावहार प्रभावित होगा। इससे लगभग यह तय हो जायेगा कि विक्रेता एवं उपभोक्ता को बीच एक स्थायी संपर्क एवं संबंध हो सकेगा या नहीं। पूर्व तैयारी में एकत्रित जानकारी इस दौर में भी बहुत लाभदायक सिद्ध होगी। उदाहरण के लिए, पूर्व तैयारी में

ही विक्रेता को इस बात की सूचना प्राप्त हो जाती है कि उपभोक्ता को अपने उत्पादों के परिवहन पर अत्यधिक व्यय करना पड़ता है। अतः अपनी बातचीत में वह उसे अपेक्षाकृत कम खर्चीला और अधिक सुविधाजनक माध्यम सुझा सकता है, जिसके परिणामस्वरूप भावी उपभोक्ता की लागत कम होगी और उसका व्यय बचेगा। उपभोक्ता की रूचि जगाने एवं उसका ध्यान आकषिरत करने का सबसे अचूक तरीका उसे लागत में कमी और बचत में वृद्धि की राह दिखाना है।

भावी उपभोक्ता से मिलने का एक अन्य उपयोगी तरीका परिचित की सिफारिश पर मिलना है। यह परिचित वर्तमान संतुष्ट उपभोक्ता भी हो सकता है। यहाँ पर विक्रयकर्ता का पहनावा, उसके बातचीत का ढंग, हाव-भाव, आत्मविश्वास आदि भी काफी सहायक होती है।

(4) प्रस्तुतीकरण : यह विक्रयकर्ता का अंतिम चरण है। इसमें भावी उपभोक्ता को अपने उत्पाद के गुणों तथा क्रय कार्य के विवरण की जानकारी दी जाती है। भावी उपभोक्ता को उत्पाद के प्रकार एवं उसकी कार्यशैली का सही-सही अनुमान एवं जानकारी देने के लिए इस्लाइडों, तस्वीरों, वीडियो का उपयोग लाभदायक होता है।

प्रस्तुतीकरण में कई विधियों का उपयोग किया जाता है। (1) इसमें अधिकतर प्रचलित विधि ''ए0आई0डी0ए0'' प्रस्तुति है। इसमें विक्रयकर्ता भावी ग्राहक के ध्यानाकर्षण से लेकर रूचि जगाने, इच्छा उद्दीप्त करने तथा क्रय करने पर राजी होने तक सभी प्रक्रिया का निर्देशन करता है। (2) दूसरी विधि में, पूर्व तैयारी की प्रस्तुति अपनाई जाती है। यहाँ विक्रयकर्ता बहुत ही अच्छे ढंग से बातचीत करता है, जिसमें ग्राहक की प्रतिक्रिया शुरू करने, उसे प्रेरित करने और उसे कार्यरूप देने तक की प्रक्रिया पर जोर दिया जाता है। इसीलिए इस विधि को उद्दीपन-प्रतिक्रिया विधि कहते हैं।

उद्दीपन-प्रतिक्रिया के इस प्रस्तुतीकरण में विक्रयकर्ता को उन सभी कारकों को एकत्र करता है, जो भावी उपभोक्ता के विषय में कारगर हो सकें। उत्पाद-गुणों को भी विक्रयमूलक तत्वों की तरह प्रस्तुत किया जाता है ताकि भावी उपभोक्ता उसकी उपयोगिता से प्रभावित होकर उत्पाद-विक्रय के लिए तैयार हो। उदाहरण के लिए किसी उपभोक्ता के लिए यह इतने महत्व की बात नहीं है कि अमुक साबुन नीबू के तत्व या नहीं, परन्तु इसके प्रस्तुतीकरण में इसके लाभ-दृष्टि को ध्यान में रखते हुए प्रस्तुत करना होगा। जैसे- यह कहना कि इसके कारण कपड़ों की धुलाई अच्छी होगी, यह हाथ खराब नहीं करेगा, आदि। इन लाभों से संभवतः भावी उपभोक्ता अधिक प्रभावित होगा।

प्रायः प्रस्तुतीकरण के नाम अधिकाश गुणों का वर्णन इस उद्देश्य से किया जाता है कि भावी उपभोक्ता को प्रस्तुत उत्पाद से क्या-क्या लाभ हैं या उसके अपेक्षाएँ क्या हैं। विभिन्न तकनीकों द्वारा इन सभी सच्चाइयों की सत्याता का पता लगाया जा सकता है।

आपत्तियों का समाधानः यदि भावी उपभोक्ता सामन करता है तो स्पष्ट है कि आपके उत्पाद में उसकी रूचि नहीं है। यदि उत्पाद में उसकी रूचि है भी, तो हो सकता है कि उसे उत्पाद की उपयोगिता के विषय में कुछ शंका हो। इन शंकाओं के कारण विक्रय उपयोगिता के विषय में कुछ शंका हो। इन शंकाओं के कारण विक्रय प्रक्रिया में व्यवधान आता है। अतः विक्रयकर्ता को इनके बारे में उपभोक्ता के दृष्टिकोण को पूर्णतया समझने और इन शंकाओं के निराकरण पर ध्यान देना चाहिए, ताकि विक्रयकार्य सफलतापूर्वक संपन्न हो सके।

भावी उपभोक्ता के संतुष्ट न होने पर विक्रयकर्ता को अस्पष्ट बातों की ओर अधिक विस्तृत व्याख्या करनी चाहिए। ताकि कोई शंका शेष न रहे।

उदाहरण के लिए, वाशिंग मशीन के विक्रय के विषय में ग्राहक यह जानना चाहेगा कि उसमें साधारण वाशिंग पाउडर उपयोग किया जा सकता है या नहीं। विक्रेता को उपभोक्ता पूर्ण संतोष के लिए यह बताना होगा कि ऐसा करने के क्या लाभ होगा या क्या हानि हो सकती है। अच्छे विक्रयकर्ता सदैव भावी उपभोक्ताओं की शंकाओं पर आपत्तियों पर पूरा ध्यान देते हैं और उनका पूर्ण निराकरण करते हैं, ताकि कोई संदेह न रहे और प्रेम व सहयोग सदा बना रहे।

दूसरी ओर, उपभोक्ताओं की आपत्तियों को ही तर्क के रूप में प्रयुक्त किया जा सकता है। उदाहरण के लिए, एक स्टॉक-ब्रोकर कहेगा, ''नरेन्द्र जी ठीक कहते हैं कि इस स्टॉक का दाम पिछले 6 महीनों में 50 प्रतिशत गिर गया है। लेकिन इसलिए मैं आपको इसे खरीदने के लिए कह रहा हूँ कि कम दाम का फायदा आप उठा लें। इस दाम में यह सौदा बढ़िया रहेगा'' साथ ही यह भी ध्यान रहे कि ऐसा करते समय बढ़ाने या उपभोक्ता को नीचे दिखाने का प्रयास न किया जाए, क्योंकि हो सकता है कि आप बहस में जीत जाएँ, परन्तु उपभोक्ता आपके पास नहीं जाए। अतः उक्त उदाहरण से हम यह सीख सकते हैं कि उपभोक्ता बदल सकते हैं। यहाँ पर यह महत्वपूर्ण तथ्य ध्यान देने योग्य है कि आपत्ति अथवा शंका की स्थिति इस बात की सूचक होती है कि उपभोक्ता ने उत्पाद खरीदने का इरादा बना लिया है जो एक शुभ संकेत है।

NIDC-130

(5) विक्रय संपन्न करना - प्रायः यह कहा जाता है कि यदि विक्रयकर्ता अपने वार्तालाप में अपने उत्पाद का क्रय आदेश प्राप्त नहीं करता तो इसे केवल समय का अपव्यय और अपने प्रतियोगी के लिए रास्ता साफ कहा जाएगा। प्रस्तुतीकरण को उसके निर्यात बिन्दु तक पहुँचाना और उसको क्रय आदेश देने तक लाना ही विक्रय संपन्न करना कहलाता है।

कभी-कभी भावी उपभोक्ता यह जानना चाहता है कि उत्पादों की सुपुर्दगी कब तक की जाएगी। उस दशा में विक्रयकर्ता इसका उपयुक्त उत्तर देकर, क्रय आदेश पर उपभोक्ता के हस्ताक्षर से विक्रय संपन्न कर सकता है।

(6) आजमाइश-समापन - "विक्रय संपन्न करने का एक अन्य तरीका है, जिसमें यह लाभ है कि इसमें यह सुनिश्चित हो जाता है कि उपभोक्ता से उत्पाद खरीदने का निर्णय ले लिया है या नहीं। यदि वह निम्न प्रश्नों का उत्तर हाँ में देता है, जैसे-आप कौन सा रंग पसंद करेंगे, "कौन सा माडल लेना चाहेंगे", या "आपको माल की सुपुर्दगी कब चाहिए", "क्या आप चौक द्वारा भुगतान करेंगे या नकद" तो यह समझना चाहिए कि वह खरीदारी के लिए तैयार हो चुका है।

(7) विक्रयोपरान्त सेवा - क्रय आदेश प्राप्त कर लेना ही विक्रय-प्रक्रिया का अंतिम चरण नहीं है बल्कि यह मात्र एक शुरूआत है। उपभोक्ता को उसके बाद वायदे के अनुसार ठीक हालत में माल भेज दिया गया, उसकी सुपुर्दगी समय पर हो गई, आदि बातों को भी सुनिश्चित करना पड़ता है। एक श्रेष्ठ विक्रयोपरान्त सेवा नियमित एवं पक्के ग्राहक बनाने और व्यापार में वृद्धि करने का अचूक साधन है। इसके साथ ही ग्राहक को यह विश्वास दिलाना भी आवश्यक है कि उसने आज का उत्पाद खरीद कर सही निर्णय लिया और भविष्य में किसी भी प्रकार की सेवा व परेशानी में विक्रयकर्ता को विश्वासपूर्वक बुलाया जा सकता है।

स्वपरख प्रश्न -

1. व्यक्तिगत विक्रय प्रक्रिया के विभिन्न चरणों का विवरण दीजिए।

NMDC

....

....

....

2. व्यक्तिगत विक्रय प्रक्रिया के संपर्क एवं प्रस्तुतीकरण के चरणों में क्या अंतर है।

....

....

....

3. नीचे दिए गए शब्दों में से उपयुक्त शब्द सुनकर रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए।

(i) विक्रयकर्ता व्यक्तिगत विक्रय के ....चरण को दौरान भावी ग्राहकों तथा सामर्थ्य का पता लगाते हैं। (पूर्व-संपर्क/पूर्वेक्षण/संपर्क/प्रस्तुति/विक्रय संपन्न करना)

(ii) चंदर ने कई भावी ग्राहकों का पता लगाया है और उनकी प्रमाणकर्ता की परख भी की है। अब वह विक्रय के ....चरण को शुरू करने वाला है। (प्रस्तुति/संपर्क/पूर्व-संपर्क/शंका निवारण/विक्रय समापन)

(iii) ए0आई0डी0ए0 सिद्धान्त का उपयोग व्यक्तिगत विक्रय प्रक्रिया के ....चरण के दौरान किया जाता है।

(प्रस्तुति/पूर्व-संपर्क/संपर्क/पता लगाना/शंका निवारण)

(iv) अमित एक सफल विक्रयकर्ता है और उसके अधिकांश ग्राहक हैं। अमित व्यक्तिगत प्रक्रिया का ....पूरा कर रहा है।

(पूर्वेक्षण करना/संपर्क/प्रस्तुति/विक्रयोपरांत सेवा/विक्रय संपन्न करना)

3.6 विक्रयकर्ता तथा उसके गुण :-

किसी भी स्थिति में विक्रय कार्य एक समान नहीं होते। उत्पादों का प्रकार ही विक्रेताओं/विक्रयर्ताओं में अपेक्षित गुणों तथा योग्यताओं का निर्धारक तत्व है। एक कम योग्यता की अपेक्षा वाले विक्रय कार्य में योग्यता वाले विक्रयकर्ता को लगा देना उसकी नैसर्गिक योग्यता एवं प्रतिभा का अपव्यय ही माना जाएगा। दूसरी ओर, नियुक्त स्थान में अभीष्ट से असंगत योग्यता वाले विक्रयकर्ता को लगाने से परिणाम निराशाजनक ही होगा।

विक्रयकर्ता अन्य कर्मचारियों से किस प्रकार भिन्न है? एक अच्छे विक्रेता में किन-किन गुणों का होना अनिवार्य है, इस पर चर्चा करने से पूर्व हमारे लिए यह जान लेना लाभदायक होगा कि विक्रेता तथा अन्य कर्मचारियों में क्या अंतर होता है। अन्य कर्मचारियों से विक्रेता निम्नलिखित प्रकार से भिन्न होते हैं-

NMDC-

(1) विक्रेता विशेष रूप से ग्राहक के समक्ष और सामान्यतः समाज में कंपनी के प्रतिनिधि के रूप मे उपस्थित होते हैं। प्रायः उनके प्रथम परिचय एवं प्रभाव पर ही जनमानस में उनकी कंपनी की छवि बनती है। वह जन सामान्य कंपनी के कर्मचारियों या फैक्ट्री में कामगारों को देखकर उसके बारे में अपनी राय नहीं बनाता।

(2) कार्यालय अथवा फैक्ट्री में काम करने वाले कर्मचारी कड़े निरीक्षण में कार्य करते हैं, जबकि विक्रेता पर निरीक्षण बिल्कुल नहीं या नाममात्र का होता है। किसी भी विक्रेता को एक क्षेत्र और लक्ष्य सौप दिए जाने के बाद वह स्वतंत्र रूप से कार्य करता है।

(3) विक्रेता का कार्य शारीरिक एवं मानसिक दृष्टि से श्रम साध्य होता है। उसमें नैसर्गिक प्रतिभा की भी महत्वपूर्ण भूमिका होती है। साथ ही विक्रय में प्रेरणा अथवा प्रेरक तत्वों का होना भी आवश्यक है, जबकि कार्यालय में काम करने वाले कर्मचारियों में अपेक्षाकृत यह कम हो होती है।

(4) अपने समस्त कर्मचारियों की तुलना में विक्रेता में निपुणता और सामाजिक व्यवहार कुशलता का होना अधिक आवश्यक है। कई विक्रय कार्य ऐसे हैं जिनमें

उपभोक्ताओं सामाजिक परिवेश में मेल-जोल (जैसे-वरिष्ठ अधिकारियों आदि) एवं व्यवहार की आवश्यकता होती है। अतः विक्रेता के सामाजिक शिष्टाचार में निपुण होने से व्यापार-संवर्धन काफी सरल हो जाता है।

(5) विक्रताओं को काफी यात्रा करने तथा घर-परिवार से बाहर रहने की आवश्यकता पड़ती है। शारीरिक असुविधा के अलावा, ऐसा करने में उन्हें काफी मासिक तनाव तथा शारीरिक असुविधाओं का भी सामना करना पड़ता है। कई बार निराशा का भी मुँह देखना पड़ता है। अतः विक्रयकर्ता में संलग्न व्यक्ति का मानसिक रूप से सुदृढ़ एवं शारीरिक रूप से सक्षम एवं स्वस्थ होना भी नितांत आवश्यक है।

अच्छे विक्रयकर्ता के गुण

यद्यपि विभिन्न प्रकार के विक्रय कार्यों के लिए विभिन्न प्रकार की योग्यताओं का होना अभीष्ट है, फिर भी कुछ गुण एवं योग्यताएँ ऐसी हैं जिनका होना मूल रूप से विक्रय कार्य में आने वाले सभी व्यक्तियों के लिए अनिवार्य है। किस गुण एवं योग्यता का लाभ किस विक्रय कार्य में होगा, यह उसके प्रकार पर निर्भर करता है।

(1) शारीरिक गुण :- इसका संबंध व्यक्ति के स्वास्थ्य और व्यक्तित्व से है क्योंकि अधिकांश विक्रयकार्यों को लंबी यात्राओं और बहुत बार यात्रा आदि पर जाने की आवश्यकता पड़ती है और कई बार लगातार यात्रा करनी पड़ती है, इसलिए विक्रेता का पूर्णतय स्वस्थ होना आवश्यक है। अच्छे स्वास्थ्य का व्यक्ति को मानसिक स्तर एवं कार्य-कुशलता पर भी प्रभाव पड़ता है। शारीरिक रूग्णता से मानसिक तनाव का आ जाना स्वाभाविक है। साथ ही आकर्षक दिखाना भी अति महत्वपूर्ण है। इसका अर्थ है, साफ सुथरी पोशाक तथा चुस्त दिखावट। विक्रेता के ये गुण अपरिहार्य हैं।

(2) संवाद-पटुता - सफल एवं प्रभावशाली विक्रयकार्य के लिए दो तरफा लाभ पूर्ण संवाद आवश्यक है। विक्रय कार्य के सफल निष्पादन के लिए विक्रेता द्वारा अपने तर्कों का आकर्षक एवं प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत करना बहुत महत्वपूर्ण है। इससे भावी उपभोक्ता को राजी करने एवं उत्पाद के क्रय के लिए तैयार करने में मदद मिलती है। इसका तात्पर्य यह है कि विक्रेता के लिए अच्छा वक्ता, भाषा पर अधिकार, अच्छी शैली और दूसरों की बात सुनने का धैर्य आदि गुणों का होना बहुत आवश्यक है। विक्रेता को न केवल अच्छा वक्ता बल्कि अच्छा और धैर्यवान श्रोता होना भी आवश्यक है।

(3) बौद्धिक गुण - अन्वेषण योग्यता, बुद्धिमत्ता और तीव्र सूझ-बूझ भी एक सफल विक्रेता के लिए जरूरी है। उसमें उपभोक्ता की विभिन्न शंकाओं और शिकायतों को समझने एवं उसके समाधान की योग्यता होना बहुत लाभदायक होता है।

(4) शिक्षा एवं अनुभव - एक विक्रेता में अपने कार्य के लिए अपेक्षित शैक्षिक योग्यताओं का होना अनिवार्य है। अधिकांश स्थितियों में स्नातक स्तर तक शिक्षा

(बिक्री इंजीनियर करे पद को छोड़कर) न्यूनतम योग्यता मानी जाती है। ऐसे पद जिनमें अनुभव अपेक्षित होता है, कार्य अनुभव पर भी अधिक बल दिया जाता है।

(5) उत्साह - विक्रेता में पर्याप्त उत्साह का होना भी लाभदायक होता है। यह विशेषकर उस स्थिति में लाभदायक होता है। जहाँ विशेष प्रतिभा की आवश्यकता होती है। उसे अपनी कम्पनी और अपने उत्पाद पर गर्व होना चाहिए और इसके लिए उसे इसका संपूर्ण ज्ञान होना अभीष्ट है। साथ ही बाजार स्पर्धा का सम्यक् ज्ञान उसे किसी भी स्थिति से सफलतापूर्वक निपटने में सक्षम बनाता है। उत्साह तथा कर्तव्य निष्ठा ऐसे गुण हैं, जिनका प्रभाव भावी ग्राहकों पर भी पड़ता है।

(6) शालीनता - आदेश-संग्रहकों सहित सभी प्रकार के विक्रेताओं के लिए सद्व्यवहार एवं शालीनता अपरिहार्य गुण हैं। उन्हें ग्राहकों की बात ध्यानपूर्वक सुनना और शिष्टतापूर्ण उनकी समस्याओं पर विचार करना चाहिए। असमर्थता की स्थिति में भी उन्हें अपने शिष्ट व्यवहार से संतुष्ट करना चाहिए।

(7) पहल - विक्रय में पहल का बड़ा महत्व है। क्योंकि अधिकांश विक्रेता अनेक स्थितियों में अपने विवेक पर निर्भर रहते हैं। अतः उन्हें स्वयं ही आरंभ करना होता है। उन्हें सदैव नए उपभोक्ताओं की तलाश एवं पुराने उपभोक्ताओं को बनाये रखने का प्रयत्न करना पड़ता है। इस कार्य में पहल करने से उनका कार्य सरल हो जाता है।

(8) संवेदना - विक्रेता में मानवीय संवेदना का होना भी आवश्यक है। उसमें विक्रय समस्याओं को क्रेता को दृष्टिकोण से देखने की योग्यता होनी चाहिए।

(9) विश्सनीयता - विक्रता में ऐसी समस्याओं से निपटने की भी योग्यता होनी चाहिए, जो उसके प्रशिक्षण में न बताई गई हों। उसका व्यवहार एवं कार्य ऐसा होना चाहिए जिससे कि वह असामान्य स्थितियों का समाधान भी सफलतापूर्वक कर सकें।

(10) कर्तव्यनिष्ठा एवं ईमानदारी - कम्पनी के कोष तक पहुँच होने के कारण वित्तीय मामलों में उसका पूर्णतया ईमानदार होना परमावश्यक है। बिक्री के कम हो जाने पर भी उसे कंपनी से तथ्यों को छुपाना या गलत तस्वीर प्रस्तुत नहीं करना चाहिए।

स्वापरख प्रश्न

1. आदेश संग्रहण एवं आदेश प्राप्ति में क्या अंतर को स्पष्ट कीजिए?

....

....

....

2. एक अच्छे विक्रेता में किन गुणों एवं योग्यताओं का होना आवश्यक है। सूची बनाइये?

....

....

....

3. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए।

i) विक्रय भी सर्वाधिक कल्पनाशील स्थिति ....।

ii) केन्द्रीय भंडार में क्लर्क (लिपिक) मूलतः एक ....।

3.7 वैयक्तिक विक्रय के लाभ :-

सामान्यतः उत्पाद विक्रय के दो प्रकार होते हैं। एक तो वैयक्तिक व दूसरा अवैयक्तिक। वैयक्तिक विक्रय में उत्पादों के क्रेता व विक्रता आमने-सामने होते हैं, लेकिन अवैयक्तिक विक्रय पत्र-व्यवहार व टेलीफोन, आदि से होता है। वैयक्तिक विक्रय में अवैयक्तिक विक्रय की तुलना में कुछ लाभ अधिक है,जो निम्न प्रकार है :-

(1) भावी ग्राहकों का पता लगाता है - वैयक्तिक विक्रय का सबसे पहला लाभ यह है कि इस तरीके से पूरे ग्राहकों का पता लग जाता है जो या तो उनकी वस्तु के ग्राहक है या वे ग्राहक बन सकते हैं। इससे विक्रयकर्ता अलना ध्यान उस ओर एकाग्र होकर लगा सकता है। विज्ञापन व विक्रय प्रवर्तन इन बातों का पता नहीं लगा सकते हैं।

NMDC-130

(2) शंकाओं का समाधान करता है — वैयक्तिक - विक्रय का दूसरा लाभ यह है कि इससे क्रेताओं की शंकाओं का समाधान उचित रूप से किया जाता सकता है। उनकी आपत्तियों का निवारण कर सकते हैं और क्रय के लिए उचित वातावरण बना सकते हैं। ऐसा करने से आदेश मिलने की सम्भावनाएँ बढ़ जाती हैं।

(3) वस्तु का प्रदर्शन करता है - ग्राहक को वस्तु की लाभप्रदता व उसकी वांछनीयता का विश्वास दिलाने के लिए आवश्यक है कि उसको वस्तु का प्रयोग करने का उचित अवसर देते हुए, उसका वास्तविक प्रदर्शन किया जाय। वैयक्तिक विक्रय वस्तुओं का प्रत्यक्ष प्रदर्शन करके यह अवसर प्रदान करता है।

(4) विक्रय समाप्ति में सहायता देता है - वैयक्ति विक्रय का एक लाभ यह भी है कि यह विक्रय समाप्ति में सहायता देता है। यह शंकाओं का समाधान कर विक्रय के लिए दबाव डालता है। विज्ञापन व विक्रय प्रवर्तन तो क्रेता को क्रय करने के लिये प्रेरित करते हैं लेकिन वे इतने प्रभावशाली नहीं होते जितना कि वैयक्तिगत विक्रय।

(5) समय-सामंजस्य - इसमें विक्रयकर्ता ऐसी व्यवस्था कर लेता है कि जब कभी भी क्रेता वस्तु को क्रय करने के लिए तैयार होता है विक्रयकर्ता उसी समय

उपस्थिति हो जाते है और उसको तुरन्त सेवा दे देता है।

(6) संचार सुविधा प्रदान करता है - व्यक्तिगत विक्रय निर्माताओं के लिए संचार सुविधाएँ प्रदान करता है। विक्रयकर्ता को वस्तुओं के विक्रय के सम्बन्ध में बहुत-सी सूचनाएँ प्राप्त होती हैं जैसे बाजार दशाएँ, प्रतियोगी क्रियाएँ, संस्था की नीतियों के बारे में ग्राहकों को प्रतिक्रियाएँ, आदि। विक्रयकर्ता इन सभी बातों को निर्माता तक पहुँचाता है जिससे कि निर्माता अपनी नीतियों व वस्तुओं में आवश्यक परिवर्तन कर अपने आपको जीवित ही नहीं रख पाते हैं बल्कि उनको बिक्री बढ़ाने में भी सहायता मिलती है।

(7) गैर-विक्रय कार्य करता है - व्यक्तिगत विक्रय अपने विक्रय कार्य के अतिरिक्त अन्य गैर-विक्रय कार्य भी करते हैं जो निर्माता को लाभकारी होते हैं जैसे बाजार अनुसंधान करना, मरम्मत सेवा प्रदान करना, ग्राहकों की शिकायतों का निवारण करना आदि।

(8) सामाजिक प्रेरणा प्रदान करता है - वैयक्तिक विक्रय ग्राहक व विक्रयकर्ता के बीच एक मित्रता जैसा सामाजिक सम्बन्ध बना देता है जिसका परिणाम यह होता है कि उसको आदेश मिलते रहते हैं और वह अपनी वस्तु बेचने में सफल होता रहता है।

NMDC-30

3.8 विक्रय संवर्धन परिचय तथा उद्देश्य :-

विज्ञापन के पश्चात् आधुनिक व्यापारिक समुदाय द्वारा सबसे अधिक उपयोग किये जाने वाले संवर्द्धन उपकरण विक्रय संवर्द्धन ही है। विक्रय संवर्द्धन का तात्पर्य उन निर्णयों से है जो विक्रय को वृद्धि प्रदान करने में सहायक होते हैं। यह विपणन संवर्द्धन के उपकरण के रूप में उत्पाद के प्रयोग में आशातीत वृद्धि करता है और उत्पाद के बाजार में वृद्धि के साथ-साथ नये उत्पाद के सम्बन्ध में लोगों को सूचनायें भी उपलब्ध कराता है। दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं कि विक्रय संवर्द्धन में वैयक्तिक विक्रय, विज्ञापन तथा प्रचार के अतिरिक्त वे सब क्रियाएँ सम्मिलित होती हैं जो उपभोक्ता के क्रय एवं विक्रेता की तत्परता को प्रेरित करती है। इनमें सजावट, प्रदर्शनी, नाटक, आदि को रखा जा सकता है।

इस प्रकार विक्रय संवर्द्धन कार्यों का उद्देश्य विज्ञापन एवं व्यक्तिगत विक्रय को अधिक प्रभावोत्पादक बनाना है। ये क्रियाएँ परस्पर संपोषक एवं पूरक हैं। हाल के वर्षो में विक्रय-संवर्धन इसलिए बड़ा है, क्योंकि इसके द्वारा उत्पादों की बिक्री बढ़ाने और उत्पादों के लिए उपभोक्ता बाजार में मार्ग प्रशस्त करने में सहायता मिली है। स्पर्धा के इस युग में कतिपय विनिर्माता अपने विपणन लक्ष्यों को सार्थक करने के लिए विक्रय-संवर्धन के साधनों का निरंतर उपयोग कर रहे हैं।

इस प्रकार विक्रय संवर्द्धन में निम्न विशेषताएँ पायी जाती है :

(1) विक्रय संवर्द्धन ग्राहकों के ध्यान की वस्तुओं व सेवाओं को क्रय करने के लिए किया जाता है।

(2) यह क्रिया वस्तुओं को ग्राहकों की ओर धकेलने वाली क्रिया है।

(3) यह अनियमित किया है तो उपभोक्ताओं व व्यापारियों को क्रय करने के लिए प्रेरित करती है।

(4) विक्रय-संवर्द्धन में विज्ञापन व वैयक्तिक विक्रय शामिल नहीं किया जाना है।

(5) यह विज्ञापन व वैयक्तिक विक्रय को अधिक प्रभावशाली बनाता है।

इस प्रकार विक्रय संवर्द्धन अग्रलिखित उद्देश्य हो सकते हैं -

(1) संवर्द्धन का प्रथम उद्देश्य नवीन उत्पाद के सम्बन्ध में सूचना देना है। इस जानकारी से उपभोक्ता को खरीदने के लिए उकसाया जाता है और साथ ही विक्रेताओं की उत्पाद भी अपनी दुकान पर विक्रय के लिए प्रोत्साहित किया जा सकता है। इसी प्रकार मध्यस्थों के लिए भी क्रय-भत्ता की युक्ति अपनायी जा सकती है।

(2) एक निर्माता का विक्रय संवर्द्धन उद्देश्य नवीन उपभोक्ताओं को आकर्षित होते हैं और कुल उपभोक्ताओं की संख्या में वृद्धि होती है। विक्रय संवर्द्धन के तरीके जैसे मुफ्त नमूने, मुफ्त, भेंट, प्रतियोगिताएँ, उपभोक्ता आदि संख्या में तीव्र गति से वृद्धि करती है।

NMDC-30

(3) विक्रय संवर्द्धन क्रियाओं का उद्देश्य उन उपभोक्ताओं के प्रयोग को बढ़ावा देना होता है जो वर्तमान में उत्पाद को प्रयोग में जा रहे हैं। इस प्रयोग को बढ़ाने के लिए उनको विभिन्न प्रकार के प्रलोभन दिये जाते हैं जैसे मूल्य में कमी, प्रीमियम, प्रतियोगिताएँ आदि।

(4) जब प्रतियोगी संस्था इस युक्ति को अपनाती है तो दूसरी प्रतियोगी संस्था द्वारा भी यह युक्ति अपना ली जाती है। इसका उद्देश्य प्रतियोगी संस्था के विक्रय संवर्द्धन के प्रयत्नों को या तो प्रभावहीन बना देना या उनके प्रभाव को कम कर देना है।

(5) कुछ उत्पाद ऐसी होती है जिनकी माँग एक मौसम में तो अधिक होती है लेकिन वर्ष के एक विशेष समय में बहुत कम हो जाती है। विक्रय संवर्द्धन का उद्देश्य इस मौसमी कमी के प्रभाव को कम करना होता है। विक्रय संवर्द्धन क्रियाएँ होने से कुछ विक्रय बढ़ जाती है जैसे भारत में फलों के डिब्बा बन्द रस बेचने वाली कम्पनियाँ अपने पैकिगों के साथ कुछ मुफ्त उपहार भेट करती हैं।

(6) विक्रय संवर्द्धन का छठवाँ उद्देश्य विक्रयकर्ताओं की बिक्री को आसान बनाना है। जिन उत्पादों में विक्रय संवर्द्धन अपनायी जाती है उन उत्पादों के विक्रयकर्ताओं के लिए विक्रय उत्पादों का कार्य करना आसान हो जाता है। इसका प्रमुख कारण यह

है कि उस उत्साह के क्रेता बाजार में पाये जाते हैं। अतः मध्यस्थ उस उत्पाद को अपने यहाँ रखने एवं बेचने को सदैव तैयार हो जाते हैं।

(7) उपभोक्ता को उत्पाद उसी की मांग पर सदैव उपलब्ध रहनी चाहिए इसके लिए उचित स्टॉक मध्यस्थों द्वारा रखा जाना अनिवार्य होता है। लेकिन मध्यस्थ अपनी निजी कठिनाइयों के कारण ऐसा नहीं कर पाते। अतः ऐसे मध्यस्थों को अधिक भत्ता प्रोत्साहन देकर या अन्य प्रकार के साधन अपनाकर विवश किया जा सकता है।

3.9 विक्रय संवर्धन के कार्य तथा महत्व :-

बहुत से निर्माता विक्रय संवर्द्धन का प्रयोग भिन्न रूपों में करते रहते हैं। कुछ उत्पाद निर्माता विक्रय संवर्द्धन का एक अलग विभाग ही बनाते हैं। जिसका काम नवीन योजनाएँ बनाना व्यवसाय के विज्ञापन व अन्य विभागों में सहयोग करना है। लेकिन कुछ निर्माता अपने यहाँ विज्ञापन विभागों का नाम संवर्द्धन विभाग रखते हैं। अतः विक्रय संवर्द्धन के कार्यों से इसको अन्य विभागों से अलग किया जा सकता है। विक्रय-संवर्द्धन के कार्यों से इसको अन्य विभागों से अलग किया जा सकता है। विक्रय संवर्द्धन के कार्य को चार वर्गों में विभाजित किया जा सकता है-

(1) उपभोक्ताओं को प्रोत्साहित करना - विक्रय संवर्द्धन का प्रथम कार्य उपभोक्ताओं को क्रय करने के लिए प्रोत्साहित करना है जिससे कि वे क्रय के लिए प्रयास करें- यह प्रोत्साहन कई उपकरणों की सहायता से दिया है; जैसे उत्पाद का मुफ्त उपयोग, मुफ्त नमूना वितरण उपभोक्ता प्रतियोगिताओं का आयोजन करना, धन वापसी प्रस्वात, मूल्य में कमी, प्रीमियम बाँटना, टिकट एकत्रित करना, आदि।

MDC-130

(2) मध्यस्थों की सहायता करना - मध्यस्थों की विक्रय में सहायता करना भी विक्रय संवर्द्धन का कार्य है। मध्यस्थों में थोक विक्रेता, फुटकर विक्रेता, शृंखलाबद्ध दुकाने, विभागीय भण्डार डीलर, वितरक, आदि आते हैं। विक्रय संवर्द्धन इनके कार्यों मध्यस्थों के स्टोरों में संवर्द्धन करना, डीलरों को शो-केस देना, मध्यस्थों व डीलरों में प्रतियोगिताएँ कराकर प्रतियोगिता की भावना पैदा करना मुफ्त माल देना, क्रय माल देना, क्रय भत्ता देना, आदि के द्वारा सम्पन्न कराया जाता है।

(3) विज्ञापन विभाग की सहायता करना – विक्रय संवर्द्धन का तीसरा कार्य विज्ञापन विभाग की सहायता प्रदान करना है। यह सहायता विज्ञापन बोर्ड बाँटकर, सहकारी विज्ञापन कर, विज्ञापन खाका तैयार करने में सहायता देकर, आदि ढंगों से किया जा सकता है।

(4) विक्रयकर्ता की सहायता - विक्रय संवर्द्धन का चौथा कार्य विक्रयकर्ता की सहायता करना है। विक्रय संवर्द्धन उसको अधिक विक्रय करने में सहयोग देता है क्योंकि उपभोक्ताओं को समझाने में अधिक समय नहीं लगता है। विक्रय संवर्द्धन करने

से वे पूँछ-ताछ पर आते हैं, जिनसे विक्रयकर्ता सम्पर्क स्थापित कर विक्रय कर सकता है।

आज प्रतिस्पर्धात्मक आपाधापी में लगभग सभी व्यापारिक प्रतिष्ठान विज्ञापन की अपेक्षा विक्रय संवर्धन पर अधिक व्यय कर रहे हैं। विक्रय संवर्धन की ओर ध्यान देने के पीछे जो कारण हैं, वे निम्नलिखित हैः

1. विक्रय संवर्धन को एक प्रभावशाली विक्रय साधन के रूप में अधिकाधिक कंपनियाँ वरीयता दे रही हैं।
2. आज अधिकाधिक उत्पाद प्रबंधक विक्रय संवर्धन उपकरणों का उपयोग कर रहे हैं।
3. आज के उत्पाद प्रबंधकों पर बिक्री वृद्धि के लिए बहुत जोर डाला जा रहा है।
4. ब्रॉड-नामों की संख्या भी बहुत बढ़ गई है और प्रतिस्पर्धी ब्राण्डों में अंतर बहुत कम हो गया है।
5. प्रतिस्पर्धी विनिर्माता विक्रय संवर्धन साधनों का उपयोग अधिकाधिक कर रहे हैं।
6. अंतिम उपभोक्ता और मध्यस्थ दोनों सौदों से अधिकाधिक आर्थिक लाभ कमाने में लगे हैं अर्थात् वे उत्पादकों से अधिकाधिक लाभ की अपेक्षा करने लगे हैं।
7. विज्ञापन दरों में वृद्धि तथा संस्था के कारण इसकी प्रभाविता पर भी प्रतिकूल असर पड़ता है।

विक्रय संवर्धन के बढ़ते हुए महत्व को पीछे अन्य कई कारण भी हैं जैसे -

1. **कम प्रति इकाई लागत** - विक्रय-संवर्धन अधिक उत्पादन का स्वाभाविक परिणाम है, जिससे प्रति इकाई लागत कम हो जाती है। इसे बड़े पैमाने पर विक्रय संवर्द्धन द्वारा ही बनाए रखा जा सकता है।
2. **बिक्री में सहायता** - विक्रय संवर्धन उपायों द्वारा विक्रेताओं का कार्य, अपेक्षाकृत सरल हो जाता है। इससे भावी ग्राहकों का पता लगाने और अस्वीकृति जैसी स्थितियों से बचने में मदद मिलती है।
3. **शीघ्र उत्पाद स्वीकृति** - विक्रय - संवर्धन के उपायों (प्रतियोगिता, छूट, इनामी कूपन आदि) द्वारा विज्ञापन आदि अन्य साधनों के मुकाबले कम समय में उत्पादक के प्रति उपभोक्ता स्वीकृति प्राप्त की जा सकती है।
4. **बेहतर नियंत्रण** - विक्रय संवर्धन में प्रयुक्त साधनों एवं उपायों पर प्रबंधन का बेहतर नियंत्रण संभव है। इससे वित्तीय नियंत्रण भी पकड़ में रहता है। उदाहरण के लिए, जब चाहें प्राप्त लाभ की तुलना विक्रय संवर्धन पर किए जा रहे व्यय को पुनः निर्धारित किया जा सकता है।

जहाँ विक्रय संवर्धन में उपरोक्त कई लाभ हैं, वहीं इनमें अनेक कमियाँ भी हैं, जो निम्नलिखित हैं -

1. जैसा कि अनुभव किया जाता है कि विक्रय संवर्धन का उपयोग निम्न स्तर के उत्पादों के विक्रय के लिए किया जाता है।
2. विक्रय-संवर्धन अभियान में दी जाने वाली छूटें वास्तविक न होकर भ्रामक होती हैं क्योंकि उत्पाद की वास्तविक कीमत बढ़ाकर लिखी जाती है।
3. लघु अवधि कार्य होने के कारण, इसके लाभ लघुकालिक होते हैं। छूट समाप्त कर दिए जाने के बाद, उत्पाद की माँग भी कम हो जाती है।
4. बार-बार उपयोग के कारण उपभोक्ताओं की रूचि भी कम हो जाती है।

3.10 विक्रय संवर्धन के प्रमुख उपकरण :-

विक्रय संवर्धन उपकरणों को तीन आधारभूत श्रेणियों में बाँटा जा सकता है।

(क) उपभोक्ता संवर्धन

(ख) व्यापार संवर्धन, और

(ग) विक्रेता दल संवर्धन

NMDC-130

(क) उपभोक्ता संवर्धन

उपभोक्ता स्तर पर विक्रय संवर्धन में दो प्रकार के लाभ आते हैं। (1) प्रत्यक्ष प्रीमियम, (2) सशर्त प्रीमियम।

1) **प्रत्यक्ष प्रीमियम** - उपभोक्ता को प्राप्त होने वाला लाभ (प्रीमयम) उसे सेवा व उत्पाद विशेष की खरीद पर छूट के रूप में मिलता है। इस योजना के अधीन उसे यह लाभ उत्पाद/सेवा को क्रय करने के बाद प्राप्त होता है। ''काउंटर पर ही' और ''पैक ऑफ'' के नामों से प्रचलित ये लाभ क्रेताओं को उपहारस्वरूप दिए जाते हैं। उत्पाद एवं उपहार दोनों एक ही कम्पनी द्वारा या अलग-अलग भी निर्मित हो सकते हैं। उदाहरण के लिए,''कोलगेट की बड़ी ट्यूब के साथ एक कॉलगेट टूथ ब्रश फ्री'' भेंट में दिया जा सकता है। इसी प्रकार ''सनसिल्क शैम्पू की बोतल के साथ एक लक्स साबून'' भी फ्री हो सकता है। प्रत्यक्ष लाभ दो प्रकार के हो सकते हैं। वस्तु के मूल्य में और वस्तु की मात्रा में।

   i. **मूल्य में कटौती :** उत्पाद के मूल्य में कुछ समय के लिए कटौती दी जाती है। दीवाली अथवा गाँधी जयंती के अवसर पर दिए जाने वाले मूल्यों में छूट इसी श्रेणी में आते हैं। ऐसा सामान्यतः तब किया जाता है, जब बिक्री में कमी आ रही हो या प्रतिस्पर्धी उत्पाद बाजार में प्रस्तुत किया जा रहा हो।

ii. **मात्रा में अधिकता :** प्रायः उपभोक्ता को बिना अतिरिक्त मूल्य लिए या नाम मात्र अतिरिक्त मूल्य देकर अधिक वस्तु बेची जाती है। उदाहरण के लिए हाल ही में ''थम्स अप'' द्वारा प्रस्तुत अधिक कोला, उसी दाम पर दिया जाना।

2) **सशर्त प्रीमियम** - सशर्त लाभ में उपभोक्ता को लाभ लेने के लिए कतिपय अतिरिक्त कार्य करने पड़ते हैं, जैसे- कूपन या रैपर एकत्रित करना आदि। इस श्रेणी में कई कार्य आते हैं-

i. **कूपन लाभ योजना :** ब्राण्ड के प्रति लगाव पैदा करने के लिए इस योजना का सहारा लिया जाता है। उछहरण के लिए, केडबरी चॉकलेट के टिन के तीन फायलों के बदले एक पाककला पुस्तिका देना। इसी प्रकार कूपनों के बदले मैगी नूडल्स वालों ने एक-एक जंगल बुक उपभोक्ताओं को भेंट में दी।

ii. **उपभोक्ता से उपभोक्ता तक योजना :** इस योजना में कंपनी अपने संतुष्ट ग्राहकों दद्वारा अपने उत्पादों की प्रशंसा कराने और इस प्रकार बिक्री में वृद्धि करने का प्रयत्न करती है। उदाहणार्थ : ''रीडर्स डाइजेस्ट'' पत्रिका अपने नियमित ग्राहकों से अनुरोध करती है कि नए ग्राहकों से पत्रिका की सिफारिश करें।

iii. **उपभोक्ता प्रतियोगिता** : इस प्रतियोगिता में उत्पादों को खरीदने के लिए प्रेरित करने हेतु प्रतियोगिता का आयोजन किया जाता है।

iv. **रिफिल पैक :** उदाहरण के लिए अमूल घटी दरों पर रिफिल पैंक प्रस्तुत करता है, जिससे कंपनी का डिब्बा बंदी व्यय बच जाता है और इस प्रकार की गई बचत का एक भाग उपभोक्ता को मूल्य में छूट के रूप में दे दिया जाता है।

v. **आस्थागित अदायगी योजना :** 90 के दशक के दौरान कई विमान कंपनियों ने ''आज यात्रा करो, किराया भुगतान बाद में की योजना व्यापार में संर्ब्धन के उपाय के रूप में प्रचारित की थी। इसमें अस्थगित अदायगी विक्रय-संवर्धन के रूप में प्रस्तुत की गई है।

vi. **मूल्य वापसी योजना :** इसमें असुंष्ट होने की स्थिति में उपभोक्ता को उत्पाद/वस्तु का मूल्य वापस कर द्दिया जाता है।

vii. **आश्वासन प्रीमियम :** इस योजना में लाभ को अंशक खरीदार से ही लिया जाता है। इसका अर्थ नाम मात्र अतिरिक्त मूल्य पर अतिरिक्त सामान देना है। उदाहरणार्थ : एक कंपनी अपने धुलाई पाउजर के थैले के साथ अतिक्ति साबुन खरीदने पर एक प्लास्टिक की बाल्टी मुफ्त देती

है। इसमें यद्यपि उपभोक्ता अदायगी करता है परंतु यह नाम मात्र ही होती है। ऐसा इसलिए संभव हो पाता है क्योंकि निर्माता द्वारा माल इकट्ठा खरीद किए जाने के परिणामस्वरूप उसे प्रति इकाई लागत में बचत हो जाती है।

(ख) व्यापार संवर्धन - इसमें व्यापारियों (थोक एवं फुटकर) का अधिकतम संभव सहयोग प्राप्त करने के लिए उन्हें प्रोत्साहन प्रदान किए जाते हैं। प्रमुख व्यापार प्रोत्साहन इस प्रकार है-

1. **माल गत लाभ :** कई बार विनिर्माता/उत्पादक इकट्ठा माल खरीद कर उसी मूल्य में क्रेता व्यापारी को अतिरिक्त लाभ लेकर दे देता है। कई कंपनियाँ यह प्रोत्साहन व्यापारियों को अपने अन्य वस्तुओं के संबंध में जानकारी देने हेतु प्रदान करती है।

2. **मूल्यगत लाभ :-** इस योजना में सामान्य छूट के अतिरिक्त छूट दी जाती है। व्यापारी को अस्थायी रूप से दी जाने वाली इस प्रोत्साहन छूट से थोक तथा फुटकर दोनों प्रकार के व्यापारियों को लाभ पहुँचता है।

3. **व्यापारियों को उपहार :-** कई बार कंपनी अपने वितरण व्यापारियों को उनके क्रय आदेश पर आधारित विभिन्न उपहार जैसे- घड़ियाँ, कपड़े, ट्राँजिस्टर आदि उपहार स्वरूप देती है।

4. **माल में छूट :** यह एक लघु अवधि समझौता है, जिसमें उत्पादक व्यापारी को (थोक व फुटकर दोनों को) उत्पादक के विज्ञापन या विण्डो-प्रदर्शन के बदले छूट प्रदान करना है।

5. **सहयोगी विज्ञापन :** यहाँ उत्पादक अपने व्यापारी वितरकों से दीर्घवधि के लिए समझौता करता है, जिसके अनुसार उन्हें फुटकर व्यापारियों को उनकी खरीद पर एक निश्चित छूट देनी होती है। इसके बदले फुटकर व्यापारी उत्पादन विज्ञापन पर आने वाले व्यय को अंशतः वहन करते हैं।

6. **वितरक/व्यापारी प्रतियोगिता ;** यह विक्रय संवर्धन का अप्रत्यक्ष तरीका है। इसमें शो विण्डो प्रदर्शन, दुकान की सजावट, बिक्री (बड़े और छोटे विक्रेता) इत्यादि के आधार पर विभिन्न व्यपारियों को विशेष पारितोष दिये जाते हैं।

7. **विक्रेता दल संवर्धन :** कंपनी के कुल विक्रय संवर्धन के प्रयास का एक बड़ा भाग कंपनी आने विक्रेतादल पर केन्द्रित करती है। इसका उद्देश्य अपने विक्रेतादल के कार्यो को अधिक परिणामोन्मुख तथा स्पर्धा पूर्ण बनाना होता है। इन आयोजनों में विक्रय स्पर्धाएँ, बोनस और लाभ आदि प्रदान करने की व्यवस्था की जाती है। इस प्रकार के विक्रय प्रतियोगिता से विक्रेतादल में प्रेरणा और स्पर्धा का जन्म होता है क्योंकि पुरस्कारों, एवं प्रोत्साहनों का आधार विक्रेतादल के विभिन्न सदस्यों द्वारा बिक्री लक्ष्य को प्राप्त होता है।

NMBC-130

स्वपरख प्रश्न -

1. उपभोक्ता संवर्धन में प्रयुक्त उपकरणों की विवेचना कीजिए ?

....

....

....

2. व्यापार संवर्धन संबंध में अपने विचार व्यक्त कीजिए?

....

....

....

3. उपयुक्त शब्दों द्वारा रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए?

i) विक्रय संवर्धन में उत्पादों / सेवाओं पर लाभ से उपभोक्ताओं को क्रय का ....मिलता है। (कारण/प्रोत्साहन/तक/साधन)

ii) केवल ....को छोड़कर शेष सभी उपभोक्ता संवर्धन उपाय है।

(कूपन/मालगत लाभ/मूल्यवापसी भेट/भेंट/मूल्य लाभ)

iii) केवल ....के अतिरिक्त, शेष सभी व्यापार संवर्धन के उपाय हैं।

(मालगत लाभ / मालगत छूट / व्यापारी / मुकाबले/प्रत्यक्षा लाभ)

NMDC-130

3.11 व्यक्तिगत विक्रय एवं विक्रय संवर्धन में अन्तर :-

इन दोनों प्रक्रियाओं के बारे में प्रायः अस्पष्टतः देखी जाती है, और लोग अक्सर इन्हें एक दूसरे का यर्थाथ लेते हैं, जो सही नहीं है। इनके परस्पर भेद को स्पष्ट रूप से समझने के लिए आइये हम पहले विक्रय संवर्धन की परिभाषा के बारे में जान लें।

विक्रय संवर्धन व्यक्तिगत विक्रय, विज्ञापन और प्रचार को छोड़कर, संवर्धन की उन सभी क्रियाओं को कहते हैं, जिनका अभिप्राय एक विशिष्ट समयावधि में उत्पादों के क्रय को प्रोत्साहित करना और व्यापारियों की प्रभाविता को बढ़ाना होता है। अतः विक्रय-संवर्धन का अर्थ वह कोई भी प्रयास है जिसका उद्देश्य एक निश्चित अवधि में प्रोत्साहन देकर अपने लक्षित उपभोक्ताओं अथवा व्यापारियों को उत्पाद क्रय के लिए तैयार करना है। हमारे प्रोत्साहन का स्वरूप एक प्रतियोगिता का आयोजन भी हो सकता है, जिसमें विजेताओं के लिए परितोषक व इनाम का प्रावधान किया गया हो या फिर इनामी कूपन, मुफ्त नमूना छूट आदि प्रोत्साहनों की व्यावस्था की गई हो। यहाँ वह स्पष्ट करना उचित होगा कि विक्रय संवर्धन केन्द्र के माध्यम अव्यक्तिगत एवं एक तरफा प्रयास

होते हैं। उदाहरणार्थ समाचार-पत्र पत्रिकाओं में घोषणा व विज्ञापन या फिर दुकानों आदि पर विज्ञापन आदि।

आइए, अब समझें कि विक्रय-संवर्धन एवं व्यक्तिगत विक्रय में क्या अंतर है अग्रलिखित सारणी को ध्यानपूर्व देखिए और दोनों के बीच में अंतर को समझने का प्रयास कीजिए।

सारणी - व्यक्तिगत विक्रय एवं विक्रय संवर्धन में अंतर

कारक	व्यक्तिगत विक्रय	विक्रय संवर्धन
1) संप्रेषण का माध्यम	प्रत्यक्ष, सीधा एवं व्यक्तिगत (आमने सामने) नियमित एवं निरंतर	अप्रत्यक्ष एवं अव्यक्तिगत लघु अवधि के लिए संयोजित
2) नियमितता	नियमित एवं निरंतर	लघु अवधि के लिए संयोजित
3) संदेश का लचीलापन	ग्राहक की विशिष्ट रूचि के अनुसार वैयक्तिक रूप देना	सभी के लिए एक रूप, परिवर्तन की गुंजाइश नहीं
4) संदेश पर नियंत्रण	अत्याधिक	अधिक
5) उपभोक्ता - अथवा ग्राहक-संतुष्टि की जानकारी (ग्राहक-प्रतिक्रिया)	विक्रेता (सेल्समैन) सीधे उपभोक्ता से इसका पता लगा होता है।	इस संबंध में ग्राहक प्रतिक्रिया का सीधे पता लगाना संभव नहीं

NMDC-130

स्वापरक - प्रश्नावली

1. उपरोक्त के आधार पर व्यक्तिगत विक्रय एवं विक्रय संवर्धन में अंतर का विवेचन कीजिए।

....

....

....

2. बताइये कि निम्नलिखित कथन सत्य है या असत्य ?

   i. व्यक्तिगत विक्रय में केवल उत्पादों के बदले धन का विनिमय होता है।

   ii. व्यक्तिगत विक्रय में सफलता विक्रय प्रतिनिधि की व्यक्तिगत योग्यता एवं उसके उपभोक्ता का मन जीत लेने की क्षामता पर निर्भर करती है।

   iii. विक्रय-संवर्धन व्यक्तिगत विक्रय का ही दूसरा नाम है।

3.12 भारत ने विक्रय संवर्द्धन दशा और दिशा :-

विक्रय संवर्द्धन बिक्री को बढ़ाने, नये बाजारों का विस्तार करने, मौसमी कमी को दूर करने नये उत्पादों की जानकारी देने, मध्यस्थलों को अधिक बेचने, विक्रयकर्ता के लिए आसान करने में सहायक होती है।

इसके बावजूद भारत में इस बात के सही सूचना उपलब्ध नहीं है जिससे यह पता लगाया जा सके कि विक्रय संवर्द्धन पर व्यापारिक प्रतिष्ठान कितना व्यय करते हैं? लेकिन यह सर्वविदित हैं कि भारत में बड़े - छोटे और मझोले सभी व्यापारिक प्रतिष्ठान इस उपकरण के ऊपर व्यय करते हैं प्रायः इनका उपयोग दैनिक उपयोग में आने वाले उत्पादों में अधिक दिखाई पड़ता है। किन्तु इनका उपयोग कुछ महगें उत्पादों की श्रेणियों में भी किया जाता है। इस प्रकार इनमें चाय, काफी, साबुन, शैम्पू, बिजली के उपकरण, वाशिंग मशीन, फ्रिज टी0वी0 ए0सी0 इत्यादि उत्पादों को सम्मिलित किया जाता है।

इस सम्बन्ध में बिजनेस टूड अनुसंधान ब्यूरों में 500 बड़ी माध्यम एवं छोटी आकार वाली व्यापारिक प्रतिष्ठानों एक अध्ययन किया, जिसमें पाया गया कि ये व्यापारिक प्रतिष्ठान अपनी विक्रय आय का 3 प्रतिशत से लेकर 5 प्रतिशत तक का व्यय विक्रय संवर्द्धन के विभिन्न उपकरणों पर किया है।

NBDC-130

भारत में विक्रय संवर्द्धन व्यय विकासशील देशों में सर्वाधिक है किन्तु विकसित देशों की तुलना में नगण्य है। इसका तात्पर्य यह है कि यहाँ पर उत्पादों का उत्पादन इनकी माँग से कम है। ये उपकरण उसी स्थिती में लाभप्रद हो सकती है जब पूर्ति मांग से अधिक हो। हालांकि पिछले दो दशकों में इस स्थिति में काफी परिवर्तन आया है और पूर्ति माँग से अधिक है।

अतः यह कहा जा सकता है कि भारत में विक्रय संवर्द्धन प्रयत्नों की सीमायें हैं। यह प्रयत्न कुछ विशेष प्रस्थितियों में ही कारगर सिद्ध हो सकते हैं, सदैव नहीं। यहाँ पर अधिकांश जनसंख्या आज भी कृषि पर निर्भर है, गाँवों में निवास करती है और अशिक्षित है। जिससे इनकी प्रति व्यक्ति आय भी काफी कम है। इन परिस्थितियों में इन प्रयासों से कभी पर्याप्त फल नहीं निकाल सकते हैं, लेकिन शहरीकरण, निजीकरण, शिक्षा के बढ़ते अवसरों, जीवन शैली में बदलाव, उदारीकरण और भूमण्डलीकरण के फलस्वरूप तथा औसत आय में वृद्धि के फलस्वरूप यह आशा निरन्तर कायम है कि आने वाले समय में इस प्रकार के उपकरणों से पूर्वनिर्धारित परिणाम मिलेंगे और भारतीय व्यापारिक प्रतिष्ठान अपनी विक्रय का और बढ़ा हिस्सा इन उपकरणों की संरचना में निवेश करेंगे जिससे रोजगार के साथ-साथ उपभोक्ताओं को क्रय के नये अवसर प्राप्त होंगे।

3.13 सारांश :-

व्यक्तिगत विक्रय क्रेता और विक्रेता के बीच एक ऐसा वार्तालाप और व्यक्तिगत संपर्क है, जिसका उद्देश्य आपसी सहमति स्थापित करना है। कई विपणन स्थितियों में एक विक्रयकर्ता की आवश्यकता होती है, जिसका कार्य बिक्री के लिए प्रस्तुत उत्पादों को गुणों की सूचना भावी क्रेता अथवा उपभोक्ता की व्यक्तिगत आवश्कताओं एवं अपेक्षाओं के अनुरूप ही विक्रय संदेश होना चाहिए। वस्तुतः व्यक्तिगत विक्रय संवर्धन का सर्वाधिक खर्चीला साधन है।

व्यक्तिगत विक्रय और विक्रय संवर्धन को प्रायः पर्याय मान लिया जाता है, परन्तु विक्रय संवर्धन एक अप्रत्यक्ष क्रिया है, जिसमें क्रेता एवं विक्रेता में व्यक्तिगत संपर्क नहीं होता। इसके अंतर्गत कुछ समय के लिए इस बात की प्रेरणा मिलती है कि लक्ष्य उपभोक्ता/विक्रेताओं की वांछित प्रतिक्रिया प्राप्त की जा सके।

व्यक्तिगत विक्रय अत्यधिक प्रचलित सवर्धन विधि है। इसमें विपणन एवं उत्पाद लागतों में भी कमी होती है। साथ ही इसमें नये उत्पादों के प्रस्तुतीकरण एवं उनकी खपत में वृद्धि करने में सहायता मिलती है।

व्यक्तिगत विक्रय के मूल उद्देश्य है : (1) भावी उपभोक्ताओं का पूर्वेक्षण करना, (2) उन्हें अपना वास्तविक उपभोक्ता बनाना, और (3) उन्हें अपना संतुष्ट एवं नियमित ग्राहक बनाए रखना। ये सभी गुण विक्रय के आधारभूत तत्व हैं, जिनमें निम्नलिखित उपाय सम्मिलित हैं :

1) पूर्वेक्षण करना, 2) पूर्वसंपर्क, 3) संपर्क, 4) प्रस्तुति, 5) शंका निराकरण, 6) विक्रय-समापन, और 7) विक्रयोपरांत सेवा। विक्रय कार्यों के कई प्रकार एवं रूप हैं। जिन्हें हम तीन श्रेणियों में रख सकते हैं। 1) आदेश संग्राहक, 2) आदेश प्राप्ति करने वाले और 3) बिक्री सहायक के रूप में कार्यरत लोग। इन कार्यों के प्रकार में वाहक विक्रेता, आंतरिक आदेश-संग्राहक, वाह्य आदेश संग्राहक, धर्म प्रचार साहित्य विक्रेता, बिक्री इंजीनियर, तथा मूर्त तथा अमूर्त उत्पादों के विक्रेता आते हैं।

कार्य की स्थिति एवं लक्षणों के आधार पर भी विक्रय कार्यों में एक विशेष भेद हैं। एक विक्रय कार्य में कम निरीक्षण, उच्च्च प्रेरक प्रयास, अधिक भाग, अधिक सामाजिक व्यवहार, कुशलता, अधिक मानसिक दृढ़ता और शारीरिक शक्ति की आवश्यकता होती है, जबकि दूसरे प्रकार के विक्रय कार्यों में ऐसा नहीं होता है या कम होता है। एक श्रेष्ठ विक्रयकर्ता में जिन गुणों एवं योग्ताओं को देखा जाता है, उनमें मुख्य हैं : अच्छा आकर्षक व्यक्तित्व,संवाद कुशलता, बुद्धि, उत्साह, पहल, ईमानदारी, एवं मानवीय संवेदना का होना। विक्रय संवर्धन में अनेक प्रकार के लघु अवधिक प्रोत्साहनों का भी

उपयोग किया जाता है, जिसका उद्देश्य लक्षित उपभोक्ताओं से अभीष्ट विक्रय लक्ष्यों की प्राप्ति करना है। इन कार्यों द्वारा उत्पादक का महत्व अधिक बढ़ जाता है। विक्रय संवर्धन के उपाय हैं- लाभ मूल्यगत लाभ, इनामी कूपन, उपभोक्ता प्रतियोगिता, वितरक प्रतियोगिता, बिक्री प्रतियोगिता, उपभोक्ता से उपभोक्ता तक योजना, रिफिल पैक, आस्थगित भुगतान, मूल्य वापसी भेंट, आश्वासन लाभ माल में छूट व रियायत, सहयोगी विज्ञापन, प्रदर्शन आदि। ये सभी तीन श्रेणियों में आते हैं - 1) उपभोक्ता संवर्धन, 2) व्यापार संवर्धन, और 3) विक्रेता दल संवर्धन।

3.14 उपयोगी शब्द कोष :-

विक्रय संपन्न करना - भावी ग्राहक संवाद की वह अंतिम अवस्था जब विक्रेता उसे उत्पाद/वस्तु खरीदने पर राजी एवं सन्तुष्ट करके उससे क्रय-आदेश प्राप्त कर लेता है।

शंका/आपत्ति का समाधान - विक्रय प्रक्रिया का वह चरण, जहाँ विक्रेता भावी ग्राहकों की शंकाओं/आपतियों को दूर करने में सफल हो जाता है और उसकी हिचक का निराकरण करता है।

सद्भावना प्रचारक - वे लोग जो वास्तविक विक्रय न करके केवल उत्पाद-सद्भावना उत्पन्न करने में सहायक करते हैं, जैसे मेडिकल प्रतिनिधि।

आदेश प्राप्तकर्ता - ये लाग ग्राहकों का पता लगाकर उन्हें अपने तर्कों से प्रभावित करके उत्पाद/सेवा प्राप्त करते हैं। ये अमूर्त एवं मूर्त दोनों प्रकार के उत्पादों की बिक्री करते हैं।

क्रय आदेश संग्राहक - वे लोग जो केवल ग्राहकों से कम का आदेश लेते हैं। इनका कार्य केवल उसे नोट करना और उसकी समय पर सपुर्दगी सुनिश्चित करना होता है। इस काम में कोई मौलिकता का प्रतिभा प्रदर्शन की गुंजाइश नहीं होती है।

पूर्वेक्षण करना- कल्पनाशील विक्रय कार्य में यह पहला चरण है। इसमें संभावित एवं भावी ग्राहकों का पता लगाना आता है। विक्रयकर्ता विभिन्न विधियों एवं माध्यमों से इनका पता लगाते हैं। वे इनके बारे में जानकारी हासिल करते हैं तथा इनकी प्रमाणिकता सुनिश्ति करते हैं।

विक्रय संवर्धन - यह वह प्रकिया है, जिसमें लघु अवधि में प्रोत्साहन/पुरस्कार देकर लक्षित ग्राहकों, विक्रयकर्ताओं तथा मध्यस्थों से अभीष्ट (उत्पाद के क्रय संबंधी) प्रतिक्रिया प्राप्त करने का प्रयास किया जाता है।

3.15 महत्वपूर्ण प्रश्नावली :-

1. व्यक्तिगत विक्रय क्या है? विपणन में इसके महत्व की व्याख्या कीजिए।
2. व्यक्तिगत विक्रय से क्या अभिप्राय है? इसमें विक्रय संवर्धन में क्या अंतर है।
3. व्यक्तिगत विक्रय के विभिन्न सिद्धान्तों का विवेचन कीजिए।
4. विक्रयकर्ता कौन होता है? एक अच्छे विक्रयकर्ता में किन-किन गुणों एवं योग्यताओं का होना अनिवार्य है।
5. विक्रय संवर्धन से क्या अभिप्राय है? विभिन्न विक्रय-संवर्द्धन उपायों का विवरण बाजार में विक्रय संवर्द्धन से सम्बन्धित प्रयासों की क्या परिसीमाएँ है? दीजिए।
6. विक्रय संवर्द्धन की विभिन्न रीतियों की भली भाँति समझाइये। भारत जैसे विक्रेता।

इकाई 4 : वितरण माध्यमों का प्रबन्ध

इकाई रूपरेखा

4.0 उद्देश्य

4.1 प्रस्तावना

4.2 वितरण माध्यम परिचय, कार्य तथा उपयोग

4.3 वितरण माध्यम को प्रभावित करने वाले कारक

4.4 मध्यस्थ परिचय तथा कार्य

4.5 थोक व्यापारी तथा फुटकर व्यापारी

4.6 नवीन शताब्दी का थोक एवं फुटकर व्यापार

4.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययनोपरान्त आप छात्रगण इस योग्य हो सकेंगे कि -

- विपणन व्यावस्था में वितरण के माध्यमों की भूमिका को विस्तृत रूप से समझ सकेंगे।
- वितरण के माध्यम के चुनाव को प्रभावित करने वाले कारकों को समझ सकेंगे।
- मध्यस्थों का आशय तथा इनकी विभिन्न रूपों की विवेचना कर सकेंगे।
- थोक व्यापारी तथा फुटकर व्यापारियों के कार्य, सेवाएँ तथा इनके विभिन्न स्वरूपों का वर्णन कर सकेंगे तथा
- नवीन शताब्दी में थोक एवं फुटकर व्यापार प्रकृति का वर्णन कर सकेंगे।

4.1 प्रस्तावना

अभी तक हम विपणन मिश्र के कई महत्वपूर्ण घटकों का अध्ययन कर चुके हैं। आप यह भी जान चुके हैं कि एक अच्छे उत्पाद के लिए केवल अच्छे गुणों का होना, अच्छी तरह से पैक किया होना या अच्छा नाम होना ही इसकी बाजार में लोकप्रिय होने के लिए पर्याप्त नहीं है। उत्पाद का सही समय और सही स्थानों पर उपलब्ध किया जाना भी आवश्यक है। इन्हीं आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए प्रत्येक निर्माता-फर्म सुचारू तथा व्यवस्थित वितरण की युक्ति पूर्ण व्यवस्था करती है। इनमें एक निर्णय वितरण के विभिन्न माध्यमों का चयन होता है। इस इकाई में वितरण के माध्यमों में तात्पर्य, भूमिका और कार्यों वितरण के विभिन्न माध्यम, इनको प्रभावित करने वाले कारक, इनसे सम्बन्धित युक्तियाँ मध्यस्थों के कार्य तथा प्रकार, इसके साथ-साथ थोक व्यापारियों तथा फुटकर व्यापारियों से सम्बन्धित आवश्यक पहलुओं को जानने की कोशिश करेंगे।

4.2 वितरण माध्यम, परिचय, कार्य तथा उपयोग

सामान्यतः वितरण प्रणाली का सम्बन्ध उत्पादों को उत्पादन बिन्दुओं से उपभोक्ता बिन्दुओं की ओर ले जाने की प्रक्रिया से होता है और इस प्रक्रिया से निम्न पक्ष जुड़े होते हैं :- निर्माता, मध्यस्थ, व्यापार में सहायक अन्य एजेंसियों तथा उपभोक्ता दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं कि - उत्पादों तथा अधिकार स्वामित्व को अन्तिम उपभोक्ता तक पहुँचाने में जो माध्यम अपनाया जाता है यही वितरण माध्यम कहलाता है।

उत्पादों का उत्पादन विनिर्माता द्वारा किया जाता है, अतः यह वितरण प्रणाली की कड़ी है। वितरण प्रणाली में भाग लेने वाला दूसरा पक्ष मध्यस्थों का होता है। मध्यस्थ लोग प्रत्यक्ष बातचीत के आधारों पर क्रेताओं व विक्रेताओं के बीच आपसी संपर्क बनाते हैं और उन्हें व्यापारिक लेन-देन करने में सहायता देते हैं। इनके द्वारा उत्पाद का स्वामित्व लेना आवश्यक नहीं है। इनका मुख्य कार्य विभिन्न प्रकार के उत्पादों के विनिर्माताओं का पता लगाना, उपभोक्ताओं की आवश्यकताओं की जानकारी प्राप्त करना और इसके साथ ही उत्पादों का वितरण करना होता है। उक्त प्रक्रिया के अंतर्गत मध्यस्थ लोग विभिन्न कार्य करते हैं, जैसे-माल का क्रय-विक्रय एकत्रीकरण, प्रमापीकरण व श्रेणीकरण, पैकिंग और पैकेजिंग, जोखिम उठाना आदि। मध्यस्थ के अलावा वितरण प्रणाली में भाग लेने वाला पक्षों में व्यापार में सहायक एजेंसियाँ भी सम्मिलित होती है। इनका मुख्य कार्य उपभोक्ताओं तक पहुँचने वाले उत्पादों व माल के प्रवाह को सुगम एवं सुचारू बनाना होता है। एजेंसियाँ एक प्रकार से स्वतंत्र व्यापारी संस्थाओं की तरह और मध्यस्थों से अलग होती है। बैकिंग संस्थाएँ, बीमा कंपनियाँ, परिवहन एजेंसियाँ संग्रहरण की सुविधा प्रदान करने वाले भंडारगृह आदि प्रमुख सहायक ऐजेंसियाँ हैं। वितरण प्रणाली में भाग लेने वाला चौथा और भौतिक पक्ष उपभोक्ताओं का है।

NPDC-130

इसी प्रकार वितरण प्रणाली द्वारा उपभोक्ता अपनी पसंद के आकार, माप, मात्रा, विधि एवं पैकेज के उत्पाद को प्राप्त कर सकता है। अतः सुविधा मूल्य का सृजन होता है। वितरण प्रणाली द्वारा जो अन्य सुविधा एवं उपयोगिता प्राप्त होती है वह यह कि उपभोक्ता अपनी पसंद की स्थिति में, अपनी पसंद के मूल्यों पर उत्पादों का क्रय कर सकता है जिनसे उसे संतुष्टि एवं स्वामित्व-गौरव प्राप्त होता है। अतः वितरण प्रणाली स्वामित्व उपयोगिता का भी सृजन करती है। अतः हम यह कह सकते हैं कि वितरण प्रणाली उत्पादन केन्द्रों से उपभोक्ता केन्द्रों तक उत्पादों को पहुँचाकर उन्हें सही स्थिति में, सही स्थान तथा सही समय पर उपलब्ध कराती है।

उपरोक्त विवेचन से हम कह सकते हैं कि (i) वितरण-माध्यम में निर्माता व अन्तिम उपभोक्ता दोनों को रखा जाता है। (ii) अतः इन दोनों को मिलाने में जो भी मध्यस्थ अपनी सेवाएँ प्रदान करते हैं वे इनके अन्तर्गत आते हैं। (iii) लेकिन वे संस्थाएँ वितरण-माध्यम की परिभाषा में सम्मिलित नही की जाती हैं, जो सिर्फ सेवाओं को ही

प्रदान करती हैं और उत्पादों का स्वामित्व सम्बन्धी अधिकार नहीं बदलती, जैसे बैंके, परिवहन संस्थाएँ, भण्डार आदि। इसका तात्पर्य यह है कि वितरण-माध्यम में उत्पाद का स्वामित्व बदलना आवश्यक है। इसके अतिरिक्त, यह भी आवश्यक है कि किसी मध्यस्थ के द्वारा उत्पाद में कोई परिवर्तन न हो। यदि उत्पाद की प्रकृति आकृति, गुण आदि में परिवर्तन कर दिया जाता है, तो जिस मध्यस्थ ने परिवर्तन किया है वहाँ से नया वितरण - माध्यम प्रारम्भ हो जाता है।

संक्षेप में वितरण के माध्यमों द्वारा निष्पादित कार्यों को हम तीन वर्गों में रख सकते हैं :-

(i) लेन-देन संबंधी कार्य

(ii) उत्पाद के भौतिक हस्तांतरण संबंधी कार्य

(iii) व्यापार में अन्य सहायक कार्य।

(1) लेन-देन संबंधी कार्य- माल के क्रय-विक्रय से संबंधित आवश्यक कार्यों को लेन-देन संबंधी कार्य कहते हैं। माल को खरीदने-बेचने एवं जोखिम उठाने के कार्य इसी श्रेणी में आते हैं। वितरण के माध्यम में इन तीन कार्यों का निष्पादन भली-भांति होता है। साधारणतया उत्पादक अपना माल मध्यस्थों को बेचते हैं। कालांतर में मध्यस्थ इस प्रकार खरीदे गए माल का विक्रय उपभोक्ताओं को कर देते हैं। वितरण के माध्यम के अंतर्गत माल का क्रय-विक्रय होने से उसका स्वामित्व बदल जाता है। वितरण के माध्यमों में एक और बात विचारणीय है। यह वह कि माल का प्रत्येक क्रय जोखिमपूर्ण होता है। उदाहरण के लिए, एक मध्यस्थ ने लाभ कमाने के उद्देश्य से माल खरीदा परंतु बाजार में माल की कीमतें गिर जाने से उसे हानि उठानी पड़ी। स्पष्ट है कि वितरण के माध्यम में संलग्न सभी भागादारी को इस प्रकार का हानि अथवा घाटे का जोखिम उठाना पड़ता है।

NMDC-30

(2) माल के भौतिक हस्तांतरण संबंधी कार्यः - व्यावसायिक माल के भौतिक विनिमय के लिए आवश्यक कार्य माल के भौतिक हस्तांतरण संबंधी कार्य कहलाते हैं। उदाहरण के लिए, एकत्रीकरण, भंडारण, श्रेणीकरण तथा परिवहन संबंधी कार्य माल के भौतिक विनिमय को सरल एवं सुगम बनाते हैं। वितरण का माध्यम इन कार्यों का निष्पादन में महत्वपूर्ण एवं उपयोगी भूमिका निभाता है।

उपभोक्ताओं से प्राप्त क्रय आदेशों को शीघ्र पूरा करने के उद्देश्य से माल का पर्याप्त मात्रा में एकत्रीकरण करना जरूरी होता है। कई बार उपभोक्ताओं को उत्पाद छाँटने की सुविधा प्रदान करने के लिए तरह-तरह के माल का एकत्रीकरण किया जाता है। श्रेणीकरण एवं पैकिंग माल को उठाने-रखने एवं विक्रय को सुगम बनाता है। भंडारण की समुचित व्यवस्था माल को क्षतिग्रस्त होने से बचाती है और उपभोक्ताओं को माल की नियमित आपूर्ति सुनिश्चित करने में सहायक सिद्ध होती है। परिवहन के माध्यम से माल उपभोक्ताओं द्वारा अपेक्षित अथवा आदेशित स्थानों पर उपलब्ध कराया जाता है। इन

सभी कार्यों को पूरा करने का श्रेय वितरण के माध्यम को ही जाता है। वितरण के माध्यम के कारण अंतिम उपभोक्ताओं को आवश्यक उत्पाद सही समय व सही स्थान पर सुविधा से प्राप्त हो जाती हैं।

(3) व्यापार में अन्य सहायक कार्य : ये कार्य व्यवसायिक लेन-देन के साथ-साथ माल के भौतिक विनिमय को आसान एवं सुविधाजनक बनाते हैं। व्यापारियों को वित्तीय सहायता देना, विक्रयोपरांत सेवा एवं अनुरक्षण प्रदान करना, बाजार, संबंधी सूचनाएँ उपलब्ध करना आदि इन कार्यों की कोटि में आते हैं। ये मध्यस्थ विक्रेता कुछ अन्य सहायक कार्य भी करते हैं। जैसे-माल को उधार देना तथा विक्रयोपरांत सेवा इत्यादि। इसी प्रकार उत्पादक अपने व्यापारियों को उत्पाद बेचने हेतु उपयोगी परामर्श देते हैं और इसी प्रकार व्यापारी भी उत्पादकों को उपभोक्ताओं की रूचि, फैशन एवं मांग, उपभोक्ता अपेक्षाओं के बारे में समय-समय पर सूचित करते रहते हैं।

संक्षेप में, वितरण के माध्यम के विभिन्न कार्य हैं-माल का क्रय, विक्रय, एकत्रीकरण, संग्रहण, श्रेणीकरण, परिवहन, जोखिम, उठाना, विक्रयोपरान्त सेवा सुलभ करना, वित्तीय सहायता प्रदान करना, बाजार संबंधी सूचनाएँ जुटाना आदि। माल के प्रकार एवं प्रकृति को ध्यान में रखते हुए इन कार्यों का सापेक्ष महत्व कम हो सकता है। उदाहरण के लिए, शीघ्र नष्ट होने वाले माल तथा भारी सामग्री के संबंध में परिवहन तथा भंडारण अपेक्षाकृत अधिक महत्वपूर्ण है। वाहन तथा कम्प्यूटर जैसी अधिक परिष्कृत उत्पादों की दशा में विक्रयोपरान्त सेवा अधिक आवश्यक है।

NMDC-1

उपरोक्त विशिष्ट कार्यों के अतिरिक्त अग्रलिखित कार्यों का अध्ययन महत्वपूर्ण है-

वित्त प्रबन्ध करना - वितरण- माध्यम का एक और महत्वपूर्ण कार्य है, वित्त का प्रबन्ध करना है। यदि उत्पादक मध्यस्थों के माध्यम से बेची जाती है तो मध्यास्थों के द्वारा अपने आदेश के साथ कुछ धन अग्रिम के रूप में दिया जाता है जिससे निर्माता को अपने वित्त प्रबन्ध में सुविधा रहती है। कभी-कभी मध्यास्थों को माल बैंकों के माध्यम से भी भेजा जाता है जिससे निर्माता उस माल सम्बन्धी प्रपत्रों को बैंक से बट्टे पर भुना लेता है और इस प्रकार अपने वित्त का प्रबन्ध कर लेता है। कभी-कभी वितरक या प्रतिनिधि भी नियुक्ति किये जाते हैं उनमें भी कुछ धन धरोहर के रूप में मिल जाता है। इस प्रकार वितरण-माध्यम का कार्य वित्त प्रबन्ध करना भी है।

संवर्धन क्रियाएँ करना - व्यावसाय में निर्माता एवं मध्यस्थों के द्वारा संवर्द्धन क्रियाएँ की जाती हैं। यह मध्यस्थ दुकान की आलमारियों में उत्पादों का प्रदर्शन करके विक्रय-संवर्धन व विज्ञापन का कार्य करते हैं। कभी-कभी यह मध्यस्थ स्वयं विज्ञापन व विक्रय-संवर्धन कार्य भी करते हैं। निर्माता भी इन मध्यस्थों को इस कार्य को करने के लिए विभिन्न प्रकार के प्रलोभन देते है जैसे दुकान की साज-सज्जा के लिए आलमारी रैंक, इश्तहार, आदि मुफ्त देना; विज्ञापन व विक्रय-संवर्द्धन व्यय का कुछ भाग स्वयं वहन करना व मध्यस्थों के विक्रयकर्ताओं को प्रशिक्षण देना आदि।

संचार में सहायता करना - वितरण - माध्यम संचार सुविधा का भी कार्य करते हैं। वे मध्यस्थ जो किसी निर्माता की उत्पाद बेचते हैं वे अपने निर्माता को बाजारू सूचनाएँ भी देते रहते हैं जिससे निर्माता क्रेताओं की पसन्द व आवश्यकता के अनुसार उत्पादन में फेर-बदल करता रहता है और समयानुसार उत्पाद कर लाभ कमाता रहता है।

सौदों की संख्या कम करना - वितरण - माध्यम सौदों की संख्या को कम करते हैं जिससे वितरण-व्यायों में भी कमी हो जाती है। यदि वितरण-माध्यम न हों तो प्रत्येक क्रेता को अपना सीधा सम्पर्क निर्माता से स्थापित करना होगा, लेकिन वितरण-माध्यम होने से उन्हें ऐसा नहीं करना पड़ता है और वे मध्यस्थों के माध्यम से अपनी वस्तुएँ क्रय कर लेते हैं।

उपभोक्ताओं की सेवा करना - वितरण-माध्यम का सबसे महत्वपूर्ण कार्य उपभोक्ता को उत्पाद मिलता है और यदि उसको कोई कठिनाई होती है तो इन्हीं के माध्यम से वह कठिनाई भी दूर की जाती है।

स्वपरख प्रश्न

प्रश्न - 1 वितरण के माध्यम से क्या तात्पर्य है ?

प्रश्न - 2 बताइए की निम्नलिखित कथन सत्य हैं या असत्य?

i. वितरण माध्यम द्वारा केवल क्रय-विक्रय कार्य किए जाते हैं।

ii. वितरण माध्यम का मुख्य वस्तुओं व उत्पादों का परिवहन है।

iii. जोखिम उठाना वितरण माध्यमों द्वारा निष्पादित कार्यों में से एक है।

iv. वितरण के माध्यमों में सहायक एजेन्सियाँ माल का स्वामित्व ग्रहण कर लेती हैं।

v. वितरण के माध्यमों द्वारा माल में सुविधा की उपयोगिता का सृजन होता है।

वितरण के विभिन्न माध्यमों का उपयोग

आप वितरण के माध्यमों की प्रकृति एवं उनके कार्यों का अध्ययन कर चुके हैं। अब आइये आपको उत्पादकों द्वारा उपयोग में लाए जाने वाले वितरण के विभिन्न माध्यमों के विषय में बताएँगे। वितरण के माध्यमों को मुख्य रूप से दो श्रेणियों में विभाजित कर सकते हैं : i) प्रत्यक्ष माध्यम, तथा ii) अप्रत्यक्ष माध्यम।

1) प्रत्यक्ष माध्यम : वितरण के इस माध्यम के अंतर्गत उत्पादक अपने उत्पादों का विक्रय सीधे उपभोक्ताओं को करता है। इसलिए इसे प्रत्यक्ष माध्यम कहते हैं। उत्पादक तथा उपभोक्ता के बीच कोई मध्यस्थ नहीं होता।

सीधे विक्रय में, पहला विकल्प उत्पादक को अपने विक्रय प्रतिनिधि द्वारा

उपभोक्ता को माल पहुँचाना तथा दूसरा विकल्प डाक द्वारा माल भेजना है। इसमें उपभोक्ता से डाक या टेलीफोन पर आदेश प्राप्त करके उपभोक्ता को उनके द्वारा अभीष्ट माल की आपूर्ति करनी होती है। इस प्रणाली में डाक से अथवा आदमी भेजकर आपूर्ति की जाती है। अन्य तरीके अपनी फुटकर बिक्री दुकानों के माध्यम से बिक्री करना है। उदाहरण के लिए लखानी शू कंपनी देश-भर में अपने माल अपनी फुटकर दुकानों (शो-रूमों) के माध्यम से बेचती है। यही विधि छोटे स्तर पर कई किस्म के उत्पादकों द्वारा प्रणाली है, क्योंकि इसमें उत्पादक अथवा विनिर्माता और उपभोक्ता के बीच कोई भी संबंध नहीं होता है। प्रतिनिधि, थोक विक्रेता, फुटकर विक्रेता के माध्यम से उत्पाद उपभोक्ता तक पहुँचता है :

प्रत्यक्ष प्रणाली के लाभ - प्रत्यक्ष विक्रय प्रणाली से अग्रलिखित लाभ प्राप्त होते हैं-

(अ) उपभोक्ताओं को लाभ - प्रत्यक्ष विक्रय प्रणाली से उपभोक्ता को निम्न लाभ मिलते हैं- (1) इस प्रणाली के माध्यम से उत्पाद जिस रूप, रंग, आकार, प्रकार की निर्माता द्वारा बनायी जाती है उसी नलकूप में उपभोक्ताओं को प्राप्त होती है। मध्यास्थ उसमें मिलावट न नकली बदलने का अवसर नहीं होता।

(2) इस प्रणाली से विक्रय करने पर उपभोक्ताओं को निर्माता द्वारा दी गयी सभी सेवाएँ उपलब्ध हो जाती है जैसे विक्रय के बाद सेवा। यही नहीं, उपभोक्ता की शिकायतों पर तुरन्त, क्षमतापूर्वक ध्यान दिया जाता है।

NMDC-130

(3) इस पद्धति से उपभोक्ताओं को उत्पाद सस्ती मिलती है। इसका कारण यह है कि मध्यस्थों के लाभ लेने से जो उत्पाद का मूल्य बढ़ता, वह मध्यस्थों न होने के कारण नहीं बढ़ पाता और इस प्रकार उपभोक्ताओं की कम लागत पर उत्पाद मिल जाते हैं।

(4) निर्माता सीधी बिक्री में उत्पादों का मूल्य निर्धारित कर देता है और उपभोक्ताओं को वही उत्पाद खरीदते समय चुकाना पड़ता है। इस प्रकार उपभोक्ताओं को निर्धारित मूल्य पर उत्पाद मिल जाता है और मोलभाव नहीं करना पड़ता। कभी-कभी निर्माता अपनी उत्पाद पर कुछ समय के भीतर खरीदने पर छूट देता है जैसे दीपावली के अवसर पर 20 प्रतिशत की छूट। उपभोक्ताओं को इस छूट से लाभ प्राप्त करने का पूरा अवसर मिलता है।

(ब) निर्माता को लाभ - प्रत्यक्ष प्रणाली से निर्माता को निम्न लाभ मिलते हैं-

(1) इस प्रणाली में निर्माता और उपभोक्ता का सीधा सम्पर्क होने से निर्माता को बाजार की मांग, उपभोक्ता की रूचि में परिवर्तन, फैशन में परिवर्तन आदि का पता लगता रहता है जिससे उत्पादन को उसी के अनुरूप बनाकर अधिकतम लाभ कमाया जा सकता है।

(2) इस पद्धति के अनुसार एक विक्रय स्थान पर केवल एक ही निर्माता को माल बेचा जाता है। इसका परिणाम यह होता है कि अन्य प्रतियोगी उत्पाद उपभोक्ता के समक्ष प्रस्तुत ही नहीं होती और इस प्रकार उपभोक्ता बिना प्रतियोगी वस्तुओं का मुकाबला किये खरीद लेता है और निर्माता प्रतिस्पर्द्धा से बच जाता है।

(3) मूल्य नियन्त्रण सम्भव - निर्माता अपनी उत्पादों के सम्बन्ध में अपनी इच्छानुसार मूल्य निर्धारित कर सकता है और यदि बिक्री बढ़ाने के लिए किसी विक्रय प्रवर्द्धन युक्ति के अपनाने की आवश्यकता है तो वह उसके भी अपना सकता है।

प्रत्यक्ष विक्रय प्रणाली के दोष - प्रत्यक्ष विक्रय प्रणाली के दोषों का अध्ययन भी उपभोक्ता एवं निर्माता दोनों के दृष्टिकोणों से किया जा सकता है :-

(अ) उपभोक्ताओं के दृष्टिकोण से - (1) इस प्रणाली से विक्रय होने पर उपभोक्ताओं को उत्पादों में तुलना करने का अवसर नहीं मिलता है।

(2) उसको निर्माता द्वारा निर्धारित मूल्य देना पड़ता है और मोल भाव का अवसर नहीं मिलता है।

(3) उपभोक्ताओं को एक बार क्रय की गयी उत्पाद को पसन्द न आने पर बदलने की सुविधा नहीं मिलती है।

(ब) निर्माता के दृष्टिकोण से दोष - (1) निर्माता के लिए यह प्रणाली अधिक खर्चीली है तथा इसके अपनाने से अधिक पूँजी व्यय की आवश्यकता है।

अप्रत्यक्ष वितरण प्रणाली के लाभ :- अप्रत्यक्ष प्रणाली से उपभोक्ता एवं निर्माता दोनों को लाभ होता है। यह लाभ इस प्रकार है :-

(अ) उपभोक्ताओं को लाभ - (1) इस प्रणाली से विक्रय करने से उपभोक्ताओं को उत्पाद चयन करने में सुविधा रहती है। (2) विभिन्न निर्माताओं के उत्पादों की तुलना भी की जा सकती है। (2) विभिन्न उत्पाद को देखने से प्रत्यक्ष प्रणाली के लाभ, दोष, अप्रत्यक्ष प्रणाली का अर्थ उपभोक्ताओं को उत्पादों का ज्ञान होता है कि बाजार में किस प्रकार को उत्पाद उपलब्ध हैं और उनमें सबसे आधुनिक कौन सा है।

(ब) निर्माता को लाभ - (1) इस प्रणाली में विक्रय करने से निर्माता को बिक्री-व्यावस्था करने से मुक्ति मिल जाती है और वह अपना ध्यान अन्य आवश्यक बातों में लगा सकता है। (2) इस ढंग के अपनाने से निर्माता को अधिक पूँजी की आवश्यकता नहीं रहती तथा मध्यस्थों से अग्रिम रकम लेकर पूँजी में वृद्धि की जा सकती है। (3) इस तरीके से व्यापार का विस्तार होता है। अर्थात् दूर-दूर तक उपभोक्ताओं को उत्पाद मध्यस्थों के माध्यम से पहुँचायी जा सकती है। (4) इस प्रणाली से संस्था के स्थायी व्ययों में वृद्धि नहीं होती और न वृहत विक्रय संगठन बनाने की आवश्यकता रहती है।

अप्रत्यक्ष वितरण प्रणाली के दोष - अप्रत्यक्ष वितरण प्रणाली के दोषों का अध्ययन भी उपभोक्ता एवं निर्माता के दृष्टिकोणों से किया जाता है :

(अ) उपभोक्ताओं के दृष्टिकोणों से दोष - (1) उपभोक्ताओं को उत्पाद का

अधिक मूल्य देना पड़ता है क्योंकि बीच में जितने मध्यस्थ आते हैं उन सबके द्वारा अपना-अपना लाभ का हिस्सा जोड़ा जाता है जो अन्त में उत्पाद के विक्रय मूल्य को बढ़ा देता है। (2) उपभोक्ता को अधिकांश दशाओं में उत्पाद मूल रूप से नहीं मिलती। उसमें मिलावट आदि की सम्भावनाएँ अधिक हो जाती है। (3) मध्यस्थों द्वारा उपभोक्ताओं को घटते हुए मूल्यों का लाभ नहीं दिया जाता पर लेकिन यदि कभी मूल्य बढ़ जाते हैं तो वे तुरन्त ही विक्रय मूल्य बढ़ा देते हैं। (4) उत्पादक व उपभोक्ताओं में सीधा सम्बन्ध नहीं होता। इसका परिणाम यह होता है कि यदि उपभोक्ता सन्तुष्ट नहीं है तो उसको सीधे शिकायत का मौका नहीं मिलता उसे मध्यस्थों द्वारा ऐसी शिकायतों पर उचित ध्यान नहीं दिया जाता है।

(ब) निर्माता के दृष्टिकोण से दोष - (1) इस प्रणाली के अन्तर्गत निर्माता को उपभोक्ता की रूचि, एवं प्रक्रियाओं का पता नहीं लग पाता और उसको इस कार्य के लिए अलग से बाजार अनुसंधान आदि पर व्यय करना पड़ता है। (2) निर्माता मांग का भी उचित अनुमान नहीं लगा पाता क्योंकि उसको मध्यस्थों के ऊपर निर्भर रहना पड़ता है। इससे मध्यस्थों द्वारा निर्माता का शोषण किया जाता है। (3) मध्यस्थों के लाभ एवं व्यय वस्तु के विक्रय मूल्य में वृद्धि करते हैं, जिसका परिणाम ये होता है कि वस्तु प्रतियोगिता में पिछड़ जाती है।

(III). दोहरी वितरण प्रणाली

MDC-30

"जब एक निर्माता दोनों प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष वितरण प्रणालियों को अपनाता है तो ऐसी प्रणाली दोहरी वितरण प्रणाली कहलाती है।" इस प्रणाली में दोनों के लाभ मिलते हैं। वर्तमान समय में विपणन क्रियाओं के विस्तार के लिए यह प्रणाली बहुत ही उपयोगी है और आजकल प्रत्येक निर्माता के लिए एक आवश्यकता बनती जा रही है। इस प्रणाली को अपनाने का मुख्य उद्देश्य वितरण को व्यापक बनाना है।

लेकिन इस प्रणाली को अपनाने में सबसे बड़ी समस्या बाजारों के उचित विभाजन की है। यह तय करना कठिन होता है कि किस स्थान पर प्रत्यक्ष प्रणाली अपनायी जाय व किस पर अप्रत्यक्ष प्रणाली। प्रत्यक्ष वितरण एवं विक्रय प्रणाली के तीन मुख्य प्रकारों को चित्र में दर्शाया गया है।

उत्पादनकर्ता	भ्रमणशील विक्रय प्रतिनिधि	उपभोक्ता
उत्पादनकर्ता	फुटकर विक्रेता	उपभोक्ता
उत्पादनकर्ता	टेलीफोन या पत्रव्यवहार द्वारा विक्रय आदेश	उपभोक्ता

(1) प्रत्यक्ष माध्यम

प्रत्यक्ष विक्रय का एक उदाहरण भारत स्थित कंपनी एम0वे लि0 है। जो विभिन्न उत्पादों का निर्माण करती हैं। इस कंपनी का विश्वास है कि यदि हम यह जानते हैं कि हमारा बाजार उपभोक्ता का घर है तो फिर हमें उसके घर पर ही दस्तक देनी चाहिए। इस दल में विक्रय सदस्यों में 50,000 व्यक्ति हैं, जो देश-भर में अनेक नगरों में अवस्थित हैं। यह अपने आप में देश का सबसे बड़ा विक्रता दल है। कंपनी ने वर्ष 2002-03 के बीच अपनी बिक्री को 5 करोड़ रुपए को बढ़ाकर 55 करोड़ रुपए कर लिया था। जो निःसंदेश प्रशंसनीय है। कंपनी ने अपनी विक्रय-नीति तय करने में विश्व प्रसिद्ध वैक्यूम क्लीनर निर्माता कंपनी इलेक्ट्रोलक्स तथा यूरेकाफोब्स का अनुसरण किया, जिसका घर-घर जाकर बिक्री करने की नीति में अगाध विश्वास था।

(2) अप्रत्यक्ष माध्यम

उत्पादक द्वारा प्रत्येक उत्पाद का विक्रय सीधे उपभोक्ताओं को करना संभव नहीं हैं। अतः वह वितरण के माध्यम में भाग लेने वाले विभिन्न मध्यस्थों की सहायता लेता है। मध्यस्थों के माध्यम से माल बेचने को अप्रत्यक्ष माध्यमों की प्रणाली कहा जाता है। अप्रत्यक्ष माध्यम चार प्रकार के हो सकते हैं, जिन्हें चित्र में दर्शाया गया है।

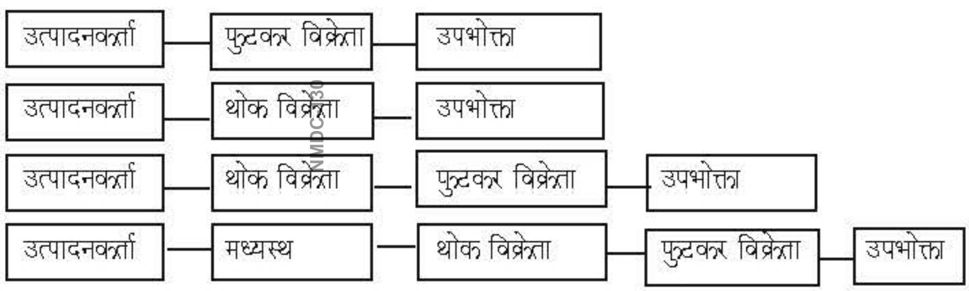

उत्पादक अपना माल सीधे फुटकर व्यापारियों को बेच सकता है। वह निश्चित समयांतरों पर फुटकर व्यापारियों की आवश्यकतों का पता लगाकर तद्नुसार उन्हें माल की आपूर्ति करता है। आवश्यक होने पर स्वयं फुटकर व्यापारी भी प्राप्त माल को उपभोक्ताओं को बेचता है। ऐसा वह उसके पास के गोदाम से माल मँगवाकर करता है। इसके साथ ही उत्पादक भी अपने थोक व्यापारियों के माध्यम से उपभोक्ताओं को माल की आपूर्ति कर सकता है। क्योंकि इन दोनों माध्यमों में केवल एक ही मध्यस्थ होता है, अतः इस माध्यम को एक स्तरीय माध्यम कहते हैं। दूसरी ओर, उत्पादक थोक अथवा फुटकर दोनों में से किसी भी व्यापारी का उपयोग कर सकता है। फुटकर विक्रेता भी समय-समय पर थोक विक्रेता से माल खरीद करके अपने इलाके के उपभोक्ताओं को आपूर्ति कर सकता है। क्योंकि इस स्थिति में दो मध्यस्थ होते हैं अतः इस माध्यम को द्वि-स्तरीय कहते हैं। इसके अतिरिक्त एक अन्य वितरण माध्यम है, जिसमें व्यापारिक एजेंट थोक विक्रेता तथा फुटकर व्यापारी होते हैं। इसमें उत्पादक अथवा विनिर्माता व्यापारिक एजेन्ट से लेन-देन करता है। व्यापारिक एजेन्ट उत्पादक का माल थोक

व्यापारियों को बेचते हैं और फिर ये थोक व्यापारी फुटकर व्यापारियों को थोड़ी-थोड़ी मात्रा में माल बेचकर उसे अन्तिम उपभोक्ता तक पहुँचाते हैं। क्योंकि इसमें तीन प्रकार के मध्यस्थ होते हैं, अतः इस माध्यम को त्रिसूत्री माध्यम कहते हैं।

4.3 वितरण माध्यम को प्रभावित करने वाले कारक

अब तक आप मान चुके हैं कि उत्पाद के वितरण हेतु बहुत से माध्यमों का प्रयोग किया जाता है वितरण का माध्यम प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष हो सकता है। हम यह भी पढ़ चुके हैं कि विभिन्न प्रकार के उत्पादों के लिए भिन्न माध्यमों का प्रयोग किया जाता है। किसी उत्पाद के वितरण के लिए उपयुक्त माध्यम के चुनाव में यह देखा जाता है कि इससे विभिन्न बाजारों में उपभोक्ताओं की आवश्यकताएँ उचित लागत में पूरी हो जाएं। वितरण का माध्यम के चयन में महत्वपूर्ण घटकों को निम्नलिखित वर्गों में विभक्त किया गया है-

1) उत्पाद के दृष्टिकोण में :-

i) ह्रासशीलता :- उत्पाद का प्रकार भी माध्यम के चयन को प्रभावित करता है। दूध आदि नाशवान पदार्थों को छोटे माध्यमों द्वारा वितरित किया जाता है। यदि शीघ्र नाशवान पदार्थों के वितरण के लिए दीर्घकालिक माध्यमों का उपयोग किया गया, तो उनके उपभोक्ता तक पहुँचने के समय तक खराब हो जाने का डर होता है। इसलिए इन पदार्थों को छोटे माध्यमों द्वारा शीघ्रातिशीघ्र वितरित किया जाता है।

NMBC-130

ii) भारी उत्पाद :- भारी तथा आकार में बड़े उत्पादों के लिए, जिनके उठाने और वितरण में काफी लागतें आती हैं, छोटे माध्यमों को ही चुनते हैं। दूसरी ओर हल्की और आकार में छोटी उत्पादों जैसे-सिले हुए वस्त्र, कपड़ा व पाकेट कैलकुलेटर्स, स्टेशनरी, टूथपेस्ट, टुथब्रश आदि के लिए दीर्घकालिक माध्यमों का चयन किया जाता है।

iii) उत्पाद तकनीकी :- ऐसे बिजली के उपकरण व साज-समान जिनको उठाने और लादने के लिए बड़ी सावधानी की आवश्यकता होती है, उनके लिए सामान्यतः छोटे माध्यमों का चयन किया जाता है। कम्प्यूटरों, जिरॉक्स मशीनों आदि उन्नत एवं परिष्कृत साज-सामान के लिए विक्रयपूर्व तथा विक्रयोपरांत सेवा की आवश्यकता होती है। अतः विनिर्माता इनका वितरण सामान्यतः सीधे उपभोक्ता को ही करते हैं। फिर भी सामान्य कोटि के इलेक्ट्रॉनिक खिलौने, घड़ियाँ आदि वितरण द्वारा लंबे माध्यमों के उपयोग से आपूर्ति की जाती है।

iv) उत्पाद मूल्य :- उत्पाद का प्रति इकाई मूल्य भी माध्यम के चुनाव में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। सामान्यतः प्रति इकाई कम मूल्य वाले उत्पादों के लिए लंबे माध्यमों का ही उपयोग किया जाता है। यदि इन उत्पादों को भारी मात्रा में विक्रय किया जाए या इन्हें किसी अन्य उत्पाद के साथ-साथ वितरित किया जाए तो छोटे माध्यम ही सामान्य रूप से सस्ते पड़ते हैं।

2) बाजार में दृष्टिकोण में :-

i) उपभोक्ता की संख्या : यदि उपभोक्ताओं की संख्या अत्यधिक हो तो लंबे एवं बहुआयामी माध्यमों का उपयोग सही रहेगा, क्योंकि इससे गहन वितरण संभव हो सकेगा। छोटे माध्यम तथा सीधी बिक्री केवल कम संख्यात्मक उपभोक्ता समूहों में कारगर सिद्ध होती है, जबकि समूहों में कारगर सिद्ध होती है, जबकि वे बड़ी मात्रा में खरीदारी करें और छोटे-से स्थान में केन्द्रित हों।

ii) बिक्री का पूर्वानुमान : वितरण के माध्यम का चयन व्यापारिक माल की लक्षित मात्रा पर निर्भर करता है। विभिन्न माध्यमों का लक्षित उपभोक्ताओं तक पहुँच एवं बिक्री की मात्रा संबंधी क्षमता की भी एक सीमा होती है। कई बार एक ही बिक्री केन्द्र से सभी लक्षित उपभोक्ताओं तक पहुँच पाना संभव नहीं होता। ऐसी स्थिति में और केन्द्र खोलना आवश्यक हो जाता है। इसके साथ ही विभिन्न माध्यमों के उपयोग से संभावित बिक्री का अनुमान लगाते हुए प्रतियोगी स्थितियों को भी ध्यान में रखना लाभदायक रहता है।

iii) उपभोक्ता संकेन्द्रण : यदि उत्पाद-विशेष के उपभोक्ताओं का किसी क्षेत्र-विशेष में सकेन्द्रण है, तो विनिर्माता उस क्षेत्र में अनेक केन्द्र खोलकर उपभोक्ताओं को सीधी बिक्री कर सकता है। अतः यदि उपभोक्ता किसी क्षेत्र विशेष में केन्द्रित हैं तो छोटे माध्यमों का विधिवत उपयोग किया जा सकता है। दूसरी ओर, यदि उपभोक्ता एक बड़े क्षेत्र में है तो विनिर्माता को लंबे एवं बहु आयामी माध्यमों का ही उपयोग करना श्रेयकर होगा।

iv) उपभोक्ता आदेश का आकर व मात्रा : माल या उत्पाद के बड़े आदेशों की आपूर्ति उत्पादक सीधे भी कर सकते हैं। सामान्यतः लंबे माध्यम केवल उन उपभोक्ताओं की दशा में लाभदायक एवं कम खर्चीले सिद्ध होते हैं, जबकि वे मात्रा एवं संख्या में बड़े हों।

(3) निर्माता के दृष्टिकोण में : एक निर्माता को आकार, वितरण-माध्यम को नियन्त्रित करने की उसकी इच्छा, उसका अनुभव एवं योग्यता, उसकी ख्याति एवं आर्थिक साधन, आदि बहुत-से घटक हैं जो निर्माता के वितरण-मार्ग सम्बन्धी चुनाव, को

प्रभावित करते हैं। यह सभी घटक निर्माता से सम्बान्धित होते हैं। अतः इनको निर्माता सम्बन्धी कारक कहते हैं।

(4) मध्यस्थ सम्बन्धी बातें :- मध्यस्थ सम्बन्धी बातें भी वितरण-माध्यम पर प्रभाव डालती हैं। मध्यस्थ सम्बन्धी बातों में (1) मध्यस्थों की सेवाएँ, (2) उनकी उपलब्धता, (3) बिक्री की सम्भावनाएँ, (4) लागत एवं (5) नीति-अनुसरण आदि बातें आती हैं।

(5) सरकार सम्बन्धी बातें :- आज के समाजवादी एवं साम्यवादी युग में सरकारें भी ऐसी शर्तें एवं प्रतिबन्ध लगा देती हैं कि एक निर्माता को मध्यस्थ चुनते समय उनको ध्यान में रखना पड़ता है जैसे, भारत में दवाइयों को बेचने वाले मध्यस्थों को सरकार ने लाइसेंस लेना पड़ता है। अतः दवाइयों के निर्माता को अपना वितरण-माध्यम चुनते समय इस बात को भी ध्यान में रखना होगा कि वितरण लाइसेंसधारी विक्रेताओं के माध्यम से ही हो, अन्यथा कम्पनी व विक्रेता के विरुद्ध कानूनी कार्यवाही की जा सकती है। इसी प्रकार शराब भी लाइसेंसधारी (ठेकेदार) मध्यस्थों के माध्यम से बेची जा सकती है।

(6) अन्य बातें : वितरण माध्यम का चुनाव करते समय कुछ अन्य बातें भी हैं। जो प्रभाव डालती है। अतः वितरण-माध्यम का चुनाव करते समय इन चार घटकों पर भी विचार कर लिया जाना चाहिए। (i) वितरण माध्यम ग्राहक की दृष्टि को ध्यान में रखकर ही तय किया जाय जिससे कि उनको वस्तु प्राप्त करने में आसानी रहे, (ii) माध्यम संस्था के उद्देश्यों के अनुकूल होना चाहिए, (iii) माध्यम में लोच भी होनी चाहिए जिससे कि उसमें आवश्यकतानुसार परिवर्तन किया जा सके। (iv) माध्यम ऐसा हो कि निर्धारित बाजार तर पहुँच सके।

(7) कंपनी की दृष्टि में :- कंपनी सम्बन्धी बातों में :-

i) वितरण की लागत : वितरण के माध्यमों में विभिन्न कार्यों पर काफी लागत आती है। माध्यमों का चयन करते समय, उनमें से प्रत्येक पर आने वाली लागत और उपभोक्ताओं पर उनके प्रभाव को ध्यान में रखना आवश्यक है। प्रायः कम लागत वाला वितरण माध्यम उपयोग में लाया जाता है। परन्तु कई बार, अधिक खर्चीला होने के बावजूद उपभोक्ताओं की सुविधा को ध्यान में रखते हुए किसी माध्यम विशेष का उपयोग किया जाता है। इन स्थितियों में उपभोक्ता-सुविधा को प्रमुखता दी जाती है, लागत में कम या अधिक होने को नहीं।

ii) लाभ पर दूरगामी प्रभाव :- सीधी बिक्री, छोटे माध्यम और लंबे

NMDC-132

माध्यम, इन सभी का कंपनी के दूरगामी अथवा अल्पकालिक लाभ पर सीधा असर पड़ता है। यदि किसी उत्पाद की मांग अधिक हो, तो अधिकाधिक उपभोक्ताओं तक पहुँचने के लिए एक-से अधिक माध्यमों का उपयोग बेहतर रहेगा, परन्तु कालांतर में प्रतिस्पर्धा के परिमामस्वरूप उत्पाद की मांग में कमी आ जाने पर लंबे वितरण माध्यमों का उपयोग श्रेष्ठ सिद्ध होगा। अतः माध्यम का चयन करते समय हमें उसके बाजार पर पड़ने वाले दूरगामी प्रभाव को भी ध्यान में रखना होगा।

iii) अनुभव एवं योग्यता :- जिन उत्पादकों के पास अनुभव एवं योग्यता दोनों होते हैं, वे सामान्यतः अपने उत्पादों का स्वयं वितरण करना पसंद करते हैं परन्तु जिन्हें विपणन संबंधी अनुभव नहीं होता, उनके लिए मध्यस्थों की सेवाओं का लाभ उठाना ठीक रहेगा।

iv) वित्तीय स्थिति :- वितरण प्रणाली की स्थापना में काफी धन की आवश्यकता होती है। अतः केवल सुदृढ़ स्थिति वाले विनिर्माता ही अपनी वितरण प्रणाली स्थापित कर सकते हैं। वित्तीय दृष्टि से कमजोर विनिर्माताओं को मध्यस्थों का सहारा लेना पड़ता है।

4.4 मध्यस्थ परिचय तथा कार्य

NIIDC

सामान्यतः मध्यस्थों से तात्पर्य उन व्यवस्थाओं से है जो उत्पादों तथा उपभोक्ताओं के बीच एक सेतु का कार्य करते हैं। विपणन मिश्र के इस महत्वपूर्ण कार्य को पूरा करने वाली इन व्यवस्थाओं के अलग-अलग नाम सामने आते हैं।

कुछ लोगों का मत है कि मध्यस्थों के कारण न केवल वितरण की लागतों और उत्पादों के विक्रय मूल्यों में वृद्धि होती है बल्कि उपभोक्ताओं को उत्पाद उपलब्ध कराने में देरी भी हो जाती है। परन्तु वास्तव में ऐसा नहीं होता है। वास्तविकता यह है कि मध्यस्थ व्यापारी उत्पादों को यथोचित लागत पर उपलब्ध कराने के साथ-साथ बहुत सी अन्य सेवाएँ भी करते हैं और इस तरह वस्तुओं के वितरण में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। इसके अतिरिक्त वे वितरण के माध्यम के विभिन्न कार्यों जैसे-माल का एकत्रीकरण, श्रेणीकरण, पैकिंग, संग्रहण, जोखिम उठाना, साख-सुविधा प्रदान करना आदि को भी पूरा करते हैं। मध्यस्थों के मुख्य कार्य अग्रलिखित हैः-

(1) उपयोगिताओं का सृजन : वितरण कार्य में विभिन्न कार्यों को पूरा करके मध्यस्थ उत्पादों के विभिन्न उपयोगिताओं स्थान, सुविधा तथा स्वामित्व संबंधी उपयोगिताओं का सृजन करते हैं।

अतः माध्यमों द्वारा उत्पादों की उपयोगिता बढ़ाकर लक्षित बाजारों को बेहतर

सेवा संभव हो जाती है। वस्तुतः कई उपभोक्ता पदार्थों के मामले में वितरण द्वारा उपयोगिता बढ़ाकर उनके निर्माण/उत्पादन के दौरान की वृद्धि से अधिक होते है।

(2) प्रयासों की बचत : मध्यस्थ विनिर्माताओं और उपभोक्ताओं के बीच विनिमय रफ्तार में तेजी और कम समय में उन्हें निकट लाकर विनिर्माताओं के प्रयास की बचत करते हैं। इससे अंततः तैयार माल का उत्पादन मूल्य कम हो जाता है।

(3) उत्पादों का बाजार विस्तृत करना : देश-विदेश में बिखरे हुए उपभोक्ताओं से संपर्क स्थापित करना एक कठिन कार्य होता है। इस कार्य में मध्यास्थ व्यापारी व एजेन्ट उत्पादों की मदद करते हैं। वे उत्पादकों से बड़े पैमाने पर माल खरीदते हैं और फिर से उसे सुविधानुसार छोटे व्यापारियों या उपभोक्ताओं को बेचते हैं। मध्यस्थों के होने से उत्पादकों को बिक्री और उसके बाद की सेवाओं की चिंता नहीं रहती है। इस प्रकार मध्यस्थों के विद्यमान होने से उत्पादों का बाजार विस्तृत हो जाता है और साथ ही उत्पादकों की विक्रय क्षमता कई गुना बढ़ जाती है।

(4) उपभोक्ताओं की स्थानीय सुविधा प्रदान करना : मध्यस्थ (जैसे- फुटकर व्यापारी) उपभोक्ताओं के नजदीक बाजारी स्थानों पर केन्द्रित होते हैं। वे उपभोक्ताओं को माल की सहज सुपुर्दगी सुविधाजनक स्थानों पर दे देते हैं।

(5) माल का फील्ड स्टाक उपलब्ध करना : मध्यस्थ तथा थोक व्यापारी देश-भर में फैले रहते हैं। वे बड़े परिमाण में माल खरीदकर उसका स्टॉक कर लेते हैं। फुटकर व्यापारी इनके साथ सम्पर्क बनाकर किसी भी समय अपनी जरूरत की वस्तुएँ इनसे खरीद सकते हैं। फलस्वरूप, उत्पादकों को विभिन्न शहरों में अपनी वस्तुओं के स्टॉक उपलब्ध कराने की कठिनाई से छुटकारा मिल जाता है। मध्यस्थों के अभाव में उत्पादकों अथवा विनिर्माताओं द्वारा भारी विनियोजन आवश्यक हो सकता है और उन्हें विभिन्न प्रबंधकीय समस्याओं का सामना करना पड़ सकता है।

NMDC-30

6) वित्तीय सहायता प्रदान करना : मध्यस्थ वितरण कार्यों हेतु कई प्रकार की वित्तीय सहायता उपलब्ध करते हैं थोक व्यापारी की माँग और पूर्ति में संतुलन बनाए रखते हैं। इसके फलस्वरूप उत्पादकों या विनिर्माताओं को अपने उत्पादों का उचित मूल्य मिल जाता है। इसी प्रकार थोक व्यापारी उत्पादकों से न केवल नकद माल खरीदते हैं बल्कि उन्हें माल खरीदने हेतु पेशगी भुगतान भी दे देते हैं। फुटकर व्यापारी भी अपना माल किश्तों में या उधार बेचकर उपभोक्ता को साख सुविधा प्रदान करते हैं।

7) विधि सेवाएँ उपलब्ध करना : उपभोक्ताओं को अपनी मन पसंद के उत्पाद चुनने में सहायता करना, माल उपभोक्ताओं के घर में पहुँचाना तथा विक्रयोपरान्त सेवा की व्यवस्था करना आदि सेवाएँ मध्यस्थों द्वारा ही प्रदान की जाती हैं। मध्यस्थ स्थानीय उपभोक्ता सभी शिकायतें दूर करते हैं। उनकी उपस्थिति में उत्पादकों को जगह-

जगह अपने सेवा केन्द्र नहीं खोलने पड़ते हैं।

8) संवर्धन संप्रेषण का माध्यम प्रदान करना :- मध्यस्थ व्यापारी दूर स्थित उत्पादकों तथा उत्पादों के बाजारों से नियमित एवं निरंतर संपर्क बनाए रखते हैं। वे एक और उत्पादकों के समक्ष बाजार के रूख की सच्ची व्याख्या प्रस्तुत करते हैं, दूसरी ओर उपभोक्ताओं को उत्पादकों के गुणों और उपयोगों के बारे में सही सूचना देते हैं। उपभोक्ता को नये उत्पादों के आगमन की सूचना मध्यस्थ व्यारियों के माध्यम से ही मिलती है। मध्सय्थों से प्राप्त जानकारी उत्पादकों को अधिक उत्पादन या कम उत्पादन की जोखिम से भी बचाती है।

9) विक्रय संवर्धन में सहयोग :- मध्यस्थ व्यापारी अपनी दुकानों पर माल के प्रदर्शन तथा विज्ञापन द्वारा और व्यक्तिगत सम्पर्कों के द्वारा उत्पाद माँग बढ़ाते रहते हैं। विक्रय-संवर्धन करने के लिए वे उधार बिक्री और किश्तों पर बिक्री जैसी प्रणालियों का खुलकर उपयोग करते हैं। स्थानीय उपभोक्ता से भली-भाँति परिचित होने के कारण मध्यस्थ व्यापारी विक्रय-संवर्धन के कार्यों में अधिक प्रभावशाली सिद्ध होते हैं।

वितरण के माध्यम में मध्यस्थ अनेक उपयोगी सेवाएँ प्रदान करते हैं। कम लागत पर कुशल सेवाएँ प्रदान करने से उनकी भूमिका अधिक महत्वपूर्ण बन गयी है। वे अपने विशिष्ट ज्ञान, निपुणता, अनुभव तथा सम्पर्कों के कारण विपणन कार्यों का भली-भाँति निष्पादन करने में अधिक सक्षम है स्पष्ट है कि इनके अभाव में उत्पादकों द्वारा वितरण-जाल बिछाना और इसके लिए आवश्यक धन जुटाना एक कठिन कार्य होगा। आपको मालूम है कि उत्पादों का वितरण करना तथा वितरण के लिए आवश्यक सेवाएँ उपलब्ध करना कोई साधारण कार्य नहीं है। इस कार्य हेतु भारी निवेश आवश्यक होता है और साथ ही अनेक प्रबन्धकीय समस्याओं का सामना करना पड़ता है मध्यस्थों के उपयोग द्वारा उत्पादक उपभोक्ताओं के वितरण की समस्या से छुटकारा पा जाते हैं। वे अपना धन और ध्यान अधिक लाभकारी उत्पादन कार्यों में लगा सकते हैं। यही नहीं, देश के कोने-कोने में उपभोग्य वस्तुओं का उत्पादकों द्वारा प्रत्यक्ष-विक्रय भी अपने आप में एक असाध्य कार्य है।

मध्यस्थ प्रकार - वितरण के माध्यम में विभिन्न प्रकार के मध्यस्थ हिस्सा लेते हैं और उत्पादों को विनिर्माताओं से अंतिम उपभोक्ताओं तक पहुँचाने तथा उनके स्वामित्व-हस्तांतरण के कार्य का निष्पादन करते हैं। इन्हें मुख्य रूप में हम निम्नलिखित दो श्रेणियों में स्थापित कर सकते हैं :-

1) मूल भागीदार - मूल भागीदार वे व्यक्ति व संस्थाएँ हैं, जो उत्पादों के विक्रय तथा अंतिम उपभोक्ताओं तक उनके स्वामित्व-हस्तांतरण का कार्य करते हैं। इन भागीदारों को प्रणाली सदस्य कहा जाता है।

2) सहायक भागीदार - सहायक भागीदार उन संस्थाओं या व्यक्तियों को कहते हैं जो वितरण कार्य में मूल भागीदारों की मदद करते हैं। वे वितरण प्रणाली अथवा माध्यम संबंधी निर्णय नहीं लेते बल्कि एतद्संबंधी निर्णय हो जाने पर केवल मूल-भागीदारों को उनके कार्य पूरा करने में सहायता देने हैं। सहायक भागीदारों में मुख्य हैं- वित्तीय संस्थाएँ, सरकारी भंडारगृह, परिवहन कंपनियाँ और विज्ञापन एजेंसियाँ। निस्सन्देह, इन सेवाओं में से कुछ तो माध्यम-सदस्यों द्वारा ही पूरी की जा सकती हैं। उदाहरण के लिए, एक थोक व्यापारी अपने सामान्य व्यापार के साथ-साथ अपना निजी भंडारगृह और ट्रक कंपनी भी चला सकता है परन्तु सहायक भागीदारी में मुख्य बात यह होती है कि वे माध्यम के कार्यकलाप में जोखिम नहीं उठाते या फिर सीमित जोखिम ही उठाते हैं।

आइये मूल भागीदारों के अन्य वर्गों को जानने का प्रयास करें। प्रायः इन्हें दो वर्गों में रखा जाता है :- i) कार्यकारी मध्यस्थ अथवा व्यापारिक एजेंट ii) व्यापारी मध्यस्थ।

क) कार्यकारी मध्यस्थ :- कार्यकारी मध्यस्थों का आशय व्यापारिक "एजेंटों" से है। इनका काम विक्रेताओं और क्रेताओं को एक-दूसरे से मिलाना, उनका सौदा पक्का करना या उनको कई अन्य सेवा प्रदान करना है। ये न तो उत्पादों का स्वामित्व ग्रहण करते हैं और न ही उनके मूल्यों में होने वाले परिवर्तन की जोखिम उठाते हैं। उनका उद्देश्य माल का क्रय-विक्रय उसके स्वामी की ओर से करना है। अपनी सेवा के बदले इनको उचित कमीशन दिया जाता है। कार्यकारी एजेन्ट निम्नलिखित प्रकार के हो सकते हैं :

1) आढ़तिया : आढ़तिया एक ऐसा एजेंट है जो दूसरों का माल अपने पास विक्रय हेतु रखता है। वह प्रधान के माल को अपने नाम से बेच सकता है, उसे गिरवी कर सकता है। अपने नाम से सौदा करने के कारण उस सौदे वह स्वयं जिम्मेदार होता है। आढ़तिया सौदे में तय माल की सुपुर्दगी स्वयं देता है और उसका भुगतान भी स्वयं वसूल करता है। अपनी सेवा के बदले वह प्रधान से खर्चों की भरपाई तथा कमीशन की माँग कर सकता है। कमीशन न मिलने पर उसे प्रधान के माल पर ग्रहणाधिकार प्राप्त होता है। उसकी कमीशन या तो निर्धारित होती है या बिके हुए माल की राशि के निश्चित प्रतिशत के रूप में होती है। आढ़तिया अपने प्रधान के लिए नियंत्रित रूप से कार्य करता है।

2) दलाल : दलाल, क्रेता अथवा विक्रेता से किसी एक का प्रतिनिधित्व करता है। उसका काम केवल विक्रेता और क्रेता को एक दूसरे से मिलाना होता है। वह माल का अधिकार या स्वामित्व नहीं ग्रहण करता। अन्य शब्दों में, वह एक ऐसा एजेन्ट है

जिसके पास सौदे में तय माल का भौतिक नियंत्रण नहीं होता है। यदि वह विक्रेता द्वारा नियुक्त किया जाता है, तो उसे विक्रय एजेन्ट और यदि क्रेता द्वारा नियुक्त किया जाता है तो उसे क्रेता एजेन्ट कहते हैं। दलाल, विक्रय मूल्य तथा विक्रय-शर्तों के संबंध में अपने प्रधान द्वारा निर्देशित मार्ग पर चलता है। वह न तो सौदे में तय माल की सुपुर्दगी देता है और न ही इसका भुगतान वसूल करता है। चूँकि दलाल द्वारा सौदा प्रधान के नाम से किया जाता है अतः इस सौदे पर प्रधान ही जिम्मेदार होता है। अपनी सेवा के बदले दलाल को अपने प्रधान (क्रेता या विक्रेता) से कमीशन मिलता है। यह कमीशन सौदे के मूल्य का एक निश्चित प्रतिशत होता है।

3) कमीशन एजेन्ट : कमीशन एजेन्ट अपने प्रधान के नाम तथा उसकी जोखिम के लिए काम करता है। एक दलाल की तुलना में उसे विक्रय-मूल्य व विक्रय-शर्तों को तय करने में अधिक स्वतंत्रता व अधिकारी प्राप्त होता है। वह माल का कब्जा ले सकता है, उसको बेच सकता है, उसकी सुपुर्दगी दे सकता है तथा बिक्री का भुगतान एकत्रित कर सकता है।

4) आश्वसी : माल उधार बेचने, उधार की वसूली करने और डूबे उधार की जोखिम उठाने वाले कमीशन एजेन्ट को आश्वसी एजेन्ट की संज्ञा दी जाती है। अशोध्य ऋण की जोखिम वहन करने वाले एजेन्ट को सामान्य कमीशन के अतिरिक्त कमीशन भी मिलती है। यह कमीशन उधार-बिक्री के मूल्य का एक निश्चित प्रतिशत होती है। उस अतिरिक्त कमीशन को आश्वासी कमीशन कहा जाता है। इस प्रकार एक आवश्वासी एजेन्ट उधार-बिक्री से उत्पन्न अशोध्य ऋण की हानि को स्वयं वहन कर अपने प्रधान को उस हानि से बचाता है।

5) नीलामकर्ता : यह एजेन्ट अपने प्रधान के माल को बेचने हेतु नीलाम की प्रणाली अपनाता है। कमीशन एजेन्ट की भाँति वह माल को एक स्थान पर एकत्रित करके उसका प्रदर्शन करता है।

ख) व्यापारी मध्यस्थ : मध्यस्थ मर्चेन्ट उत्पादकों से माल खरीदकर उसे अन्य व्यापारियों या उत्पादकों को विक्रय करता है। वे अपने नाम से क्रय-विक्रय करते हैं और कारोबार की जोखिम भी स्वयं उठाते हैं। यदि किसी सौदे में कोई लाभ होता है तो वह इनको ही मिलता है और यदि हानि होती है तो वह भी इनको उठानी पड़ती है। अपने व्यापार के वे स्वयं मालिक होते हैं। व्यापारिक एजेन्टों की भाँति इनको प्रधान से आदेश नहीं लेना पड़ता है। खरीदा गया माल इनके अधिकार व स्वामित्व में रहता है और वे इस माल का उपयोग किसी भी प्रकार कर सकते हैं। इन व्यापारियों को मध्यस्थ इसलिए कहा जाता है, क्योंकि वे न तो माल का स्वयं उत्पादन करते हैं ओर नहीं उपभोग। मध्यस्थ क्रय-विक्रय के अतिरिक्त की अन्य कार्य भी करते हैं, जैसे-श्रेणीकरण,

प्रक्रियाकरण, संग्रहण, पैकिंग आदि।

उत्पादकों, विनिर्माताओं अथवा उनके एजेन्टों से बड़ी मात्रा में माल खरीदकर उसे औद्योगिक उपभोक्ताओं या फुटकर विक्रेताओं को थोड़ी-थोड़ी मात्रा में बेचने वाले मध्यस्थों को थोक व्यापारी कहा है। परन्तु उत्पादकों अथवा थोक व्यापारियों से माल खरीदकर उसे अंतिम उपभोक्ताताओं को बेचने वाले मध्यस्थों को फुटकर व्यापारियों की संज्ञा दी जाती है। वितरण के माध्यम में फुटकर व्यापारी अंतिम कड़ी के रूप में प्रस्तुत होते हैं।

स्वपरख - प्रश्न

प्रश्न-1 कार्यकारी मध्यस्थों तथा व्यापारिक मध्यास्थों में क्या अन्तर है?

....

....

....

प्रश्न-2 दलाल तथा कमीशन एजेन्ट में भेद स्पष्ट कीजिए ?

....

....

....

NMDC-130

प्रश्न-3 ....

....

....

प्रश्न-4 बताइये कि निम्नलिखित कथन सत्य हैं या असत्य ?

i) वस्तुओं के स्वामित्व ग्रहण किए बिना उसका विपणन करने वाले मध्यस्थों को व्यापारिक मध्यस्थ कहते हैं।

ii) मध्यास्थ वस्तुओं के वितरण में कोई जोखिम नहीं उठाते।

iii) स्वामी (मालिक) की स्वीकृति से, आढ़तिया वह सभी कार्य कर सकता है, जो वस्तुओं के विनिर्माता अथवा स्वामी द्वारा किए जा सकते हैं।

iv) आश्वासी, वस्तुओं के क्रेता द्वारा अदायगी न किए जाने के परिणामस्वरूप हुई हानि के लिए उत्तरदायी नहीं हैं।

वितरण संबंधी युक्ति निर्णय :- जैसा कि हम पहले अध्ययन कर चुके हैं कि माध्याम के स्तरों की संख्या एक अत्यन्त सीधे स्तर से लेकर विभिन्न कारकों के आधार

पर त्रि-स्तरीय तक हो सकती है। स्तर-संबंधी निर्णय के लिए जाने के पश्चात् प्रत्येक फर्म को माध्यम के प्रत्येक स्तर के लिए मध्यस्थों की संख्या भी निर्धारित करनी होती है। यहाँ वितरण की गहनता का प्रश्न सामने आता है। वितरण की गहनता से तात्पर्य विपणन तथा वितरण माध्यमों के प्रत्येक स्तर पर मध्यस्थों की निर्धारित संख्या से है। आप कल्पना कीजिए कि एक ए0सी0 निर्माता ने अपने उत्पाद के वितरण के लिए एक स्तरीय माध्यम चुना है। अर्थात विनिर्माता-फुटकर विक्रेता-उपभोक्ता। यहाँ वितरण की गहनता का तात्पर्य होगा कि वह अपने उत्पाद को बेचने के लिए कितने फुटकर विक्रेताओं को चुनेगा। संक्षेप में, वितरण की गहनता युक्ति तय करने में किसी भी फर्म के पास तीन विकल्प होते हैं : 1) सघन वितरण, 2) चयनात्मक वितरण, और 3) एकांकी वितरण।

1) सघन वितरण युक्ति : इसमें विनिर्माता अनेक विक्रय केन्द्रों में माध्यमों अपनी उत्पादों को उपभोक्ताओं तक पहुँचाने का प्रयास करते हैं। इस नियुक्ति का उद्देश्य बाजार में अपने उत्पाद को अधिकतम संख्या में उपलब्ध करना होता है। सामान्यतः एफ0एम0सी0जी0 जैसे शीतल पेय, सिगरेट सब्जियाँ डबल रोटी, साबुन, बिस्कुट, टूथपेस्ट, पान मसाले आदि के विनिर्माता सघन वितरण अपनाते हैं। उनके पदार्थ अधिकांशतः कम मूल्य के होते हैं परन्तु अधिक खरीद के कारण उनके विक्रय का परिणाम अधिक हो जाता है।

इस युक्ति का उद्देश्य प्रत्येक संभाव्य क्रेता तक पहुँचाना और विक्रय का एक अवसर भी हाथ में न जाने देना होता है। इसमें माध्यम पर आने वाला खर्च वितरकों के विस्तृत जाल में बँट जाता है और इस पर बहुत बड़े उपभोक्ता समूह तक पहुँचने में अपव्यय कम हो जाता है। फिर भी, यह एक खर्चीली वितरण नीति है क्योंकि इसमें बहुत से वितरकों में से प्रत्येक को माल पहुँचना सुनिश्चित करना होता है।

2) चयनात्मक वितरण युक्ति - जैसा कि नाम से ही स्पष्ट है, इस युक्ति में उत्पाद वितरण के लिए सीमित विक्रय केन्द्रों की ही स्थापना की जाती है। अतः सभी संभव मध्यस्थों के उपयोग के विरुद्ध केवल ध्यानपूर्वक चुने हुए कतिपय वितरकों के माध्यम से ही उत्पाद का वितरण किया जाता है। कपड़े पंखे, वाशिंग मशीन, कूलर टी.वी. सेट, मोपेड, स्कूटर आदि विशिष्ट उत्पादों के लिए चयनात्मक वितरण युक्ति स्वीकार की जाती है।

यह युक्ति ब्राण्ड विशेष उत्पादों के लिए उपयुक्त रहती है, इसलिए उपभोक्ता इनके लिए कंपनी विशेष द्वारा प्रयुक्त माध्यमों से संपर्क साधते हैं। विपणन फर्म को अपने प्रयासों को बहुत से विक्रय केन्द्रों में, जिनमें कई सीमांन्त उपयोगिता वाले केन्द्र भी शामिल हैं। यह युक्ति की अपेक्षा कम खर्चीली पड़ती है। इसके साथ ही इस युक्ति के माध्यम से विनिर्माता बेहतर नियंत्रण द्वारा बाजार के अधिकांश क्षेत्रों को अपना माल

विक्रय कर सकता है, जो गहन वितरण में इतना संभव नहीं हो पाता है।

3) एकांकी वितरण युक्ति - इस युक्ति में निर्माता कंपनी सीमित संख्या में विक्रेताओं को अपने-अपने बाजार क्षेत्र में कंपनी के उत्पाद बेचने का पूर्ण दायित्व सौप देती है। युक्ति में विनिर्माता अपने माल विक्रय के लिए पूरे बाजार क्षेत्र में केवल एक वितरक की ही नियुक्ति करता है। इस प्रकार नियुक्त विक्रेता अपनी विशिष्ट स्थिति के कारण उस कंपनी के उत्पादों का अकेला वितरक बन जाता है। उसके द्वारा किया गया वितरण एकांकी वितरण कहलाता है।

एकाकी वितरण युक्ति ऐसे उत्पादों के लिए उपयोगी होती है, जिसकी बिक्री धीमी गति से होती हो तथा जिनका प्रति इकाई मूल्य काफी अधिक होता हो और जिन्हें विक्रयोपरान्त सेवा की आवश्यकता होती है। अतः मोपेड, स्कूटर कारों व ट्रकों आदि के निर्माता अपने उत्पादों के वितरण के लिए एकाकी वितरण युक्ति अपनाते हैं, उदाहरण के लिए, मारूति उद्योग लि. अशोक लेलैंड, बजाज स्कूटर्स, लोहिया मशीन लि0। आदि कंपनियों ने अपने उत्पादों के वितरण के लिए विभिन्न बाजारों क्षेत्रों में विक्रेताओं की नियुक्ति की है।

एकाकी वितरण द्वारा विनिर्माता को मूल्य संवर्धन एवं सेवाओं आदि पर अधिकतम नियंत्रण रखने में सहायता मिलती है। इसका उपयोग तभी किया जाता है जब विनिर्माता मध्यास्थों के आक्रामक बिक्री अथवा वितरण पर अधिक नियंत्रण प्राप्त करना चाहता है। एक अन्य लाभ यह है कि एकाकी वितरण से वितरक, उत्पाद संबंधी विशेष तकनीकी ज्ञान एवं अनुभव प्राप्त कर लेता है, जिसके परिणाम स्वरूप उपभोक्ताओं को बेहतर विक्रयोपरांत सेवा का लाभ मिलता है। फिर भी, विक्रेताओं से सहयोग प्राप्त करना समस्याओं से मुक्त होना नहीं है। अतः माध्यम से विभिन्न सदस्यों के कुशल प्रबंधन की आवश्यकता होती ही है। साथ ही, कई बार हमारे देश में इस प्रकार की व्यवस्था को एकाधिकार एवं प्रतिबंधात्मक व्यापार व्यवहार आयोग ने प्रतिस्पर्धा-विरोधी घोषित किया है।

NIMDC

वितरण की गहनता संबंधी निर्णय माध्यम की चयन-संरचना का महत्वपूर्ण अंग है और इसे प्रायः कंपनी की आधारभूत विपणन युक्ति का मूल तत्व माना जाता है। सिसे कंपनी की व्यापकता का आभास मिलता है। उदाहरण के लिए विपणन युक्ति जिसका उद्देश्य बाजार को अपने उत्पाद से भर देना हो, स्वाभाविक रूप से गहन वितरण युक्ति पर आधारित होगी परन्तु कम गहन अथवा अत्यधिक चयनात्मक युक्ति उस स्थिति में अनिवार्य हो जाएगी जब विपणन का लक्ष्य ध्यानपूर्वक चुना हुआ बाजार क्षेत्र होगा। सामान्य रूप से जब कंपनी के उत्पादों का लक्ष्य व्यापक लोकप्रिय होता है, तब गहन वितरण युक्ति अपनाई जाती है और जब चुने हुए बाजार क्षेत्रों में धाक जमानी होती है,

तो चयनात्मक युक्ति तथा कतिपय चुने हुए माध्यमों का उपयोग श्रेयस्कर होगा।

स्वपरख प्रश्न

(1) बहुआयामी एवं सघन वितरण में अंतर को स्पष्ट करें ?

....

....

....

(2) चयनात्मक वितरण और एकाकी वितरण के अंतर को स्पष्ट कीजिए?

....

....

....

(3) वितरण की सघनता से क्या अभिप्राय है ?

....

....

....

(4) वितरण के माध्यमों के चयन को प्रभावित करने वाले कारकों की विवेचना कीजिए।

....

....

....

NMDC-130

(5) बताइए कि निम्नलिखित कथन सत्य है या असत्य ?

i) सामान्यतः भारी इंजीनियरी समान के लिए सीधे अर्थात् प्रत्यक्ष माध्यमों का उपगोय पसंद किया जाता है।

ii) डबल रोटी के वितरण के लिए गहन वितरण नीति का उपयोग किया जाता है।

iii) गहन वितरण का अर्थ है एक ही उत्पाद के वितरण के लिए बहुत से माध्यमों का उपयोग।

iv) जहाँ एक ही क्षेत्र में बहुत से ग्राहक/उपभोक्ता केन्द्रित हों, वहाँ प्रत्यक्ष माध्यम का उपयोग उचित रहता है।

v) छोटे माध्यमों के उपयोग से विनिर्माता वितरण पर बेहतर नियंत्रण रख सकता है।

4.5 थोक व्यापारी तथा फुटकर व्यापारी

प्रायः थोक विक्रेता के नाम से उस विक्रेता को जाना जाता है तो उत्पादों को इस आशय से क्रय करता है कि वह उनका विक्रय छोटे-छोटे फुटकर विक्रताओं को कर

सकेगा। ये थोक विक्रेता उपभोक्ता को सीधे उत्पाद विक्रय में रूचि नहीं रखते हैं। उत्पादों को निर्माता से उपभोक्ता तक ले जाने की विपणन प्रक्रिया में थोक व्यापारी पहली कड़ी होता है।

सरल शब्दों में, उत्पादों का थोक क्रय-विक्रय करने वाले व्यक्तियों को थोक व्यापारी कहते हैं। विस्तृत अर्थ में प्रत्येक ऐसा व्यक्ति अथवा व्यावसायिक फर्म जो अंतिम उपभोक्ताओं के अलावा अन्य खरीदारों को उनके द्वारा पुनर्विक्रय एवं लाभ कमाने हेतु बड़ी मात्रा में माल बेचती है, थोक व्यापारी कहलाती है। कुछ परिस्थितियों में थोक व्यापारी अपने थोक काम के साथ-साथ फुटकर विक्रय का काम भी करता है। यही नहीं, थोक व्यापारी केवल एक ही विनिर्माता के माल का क्रय-विक्रय भी कर सकता है। ऐसी स्थिति में वह, विनिर्माताओं का एकमात्र विक्रय बन जाता है।

विशिष्ट अर्थ में थोक व्यापारी का अभिप्राय उस "व्यापारिक मध्यस्थ" से है जो केवल कुछ निश्चित उत्पादों का पुनर्विक्रय द्वारा लाभ कमाने के उद्देश्य से लेन-देन करता है और विनिर्माताओं या उत्पादकों से बहुत-बड़ी मात्रा से माल खरीद कर फुटकर व्यापारियों औद्योगिक व वाणिज्यिक उपभोक्ताओं को थोड़ी-थोड़ी मात्रा में बेचता है। स्मरण रहे, एक थोक व्यापारी अपने उत्पाद अंतिम उपभोक्ताओं को नहीं बेचता। अंतिम उपभोक्ताओं से तो वह सामान्यता दूर ही रहता है। उनका अधिकार या स्वामित्व भी उसे प्राप्त रहता है। यद्यपि कई बार एजेण्ट अथवा दलाल भी थोक व्यापारी के रूप में काम करते हैं परन्तु व्यापार की जाने वाली उत्पादों का स्वामित्व उनको कभी भी प्राप्त नहीं होता। थोक व्यापारी उत्पादकों फुटकर व्यापारियों के बीच एक महत्वपूर्ण कड़ी के रूप में प्रस्तुत होता है। वह जन-उपयोग के उत्पादों जैसे कृषि-उत्पाद, वन-उत्पाद, खनिज पदार्थ निर्मित माल आदि का क्रय व विक्रय करता है।

सामाजिक दृष्टिकोण से भी थोक व्यापारी एक महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है। अपने विशिष्ट ज्ञान व निपुणता के कारण वह उत्पादों का कुशल वितरण संभव करता है। दूसरी ओर, निर्माता भी अपना ध्यान उत्पादों के कुशल उत्पादन कर केन्द्रित कर सकता है। निस्सन्देह कोई भी विनिर्माता अपनी उत्पादों के वितरण उतनी निपुणता से नहीं कर सकता जितना कि उसका थोक व्यापारी कर पाता है। साथ ही, वितरण का कार्य विनिर्माता द्वारा स्वयं किये जाने की स्थिति में उसका ध्यान बँट जाने से निर्माण क्षमता का ह्रास हो जाता है।

उपभोक्ता विवेचनोपरान्त हम कह सकते हैं कि एक थोक विक्रेता -

i) उत्पादों को पुनः विक्रय के लिए खरीदता है;

ii) यह विक्रय साधारणतया फुटकर विक्रेताओं को ही करता है;

iii) लेकिन यह व्यापरियों एवं औद्योगिक तथा वाणिज्यिक सम्बन्धी संस्थाओं को भी

विक्रय करते हैं, जोकि या तो उत्पाद को पुनः विक्रय के लिए या औद्योगिक उपभोक्ताओं के उपयोग के लिए बेचते हैं।

iv) उपभोक्ता को उत्पाद नहीं बेची जाती है और यदि किसी कारण बेची भी जाती है तो उनकी विक्रय इस प्रकार के उपभोक्ताओं को बहुत ही थोड़ी मात्रा में होती है।

v) यह विक्रय कम मात्रा में करता है।

इस प्रकार "वह विक्रेता जो उत्पादों का क्रय इस उद्देश्य से करता है कि वह उनको फिर फुटकर विक्रेताओं को बेचेगा लेकिन अन्तिम उपभोक्ता को सार्थक मात्रा में नहीं बेचेगा थोक विक्रेता कहलाता है।"

व्यावसायिक क्षेत्र में एक थोक विक्रेता के निम्नलिखित कार्य हो सकते हैं -

(1) उत्पादों का संकेन्द्रण - एक थोक विक्रेता का सबसे पहला कार्य विभिन्न निर्माताओं एवं उत्पादकों को उत्पादों को एकत्रित करना है जिससे कि फुटकर विक्रेताओं को उत्पादों का चुनाव करने में सुविधा रहे।

(2) उत्पादों का वितरण - थोक विक्रेताओं का दूसरा कार्य फुटकर व्यापारियों के आदेश के अनुसार उत्पादों का थोड़ी मात्रा में विक्रय है। इस प्रकार यह विक्रेता उत्पादों का वितरण करते हैं।

NBDC-130

(3) वित्त प्रबन्ध - थोक विक्रेता का तीसरा कार्य निर्माताओं एवं उत्पादकों को अग्रिम राशि भेजकर उनकी सहायता करना। इसी प्रकार यह फुटकर विक्रेताओं को उधार विक्रय कर उनकी भी आर्थिक सहायता करते हैं।

(4) श्रेणीयन - भिन्न-भिन्न उत्पादकों को एकत्रित कर उनको श्रेणी के अनुसार बाँटना भी थोक विक्रेता के कार्यों का अन्तर्गत आता है।

(5) संग्रहण - थोक विक्रेताओं द्वारा उत्पादकों को माँग से पहले ही एकत्रित कर उस समय तक सुरक्षित रखने का कार्य करना पड़ता है जब तक कि फुटकर विक्रेताओं द्वारा उनको क्रय नहीं कर लिया जाता है।

(6) जोखिम उठाना - उत्पादक का निर्माताओं से बड़ी मात्रा में सीधा माल खरीदकर थोक विक्रेता विभिन्न अनिश्चितताओं से पैदा होने वाली जोखिमों को उठाने का कार्य भी करते हैं।

(7) सूचनाएँ देना - उपभोक्ता एवं उत्पादों के बारे में विभिन्न सूचनाओं को एकत्रित कर उनको निर्माताओं एवं फुटकर विक्रेताओं तक पहुँचाने का कार्य भी इन्हीं थोक विक्रेताओं द्वारा किया जाता है।

(8) परिवहन - थोक विक्रेता फुटकर विक्रेताओं को माल ले जाने के लिए परिवहन सुविधाओं को उपलब्ध करने का कार्य भी करता है।

(9) अन्य कार्य - थोक विक्रेता उपयुक्त वाणिज्य कार्यों के अतिरिक्त पैकेजिंग, प्रमापीकरण, बाजार अनुसंधान आदि कार्य भी करते हैं।

थोक व्यापारियों के प्रकार : सामान्यतः थोक व्यापारी चुनिन्दा तथा विस्तृत दोनों प्रकार के उत्पादों के व्यापार करते हैं। मुख्य रूप से वे अपना कार्य क्षेत्र थोक व्यापार तक परिसीमा कर सकते हैं अथवा अपने व्यापार से सम्बद्ध विभिन्न वर्गों में वर्गीकृत किया जा सकता है (1) बेची जाने वाले उत्पाद (2) व्यावसायिक कार्यवधि तथा (3) भोगोलिक विस्तार।

थोक व्यापारियों के वर्गीकरण को स्पष्ट रूप से समझने के लिए आइये अग्रलिखित विश्लेषणात्मक अध्ययन करें।

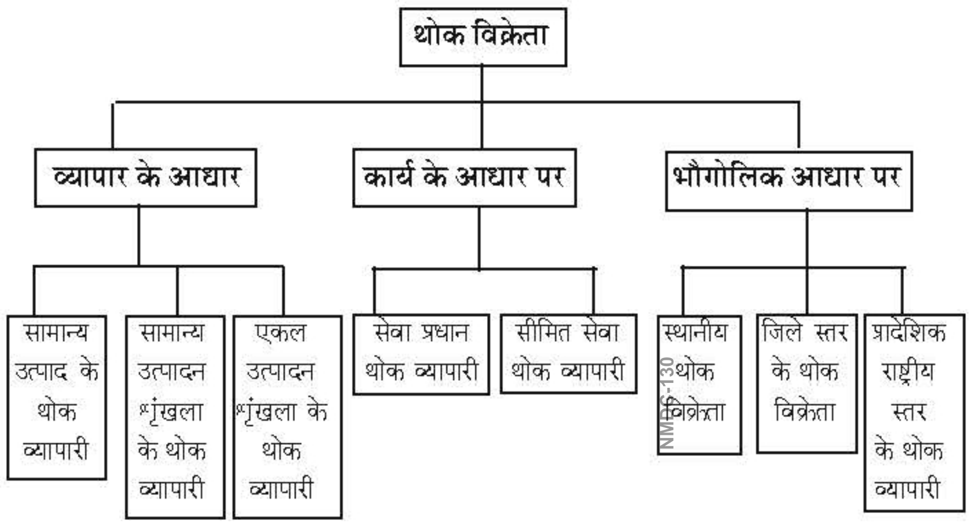

(क) बेची जाने वाले उत्पादों के आधार पर - हम थोक व्यापारियों को अग्रलिखित निम्नलिखित निम्न तीन श्रेणियों में वर्गीकृत कर सकते हैं :

i) सामान्य उत्पादों के थोक व्यापारी : इस वर्ग में थोक व्यापारी दो या इससे अधिक प्रकार की परस्पर असंबंधित उत्पादों में लेन-देन करते हैं। उदाहरणार्थ, ऐसा थोक व्यापारी बहुत सी टिकाऊ उपभोक्ता उत्पादनों जैसे बिजली का सामान, होजरी, सौंदर्य प्रसाधन, खेल का सामान आदि में व्यवहार कर सकता है।

ii) सामान्य उत्पादन श्रृंखला के थोक व्यापारी : ये थोक व्यापारी एक ही उत्पाद शृंखला के अंतर्गत आने वाली प्रत्येक उत्पाद को अपने स्टॉक में रखते हैं। उदाहरणार्थ, ऐसा थोक व्यापारी घर में दैनिक उपयोग की सारे उत्पाद जैसे-साबुन, अपमार्जक, दंज मंजन, रेजर, ब्लेड, शेविंग क्रीम, लोशन आदि को बेचने हेतु रख सकता है या फिर वह अन्न-दाना व खाद्य-सामग्री, जैसे गेहूँ, चावल, दालें आदि का क्रय विक्रय कर सकता है।

iii) एकल उत्पादन क्रय श्रृंखला के थोक व्यापारी : इस वर्ग के अन्तर्गत

वे थोक व्यापारी आते हैं, जिनका कार्यक्षेत्र एक निश्चित उत्पाद-क्रय अथवा विभिन्न किस्मों की विशिष्ट उत्पाद लेनदोनों तक सीमित होता है। कतिपय किस्म के कपड़े या छपाई के कागज़ के थोक व्यापारी विशिष्ट उत्पाद के थोक व्यापारी कहलाते हैं। फुटकर व्यापारी विशिष्ट उत्पाद के थोक व्यापारी कहलाते हैं। फुटकर व्यापारी किसी उत्पाद विशेष संबंधी अपनी सारी जरूरतों को इस प्रकार के थोक व्यापारी से पूरा कर सकते हैं।

(ख) व्यावसायिक कार्य के आधार पर - थोक व्यापरियों को निम्न दो वर्गों में विभाजित किया जा सकता है

i) सेवा - प्रधान थोक व्यापारी : थोक व्यापारी विनिर्माताओं व फुटकर व्यापारियों के लिए विविध प्रकार की सेवाएँ करते हैं, जैसे प्रमाणीकरण, श्रेणीकरण नामकरण, चिह्नीकरण, विज्ञापन आदि।

ii) सीमित-सेवा थोक व्यापारी - इस प्रकार के थोक व्यापारी कुछ निश्चित कार्य करते हैं। जैसे-श्रेणीकरण, संचेष्टन आदि।

(ग) भौगोलिक विस्तार के आधार पर - हम थोक व्यापारियों को अग्रलिखित तीन वर्गों में बाँट सकते हैं।

i) स्थानीय थोक व्यापारी - ये थोक व्यापारी अपना कार्यक्षेत्र किसी खास शहर अथवा नगर तक सीमित रखते हैं और उस क्षेत्र के सभी फुटकर व्यापारियों को अपना माल उपलब्ध कराते हैं।

NMDC-130

ii) जिला स्तर के थोक व्यापारी - ये थोक व्यापारी एक निश्चित जिले के फुटकर व्यापारियों के साथ व्यवहार करते हैं।

iii) प्रादेशिक अथवा राष्ट्रीय स्तर के थोक व्यापारी - ये थोक व्यापारी उन वस्तुओं का स्टॉक रखते हैं जिसका क्रय-विक्रय किसी राष्ट्रीय स्तर के बाजार में होता है और जो राष्ट्रीय स्तर पर विज्ञापित की जाती है। साधारणतः इनका लेन-देन किसी प्रदेश अथवा देश में स्थित फुटकर व्यापारियों से होता है।

हम एक थोक व्यापारी के कार्यों का विश्लेषण कर चुके हैं और यह जान चुके हैं कि वह वितरण की श्रृंखला में उत्पादकों तथा फुटकर व्यापारियों के बीच एक बहुत बड़ी खाई को पाटता है। सामान्यतः थोक व्यापारी एक ''वितरक'' या ''आपूर्ति'' के नाम से जाना जाता है। इस रूप में वह उत्पादों के विनिर्माताओं तथा फुटकर व्यापारियों को कई महत्वपूर्ण सेवाएँ प्रदान करता है।

(क) विनिर्माताओं के प्रति सेवाएँ - एक थोक व्यापारी उत्पादों के विनिर्माताओं के लिए निम्नलिखित महत्वपूर्ण कार्य करता है।

i) थोक व्यापारी बड़े-बड़े ऑर्डर देकर विनिर्माताओं को माल के वितरण संबंधी चिंता से मुक्त कराता है। फलस्वरूप, विनिर्माता अपना सारा ध्यान माल के उत्पादन पर केन्द्रित कर सकते हैं। उनको अपने गोदामों में अधिक स्टॉक नहीं रखना पड़ता और साथ ही माल के संग्रहण लागतों में बचत होती है।

ii) थोक व्यापारी नकद माल खरीद कर या अपने आर्डर के लिए पेशगी भुगतान देकर या फिर जमानत के रूप में एक बड़ी रकम विनिर्माता के पास जमा करवा कर उसको वित्तीय सहायता प्रदान करता है।

iii) थोक व्यापारी भावी माँग के आधार पर समय से पहले ही माल के लिए ऑर्डर भेज देता है। इससे विनिर्माताओं को सुविधा हो जाती है। उनके द्वारा उत्पादन नियोजन का कार्यक्रम आसानीपूर्वक एवं निश्चितता से लागू किया जा सकता है।

iv) थोक व्यापारी उत्पादन के संबंध में समय-समय पर माल के विनिर्माताओं का पथ-प्रदर्शन करता रहता है। वह उपभोक्ताओं की माँग, रूचि तथा नये या प्रतियोगी उत्पादों के बारे में फुटकर व्यापारियों से निरंतर सूचनाएँ, संकलित करता रहता है। इन सूचनाओं के आधार पर वह विनिर्माताओं से माल खरीदने के व्यवस्था करता है। अतः उसके द्वारा विनिर्माताओं को भेजे गए ऑर्डर बाजार की बदलती हुई परिस्थितियों को प्रतिबिंबित करते हैं।

MDC-130

v) थोक व्यापारी उत्पादों की माँग अथवा मूल्य में परिवर्तन के कारण उत्पन्न होने वाले जोखिम को स्वयं उठाकर विनिर्माताओं को संभावित हानि से बचाता है। उसके कारण उत्पादकों को अपने माल का उचित मूल्य मिल जाता है। कृषि उत्पादन के उत्पादों के संबंध में यह सेवा विशेष रूप से उल्लेखनीय है।

vi) थोक व्यापारी स्वयं अथवा विनिर्माताओं के साथ मिलकर संयुक्त रूप से माल का विज्ञापन करता है। परिणामस्वरूप विनिर्माताओं के माल की माँग बढ़ जाती है और विज्ञापन पर उनका व्यय भी कम हो जाता है।

(ख) फुटकर व्यापारियों के प्रति सेवाएँ - विनिर्माताओं की तुलमा में थोक व्यापारियों से फुटकर व्यापारियों को अधिक लाभ मिलता है। साधारणतया एक थोक व्यापारी अपने फुटकर व्यापारियों को निम्न सेवाएँ प्रदान करता है :

1) फुटकर व्यापारी दूर-दूर के स्थानों पर बिखरे रहते हैं। उनके पास ज्यादा पूँजी नहीं होती। वे अपनी जरूरत को बड़ी मात्रा में खरीद कर स्टॉक नहीं कर सकते । उनके लिए भिन्न-भिन्न विनिर्माताओं से कम मात्रा में उत्पादों का क्रय किया जाना भी कठिन होता है। ऐसी परिस्थिति में थोक व्यापारी छोटे-छोटे फुटकर व्यापारियों को उनकी सुविधा के अनुसार विविध किस्म का माल थोड़ी-थोड़ी मात्रा में बेचकर उनकी परेशानियों को दूर करता है।

2) एक थोक व्यापारी निरंतर छोटे फुटकर व्यापारियों की आवश्यकताओं की पूर्ति करता रहता है। इससे फुटकर व्यापारियों को अपने पास बड़ी मात्रा में स्टॉक नहीं रखना पड़ता और माल स्टोर करने हेतु आवश्यक स्थान की भी बचत होती है। अतः कोई फुटकर व्यापारी सापेक्ष रूप से कम पूँजी द्वारा अपना व्यापार चला सकता है।

3) एक थोक व्यापारी के पास उसके द्वारा व्यवहार की जाने वाले उत्पादों की पूर्ण एवं विशिष्ट जानकारी रहती है। अपनी अधिक क्रय-शक्ति के कारण वह एक सर्वोत्तम स्रोत से सही किस्म का माल सही मूल्य पर क्रय करता है और इससे होने वाला लाभ आगे अपने फुटकर व्यापारियों के साथ बाँटता है। दूसरी ओर फुटकर व्यापारी अपने थोक व्यापारी से निकट संबंध स्थापित कर उससे वस्तुओं के बारे में पूरी जानकारी प्राप्त कर लेते हैं। इससे उन्हें अपनी बिक्री बढ़ाने में मदद मिलती है।

4) एक थोक व्यापारी बाजार की बदलती हुई परिस्थितियों के बावजूद बड़ी मात्रा में माल का संग्रहण कर लेता है और कालांतर में फुटकर व्यापारियों की माँग पर इसे बेच देता है। वह मूल्यों में उतार-चढ़ाव अथवा माँग में गिरावट से उत्पन्न होने वाली हानि का सारा जोखिम स्वयं वहन करता है। इस प्रकार वह फुटकर व्यापारियों को उक्त जोखिम से बचा लेता है।

5) एक थोक व्यापारी अपना माल उधार बेचकर फुटकर व्यापारियों को साख प्रदान करता है। फलतः फुटकर व्यापारियों को स्टॉक में पूँजी-विनियोजन नहीं करना पड़ता और वे इस प्रकार बचायी गयी पूँजी का व्यापार में अधिक प्रभावी उपयोग कर सकते हैं।

6) थोक व्यापारी उत्पादों के विनिर्माताओं से प्राप्त सूचनाएँ उत्पादों के आधार पर फुटकर व्यापारियों को प्रतियोगी उत्पादों तथा नये-नये उत्पादों के आगमन की जानकारी समय-समय पर देता रहता है। जब कभी उत्पाद-श्रृंखला में नया जोड़ा जाता है। तब थोक व्यापारी विक्रेताओं के माध्यम से अथवा शोरूम में प्रदर्शन के द्वारा फुटकर व्यापारियों का ध्यान उस उत्पाद की ओर आकर्षित करता है।

(ग) समाज के प्रति सेवाएँ -

1. उपभोक्ता की रूचि के अनुसार वस्तुएँ उपलब्ध करना -

थोक विक्रेताओं के कारण उपभोक्ताओं को अपनी रूचि के अनुसार उत्पाद प्राप्त हो जाती है। साधारणतया थोक विक्रेता केवल उन्हीं उत्पादों को अपने पास रखते हैं जिनकी मांग फुटकर बिक्रेता करता है और फुटकर विक्रेता उन्हीं उत्पादों की मांग करता है जिनको उपभोक्ता चाहता है। इस प्रकार उपभोक्ता को अपनी रूचि के अनुसार उत्पाद मिल जाता है।

2. विज्ञापन द्वारा जानकारी -

थोक विक्रेता का विज्ञापन समाज को उत्पाद की सूचना देकर उसके ज्ञान में वृद्धि करता है।

4. मूल्यों में स्थायित्व -

थोक विक्रेता मांग व पूर्ति में समायोजन बिठलाने का प्रयत्न करता है। जिससे औद्योगीकरण एक निश्चित गति से होता है और मूल्यों में स्थायित्व बना रहता है जिसका लाभ समाज को भी मिलता है।

5. चुनाव की सुविधा -

थोक विक्रेता द्वारा विभिन्न निर्माताओं के उत्पादों को संग्रहित किया जाता है जिससे फुटकर विक्रेताओं तथा उपभोक्ताओं को उत्पादों को चुनाव में सुविधा रहती हैं।

6. वृहद उत्पादन को बढ़ाना -

थोक विक्रेता द्वारा बड़ी-बड़ी मात्रा में क्रय करने के कारण निर्माता वृहत उत्पादन करने के लिए बाध्य हो जाता है। इसका परिणाम यह होता है कि अन्त में उत्पाद की प्रति इकाई लागत घट जाती है जिससे उसके विक्रय में कमी कर दी जाती है जिसका लाभ सम्पूर्ण समाज को मिलता है।

NMDC-130

7. विपणन अनुसंधान के लाभ -

थोक विक्रेता द्वारा विपणन अनुसंधान कराया जाता है जिसके परिणाम स्वरूप समाज को उत्पाद यथास्थान एवं कम मूल्य पर मिल जाता है।

थोक विक्रेताओं द्वारा जो सेवाएँ निर्माता व फुटकर विक्रेताओं को प्रदान की जाती है उनके अध्ययन से हम यह निष्कर्ष निकालते हैं कि थोक विक्रेता एक महत्वपूर्ण कड़ी है।

स्व-परख प्रश्न

प्रश्न-1 थोक व्यापारी किसे कहते हैं :

....

....

....

....

प्रश्न-2 अपने क्षेत्र के किसी थोक व्यापारी के यहाँ जाइए और निम्नलिखित बातों का पता लगाइए-

i) क्या वह सामान्य वस्तुओं का थोक व्यापार करता है अथवा सामान्य उत्पाद श्रृंखला या एकल-उत्पादन श्रृंखला का।

ii) पता लगाइए कि वह फुटकर व्यापारियों को किस प्रकार की सेवाएँ प्रदान करता है।

प्रश्न-3 बताइए कि निम्नलिखित कथन सत्य हैं या असत्य ?

i) थोक व्यापारी अंतिम उपभोक्ताओं को वस्तुओं का विक्रय नहीं करते।

ii) थोक व्यापारी औद्योगिक उपयोगकर्ताओं को वस्तुओं का विक्रय करते हैं।

iii) थोक व्यापारी वस्तुतः व्यापारिक एजेन्ट होता है।

iv) सामान्य श्रृंखला थोक व्यापारी वस्तुओं की अत्यंत संकुचित (छोटी) श्रृंखला का ही लेन देन करते हैं।

v) स्थानीय थोक व्यापारी सामान्यतः स्थानीय व उसी क्षेत्र/राज्य विशेष में स्थित फुटकर व्यापारियों से लेन-देन करते हैं।

फुटकर व्यापारी -

भारतीय व्यापार जगत में फुटकर विपणन का तात्पर्य उत्पादों को उनके अन्तिम उपभोक्ताओं तक सुव्यवस्थित रूप में पहुँचाना हैं। फुटकर विपणन में वे सभी प्रक्रियाएँ आती हैं। जो अन्तिम उपभोक्ता को विक्रय करते समय सहायक होती है। अतः फुटकर विपणन में उन सभी क्रियाओं को सम्मिलित करता है जो कि वैयक्तिक व गैर व्यावसायिक प्रयोग के लिए उत्पाद व सेवाऐं अन्तिम उपभोक्ता को बेचने से प्रत्यक्ष रूप से सम्बन्धित हैं।

NMDC-130

सरल शब्दों में, फुटकर व्यापार का तात्पर्य उन सभी व्यापारिक लेन-देनों के लगाया जाता है जिनके द्वारा सीधे अन्तिम उपभोक्ताओं को उनके निजी प्रयोग व्यापारिक के लिए उत्पादों का विक्रय संभव होता है। पुनर्विक्रय के उद्देश्य से माल क्रय करने वाले व्यक्तियों को 'अंतिम उपभोक्ता'' की संज्ञा नहीं दी जा सकती है। फलस्वरूप उनके साथ दिये गये व्यापारिक लेन-देनों को फुटकर व्यापार में शामिल नहीं किया जाता। फुटकर व्यापार साधारणतया खुदरा व्यापारियों द्वारा किया जाता है। अतः थोक व्यापारियों से अधिक मात्रा में माल खरीद कर उसे सीधे अंतिम उपभोक्ताओं को उनके निजी उपभोग हेतु तथा उनकी पसंद व जरूरत के अनुसार बेचने वाली व्यापारिक संस्था को फुटकर व्यापारी की संज्ञा दी जाती है। फुटकर व्यापारी उपभोक्ताओं को न केवल माल ही बेचता है बल्कि कई अन्य उपयोगी सेवाएँ भी प्रदान करता है। साधारणतया अपने उत्पाद सीधे अंतिम उपभोक्ताओं को बेचने वाले उत्पादक अथवा थोक व्यापारी को फुटकर व्यापार खुदरा व्यापारियों द्वारा किया जाता है। अतः थोक व्यापारियों से अधिक मात्रा में माल

खरीद कर उसे सीधे अंतिम उपभोक्ताओं को उनके निजी उपभोग हेतु तथा उनकी पसंद व जरूरत के अनुसार बेचने वाली व्यापारिक संस्था को फुटकर व्यापारी की संज्ञा दी जाती है। फुटकर व्यापारी उपभोक्ताओं को न केवल माल ही बेचता है बल्कि कई अन्य उपयोगी सेवाएँ भी प्रदान करता है। साधारणतया अपने उत्पाद सीधे अंतिम उपभोक्ताओं को बेचने वाले उत्पादक अथवा थोक व्यापारी को फुटकर व्यापारी नहीं कहा जाता परन्तु इसका यह तात्पर्य नहीं है कि फुटकर व्यापारियों के द्वारा अन्य प्रकार के लेन-देन नहीं किये जा सकते। वास्तव में यदि किसी व्यापारी के अधिकतर माल का विक्रय फुटकर व्यापार से है और वह पुनर्विक्रय के लिए माल नहीं बेचता है, तो उसे फुटकर व्यापारी ही समझना चाहिए।

फुटकर व्यापारियों के कार्य -

थोक व्यापारियों की तरह फुटकर व्यापारी भी उत्पादों के क्रय-विक्रय से सम्बद्ध कई कार्यों का निष्पादन करते हैं। संक्षेप में, उनके कार्य अग्रलिखित हैं :-

1) मांग का पूर्वानुमान :-

छोटे बड़े सभी प्रकार के फुटकर व्यापारियों को विभिन्न उत्पादों की मांग तथा उपभोक्ताओं की रूचि एवं आवश्यकतानुसार उत्पादों की मांग का परिमाणात्मक पूर्वानुमान लगाना होता है।

NMDC-130

2) माल का क्रय :-

अधिकांश फुटकर व्यापारी अपने उपभोक्ताओं की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए विविध प्रकार के उत्पाद को अपने स्टाक में रखते हैं। इसी के अनुरूप वे विभिन्न थोक व्यापारियों से उत्पाद खरीदते हैं। इसके साथ ही, वे केवल उन्हीं थोक व्यापारियों से माल खरीदते हैं, जो सही गुणवत्ता का माल उचित तथा सही मूल्य पर उपलब्ध कराते हैं।

3) परिवहन :-

सामान्यतः फुटकर व्यापारी थोक व्यापारी के स्थान से अपने माल के परिवहन की व्यवस्था स्वयं बदोबस्त करते हैं। कभी-कभी अपने सेल्समैनों द्वारा आदेश प्राप्त होने की स्थिति में थोक व्यापारी अपनी परिवहन व्यवस्था द्वारा भी फुटकर व्यापारी को माल की आपूर्ति कर देते हैं।

4) माल का संग्रहण :-

छोटे व बड़े दोनों प्रकार के फुटकर व्यापारी अपने सामर्थ्य एवं साधनों के अनुसार छोटी व बड़ी संग्रहण व्यवस्था करते हैं परन्तु सभी स्थितियों में उपभोक्ताओं को उनकी आवश्यकता के समय उत्पाद तुरंत मिलनी भी आवश्यक है। इसके लिए संग्रहण की एक ऐसी उत्तम व्यवस्था अपरिहार्य, जिससे उपभोक्ताओं को उनकी पसंद व रूचि की

उत्पाद चयन का अवसर मिले, और इसमें उनका समय भी कम से कम खर्च हो। इसके लिए फुटकर व्यापारी अपने उत्पाद को शो केस में सजा कर रखते हैं।

5) क्षेत्रीय करण एवं पैकिंग :-

फुटकर व्यापारी अधिकांश थोक व्यापारियों से खरीदे गए माल को गुणवत्ता व मूल्य के अनुसार अलग-अलग छाँटता है। उसे उपभोक्ताओं की सुविधा हेतु उस माल को डिब्बों या पैकेटों में पैक करता है। उदाहरण के लिए एक फल विक्रेता आम पैक करने हेतु टोकरियाँ खरीदता है और भिन्न भिन्न आकार के आम की छटनी करता है। वह गुणवत्ता व आकार के अनुसार उनकी मूल्य अलग - अलग मूल्य तय करता है।

6) जोखिम उठाना :-

एक फुटकर व्यापारी की दूकान पर उत्पाद प्रत्येक समय स्टाक में रहते हैं। अतः उनके संग्रहण की अवधि के दौरान, क्षय, प्रचलन, मूल्य-ह्रास चोरी जैसे नुकसान का जोखिम फुटकर व्यापारी को उठाना पड़ता है।

7) माल का विक्रय :-

फुटकर व्यापारी का मुख्य कार्य अंतिम उपभोक्ताओं को माल का विक्रय करना है। उसे अलग-अलग हैसियत, पसंद व रूचि तथा लोगों का आवश्यकताओं व प्राथमिकताओं की संतुष्टि करनी पड़ती हैं अपने नियमित उपभोक्ता बनाने हेतु उपभोक्ताओं के साथ घनिष्ठता व आत्मीयता के संबंध स्थापित करने पड़ते हैं।

फुटकर व्यापारियों की सेवाएँ :-

फुटकर व्यापारी माल के वितरण में एक मध्यस्थ का काम करता है। इस स्थिति में वह दोहरी भूमिका निभाता है। वह एक तरफ, उत्पादकों व थोक व्यापारियों के लिए तथा, दूसरी तरफ, अंतिम उपभोक्ताओं के लिए उपयोगी सेवाएँ प्रदान करता है। अपनी उत्पादों को अंतिम उपभोक्ताओं तक पहुँचाने के लिए विनिर्माता एवं थोक व्यापारी एक बड़ी सीमा तक फुटकर व्यापारी पर निर्भर हैं। फुटकर व्यापारी उत्पाद के विपणन की सुविधा प्रदान कर थोक व्यापारियों को प्रत्यक्ष तथा उत्पादकों को अप्रत्यक्ष रूप से सहयता देता है। दूसरी तरफ, फुटकर व्यापारी उत्पादकों तथा उपभोक्ताओं को बीच की खाई को पाटता है। इस स्थिति में, वह उपभोक्ताओं के क्रय-एजेन्ट के रूप में कार्य करता है, और उनको निम्नलिखित सेवाएँ प्रदान करता है :-

1) फुटकर व्यापारी उपभोक्ताओं के दैनिक उपयोग की अनेक उत्पादों का पर्याप्त स्टाक हर समय अपने पास रखता है। वह उपभोक्ता की मांग पर तत्परता से माल उपलब्ध करता है।

2) इसके अतिरिक्त, वह विभिन्न विनिर्माताओं द्वारा बने हुए उत्पादों में से चयन करने की सुविधा भी देता है।

3) फुटकर व्यापारी नवीन उत्पादों के आने की सूचना अपने उपभोक्ता को देता रहता है। इसके लिए वह माल को शो-केस में सजाकर रखता है। साथ ही, वह नवीन उत्पादों के गुण मूल्य तथा प्रयोग की जानकारी भी उपभोक्ताओं को उपलब्ध करवाता है। कई बार वह अपनी दूकान पर विनिर्माताओं के उत्पादों की विक्रय संवर्धन हेतु प्रदर्शनी भी लगाता है।

4) प्रायः फुटकर व्यापारी उपभोक्ताओं को कुछ उत्पाद क्रय संबंधी निर्णय लेने हेतु महत्वपूर्ण सूचनाएँ सलाह के रूप में भी देते हैं। अपनी सलाह के दौरान वह विभिन्न गुणवत्ता के उत्पादों के सापेक्ष गुण-दोष प्रकट करता है।

5) फुटकर व्यापारी अपने उपभोक्ताओं को व्यक्तिगत सेवा, सुविधा तथा संरक्षण आदि भी प्रदान करता है। घर पर माल पहुँचाना, उधार देना, माल की व्यक्तिगत देखभाल या मरम्मत करना, आदि फुटकर व्यापारी की उपभोक्ताओं के प्रति महत्वपूर्ण सेवाएँ हैं।

फुटकर व्यापारियों के प्रकार - फुटकर व्यापारियों को प्रायः दो वर्गों में विभक्त किया जाता है :-

1) चलते फिरते या भ्रमणशील फुटकर व्यापारी, और

2) स्थायी दुकान वाले फुटकर व्यापारी

स्थायी दुकान वाले फुटकर व्यापारी को पुनः दो श्रेणियों में विभक्त किया जा सकता है। 1) छोटे पैमाने वाले फुटकर व्यापारी 2) बड़े पैमाने वाले फुटकर व्यापारी। इन सभी प्रकार के फुटकर व्यापारियों को नीचे चित्र में स्पष्ट रूप से चित्रित किया गया है, इसमें इसे तुरन्त समझने में सहायता मिलेगी।

NMDC-130

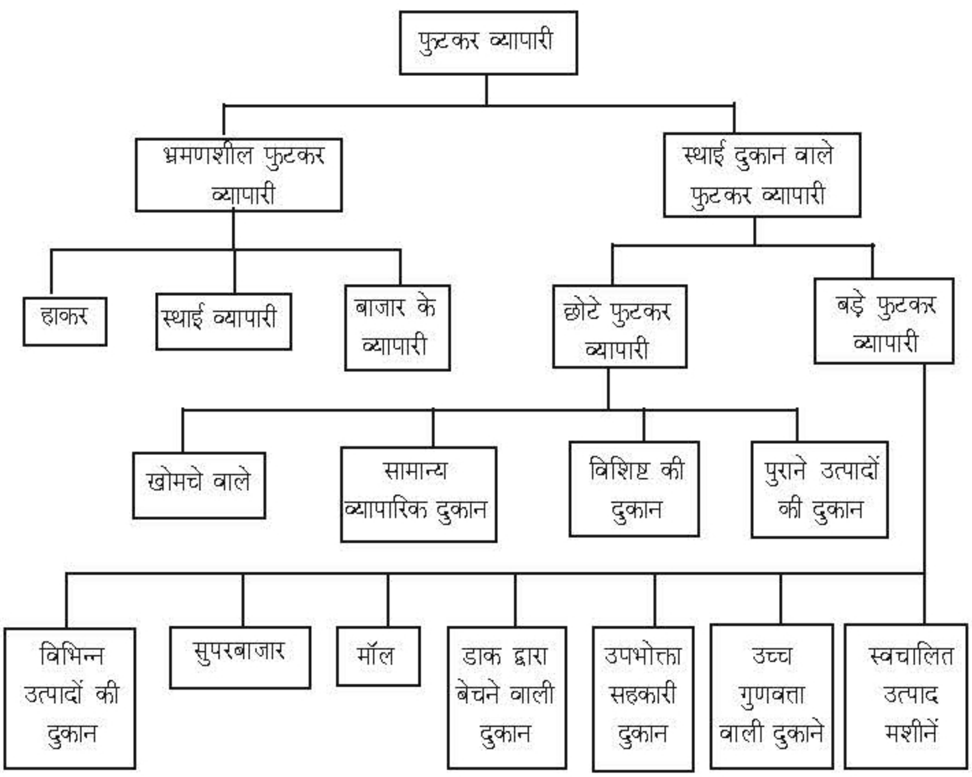

जगह-जगह घूम कर तथा स्थान बदल-बदल कर अपने उत्पादों का विक्रय करने वाले फुटकर व्यापारियों को चलते-फिरते फुटकर व्यापारी किसी निश्चित स्थान पर व्यवसाय नहीं करते। ये लोग घर-घर जाकर अपना माल बेचते हैं और सुविधानुसार तथा विक्रय का पूर्वानुमान करते हुए अपने व्यापार का स्थान बदलते रहते हैं। अतः चलते-फिरते फुटकर व्यापारी क्रेताओं के समीप पहुँचने का प्रयास करते रहते हैं। चलते-फिरते फुटकर व्यापारी तीन प्रकार के हो सकते हैं :

1) फेरी वाले :

फेरी वाले रिहायशी इलाकों में घर-घर जाकर दैनिक आवश्यकता के उत्पाद बेचते हैं। इनके द्वारा सब्जियाँ, फल, बर्तन, खिलौने, आईसक्रीम खाने की चीजें आदि का विक्रय किया जाता है। अल्प पूंजी के कारण इनके पास उत्पादों का संग्रह कम होता है। अब ज्यों-त्यों पक्की सड़कों का विस्तार बढ़ रहा है और मोटर बसें दूर-दूर तक जाने लगी हैं त्यों-त्यों फेरी वालों का कार्यक्षेत्र संकुचित होता जा रहा है।

2) पटरी वाले व्यापारी :

सड़क की पटरी पर बैठने वाले व्यापारी, प्रायः व्यस्त व्यापारिक क्षेत्रों, गलियों के नुक्कड़ों तथा रेलवे स्टेशनों व बस अड्डों के निकट देखने को मिलते हैं। वे हाथ में पकड़ने वाले थैले, कपड़ों के कटपीस, सिले-सिलाये वस्त्र, जूते, घरेलू बर्तन, खिलौने, पैन व पेंसल, पत्र-पत्रिकाएँ, फल सब्जियाँ आदि का विक्रय करते हैं। कभी-कभी पटरी वाले व्यापारी माल के प्रदर्शन हेतु अस्थायी छप्पर, चबूतरों का निर्माण भी करते हैं। बिक्री की संभावना को देखते हुए वे अपना कार्य-स्थल अक्सर बदलते रहते हैं और माल को पटरी पर सजा कर विक्रय का प्रयास करते हैं।

3) हाट के व्यापारी :

हाट अथवा पैठों के व्यापारी अपने उत्पाद सप्ताह के एक निश्चित दिन को लगने वाले अनियमित बाजार में बेचते हैं। प्रायः वे अपना कारोबार छोटे-छोटे शहरों या कस्बों में करते हैं। उनकी मुख्य विशेषता यह है कि वह दिन विशेष पर एक बाजार के आस-पास के इलाके में लगे दूसरे बाजार को चले जाते हैं और वहाँ अपने उत्पाद जमीन पर सजा कर स्थानीय उपभोक्ताओं को उनकी पसंद की उत्पाद छांटने हेतु सुविधा प्रदान करते हैं। इन बाजारों में उत्पादों के मूल्य सौदेबाजी के द्वारा तय किये जाते हैं।

चलते फिरते फुटकर व्यापारियों की सेवाएँ :-

फुटकर व्यापारी उपभोक्ताओं को अपना माल उनके निवास स्थान के निकट तथा सुविधाजनक स्थानों पर बेचते हैं। वे या तो उपभोक्ताओं की दहलीज पर जाकर या फिर उनके मार्ग में स्थिति केन्द्रों पर विक्रय करते हैं। काम-काज में व्यस्त लोगों को फेरी वाले पटरी वाले व्यापारियों से अपनी जरूरत का सामान खरीदने में बहुत सुविधा रहती

NMDC-1

है। यही नहीं इनके द्वारा गृहणियों को भी अपने उपयोग के उत्पाद घर बैठे मिल जाते हैं।

छोटे पैमाने की फुटकर दुकाने :

छोटे पैमाने की फुटकर दुकानों के अन्तर्गत निम्नलिखित दो प्रकार की दुकाने शामिल होती हैं - एक तो ऐसी दूकानें जो विभिन्न उत्पादों में व्यापार करती हैं और दूसरी वह जो केवल कुछ उत्पादों में ही व्यापार करती है। अधिकांश छोटे पैमाने की फुटकर दुकानें रिहायशी इलाकों या बाजारी स्थानों पर स्थापित की जाती है। विक्रयार्थ माल की प्रकृति के आधार पर छोटे पैमाने के फुटकर दुकानों के तीन श्रेणियों में विभक्त कर सकते हैं।

1) स्टाल वाली दुकानें :

छोटे आकार वाली ये दुकानें उपभोक्ताओं के निवास स्थानों के समीप उनके आस पास की सड़कों, गलियों, नुक्कड़ों तथा बस अड्डों पर होती हैं। इनके द्वारा दैनिक आवश्यकता के उत्पादों का विक्रय होता है। जिनके लिए उपभोक्ता केन्द्रीय बाजार में नहीं जाना चाहते। स्टेशनरी खाद्य सामग्री, होजरी का सामान, प्रसाधन के उत्पाद आदि इन दुकानों के मुख्य आकर्षण हैं। इनका उद्देश्य उपभोक्ताओं की जरूरत का सामान उनके नजदीकी स्थान पर उपलब्ध कर लाभ कमाना है।

2) सामान्य उत्पादों की दुकाने :

स्थानीय उपभोक्ताओं की सामान्य आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए छोटे-छोटे सामान्य भण्डारों की स्थापना की जाती है। ये भण्डार अथवा दुकानें दिन प्रतिदिन काम में आने वाली उपभोक्ता वस्तुओं जैसे डबलरोटी, बिस्कुट, मक्खन, स्टेशनरी, प्रशाधन, कागज व पैंसिल, सिगरेट, सुई धागा, बटन आदि विभिन्न प्रकार के उत्पाद शामिल हैं का विक्रय करती हैं। इनकी स्थापना उपभोक्ताओं की जरूरत के सारे उत्पाद उनके नजदीक पर उपलब्ध करने में इनका महत्वपूर्ण योगदान होता है। ये दुकानें अपने नियमित उपभोक्ताओं को घर पर माल पहुंचाने तथा उधार माल खरीदने की सुविधा भी उपलब्ध करती हैं।

3) विशिष्ट दुकानें :

इन दुकानों पर किसी एक वर्ग के उत्पाद में से एक सीमित उपवर्ग के उत्पाद ही विक्रय किये जाते हैं परन्तु इस चुने हुए उपवर्ग का उत्पादों में अधिक से अधिक विविधता उपलब्ध की जाती है। उदाहरण के लिए, बिजली मेनुफिक्सचर, पुस्तकें व स्टेशनरी, ब्रेड, मिठाई, सिले-सिलाए वस्त्र, खिलौने आदि के लिए विशिष्ट दुकाने ही उपयुक्त समझी जाती है।

बड़े पैमाने के फुटकर व्यापारी :

विविध प्रकार के उत्पाद का भारी मात्रा में लेन-देन करने वाले फुटकर व्यापारियों को बड़े पैमाने के फुटकर व्यापारी कहा जाता है। बड़े पैमाने की स्थायी दुकानों से व्यापार करने वाले फुटकर व्यापारी निम्नलिखित प्रकार के हो सकते हैं।

1) विभागीय भण्डार
2) सुपर मार्केट
3) उद्देशीय दुकानें
4) डाक आदेश गृह
5) उपभोक्ता सहकारी भण्डार
6) किराया क्रय व्यापारी
7) कटौती गृह
8) सुपर बाजार
9) स्वचालित विक्रय मशीनें

4.6 नवीन शताब्दी में थोक एवं फुटकर व्यापार :

MDC-13

विपणन, प्रबन्धन का एक मात्र स्थाई स्त्रोत है जोकि व्यापार की निरन्तर बदलती हुई स्थिति के परिणाम स्वरूप भी उतना ही महत्व बना हुआ है किन्तु इसके कार्यों की प्रकृति के निरन्तर परिवर्तन होते आ रहे हैं। वितरण माध्यम भी इन परिवर्तनों से अछूते नहीं रहे हैं। ये परिवर्तन न केवल प्रमुख वितरण माध्यम के भागीदारों की नई प्रवृत्तियों के परिचायक हैं वरन उनके भविष्या का भी पूर्वानुमान कराते रहते हैं। इसका पहला मुख्य विकास देश में एकीकृत विपणन माध्यम से संबंधित है। परंपरागत वितरण माध्यम, जिसमें वितरण के अलग-अलग माध्यम व पक्ष, स्वतन्त्र रूप से कार्य कर सकते थे अब संभव नहीं हैं। इस माध्यम में अपने हित की रक्षा सर्वोपरि थी परन्तु अब वितरण के सभी भागीदार पक्ष परस्कप हित भी भावना से अनुप्रेरित हैं। यह एकीकरण समस्तर अथवा उर्ध्वाधर का हो सकता है। उर्ध्वाधर एकीकरण का अभिप्राय, नीचे से ऊपर तक सभी माध्यमों में समग्रता एवं समावेश हैं। उदाहरणार्थ, विनिर्माताओं और थोक व्यापारियों तथा थोक व्यापारियों और फुटकर व्यापारियों में सामंजस्य अथवा तालमेल। इस प्रकार का तालमेल कंपनी अनुबन्ध अथवा प्रशासन किसी भी परस्पर आधार पर हो सकता है। इसका उद्देश्य संचालन व्यय में कमी लाना एवं बाजार उपयोगिता एवं प्रभाव को सुनिश्चित करना है। दूसरी ओर समानान्तर एकीकरण का प्रयोजन वितरण माध्यम में एक ही स्तर पर कार्यरत दो या दो से अधिक फर्मों को विपणन अवसर के संयुक्त एवं लाभकारी संयोजन की संभावनाओं का पता लगाने के लिए प्रेरित करना है। यह

विनिर्माताओं अथवा थोक व्यापारियों, यहाँ तक कि फुटकर व्यापारियों के रूख पर भी संभव है। उदाहरण के लिए जैसे-भारत में स्टील कम्पनियों ने बाजार में स्टील की आपूर्ति को निर्देशित करने के लिए एक संघ की स्थापना की है। जिससे उत्पाद की दृष्टि से लाभकारी मूल्य निर्धारित एवं सुनिश्चित किया जा सके। आने वाले वर्षो में इस प्रवृत्ति की ओर अधिक संतुष्ट होने की पूरी-पूरी संभावना हैं। जिसका आना अभी हाल के ही दिनों में सभी हवाई जहाज कम्पनियों के द्वारा बढ़ाया गया किराये के रूप में उपभोक्ताओं के सामने आया है।

दूसरी बात यह है कि अब अधिकाधिक कंपनियां अपने उत्पाद सीधे बेचने लगी हैं, न कि मध्यस्थों द्वारा जैसा कि पहले होता था। ऐसा उपभोक्ता टिकाऊ सामान एवं उत्पादों के बारे में विशेष रूप से सही हैं। इसका उद्देश्य बाजार पर अधिकाधिक प्रभाव तथा नियंत्रण प्राप्त करना है ताकि वितरण लागतों में अधिकाधिक बचत की जा सके।

तीसरी बात फुटकर व्यापार के संबंध में है जिसमें दो महत्वपूर्ण विकास हो रहे हैं। ये हैं स्वयं सेवा विक्रय केन्द्रों का विकास और स्वचालित विक्रय-मशीनों का उपयोग। इस समय महानगरों, उपनगरों में सुपर बाजार तथा विभागीय स्टोर लोकप्रिय हो रहे हैं। इसी प्रकार स्वचालित विक्रय मशीनें, ट्रेन के टिकट तथा काफी बेचने के लिए किया जा रहा है इसका परिणाम यह हुआ है कि व्यक्तिगत विक्रय अथवा विक्रेताओं की भूमिका उत्तरोत्तर कम होती जा रही है, जबकि नामकरण एवं पैकिंग का महत्व बहुत अधिक बढ़ता जा रहा है।

NMDC-

स्वपरख प्रश्न -

प्र0 1 फुटकर व्यापारी और थोक व्यापारी में क्या अन्तर है? स्पष्ट करें।

....

....

....

प्र0 2 विभागीय स्टोर और बहुसंख्यक दुकानों में अंतर स्पष्ट कीजिए?

....

....

....

प्र0 3 उपभोक्ता सहकारी भंडार और सुपर बाजार में भेद स्पष्ट कीजिए?

....

....

....

प्र0 4 बताइए कि निम्नलिखित कथन सत्य हैं या असत्य ?

i) फुटकर व्यापारी, वस्तुओं को हमेशा विनिर्माताओं से खरीदते हैं।

ii) फुटकर व्यापारी, अन्य फुटकर व्यापारियों को भी वस्तुएँ बेचते हैं।

iii) सुपर मार्केट सामान्यतः उपभोक्ता टिकाउ सामान का व्यापार करते हैं।

iv) जगह-जगह घूमकर अपनी वस्तुएँ बेचने वाले फुटकर व्यापारियों को चलते-फिरते फुटकर व्यापारी कहा जाता है।

v) सुपर बाजार एक सहकारी समिति द्वारा स्थापित फुटकर दुकान अथवा संस्थान हैं।

vi) उपभोक्ता सहकारी समितियाँ, ''न लाभ न हानि'' के आधार पर कार्य करती हैं।

4.7 सारांश :

मध्यस्थ, वस्तुओं एवं सेवाओं के वितरण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। वे कई प्रकार की उपयोगिता का सृदन करते हैं। क्रेताओं के लिए खरीदारी को सुविधाजनक बनाते हैं और उत्पादों की मांग के नियमन में सहायता देते हैं। मध्यस्थों के दो प्रमुख प्रकार हैं-मूल एवं सहायक । मूल के मध्यस्थ वे हैं, जो माल के विक्रय तथा स्वामित्व हस्तांतरण आदि कार्य करते हैं। सहायक मध्यस्थों में वित्तीय संस्थाएँ भंडार गृह आदि आते हैं जो वितरण प्रणाली के अन्य अंगों के कार्य में सहायता देते हैं। मूल मध्यस्थों को पुनः दो वर्गों में बांटा जा सकता है। (1) व्यापारिक मध्यस्थ (फुटकर व्यापारी और थोक व्यापारी) और, (2) व्यापारिक एजेन्ट जैसे - दलाल, कमीशन एजेन्ट, आश्वसी एजेन्ट, नीलामकर्ता आदि।

थोक व्यापारी का अभिप्राय उन मध्स्स्थ व्यापारियों से है, जो बड़ी मात्रा में माल खरीदकर उसे पुनर्विक्रय एवं लाभ कमाने के उद्देश्य से फुटकर विक्रेताओं एवं औद्योगिक तथा व्यावसायिक उपभोक्ताओं को बेचते हैं। थोक व्यापारियों का वर्गीकरण व्यवहार की जाने वाली वस्तुओं, कार्य-संचालत पद्धतियों तथा भौगोलिक विस्तार के आधार पर किया जा सकता है। थोक व्यापारियों के मुख्य कार्य है-वस्तुओं का एकत्रीकरण, संग्रहण, श्रेणीकरण व संवेष्ठन, वितरण, फुटकर व्यापारियों का वित्तीयन मूल्य निर्धारण जोखिम वहन और विनिर्माताओं को पेशगी या वित्तीय सहायता आदि। इस प्रकार थोक व्यापारी वस्तुओं के निर्माताओं तथा फुटकर व्यापारियों को मूल्यवान सेवाएं प्रदान करते हैं।

फुटकर व्यापारी अधिकतर माल सीधे उपभोक्ताओं को उनके उपयोग एवं प्रयोग के लिए बेचते हैं। चूंकि फुटकर व्यापार करना विनिर्माता का प्रमुख कार्य नहीं है, इसलिए सीधे उपभोक्ताओं को अपना माल बेचने वाले विनिर्माताओं को हम फुटकर व्यापारी नहीं कह सकते। फुटकर व्यापारी वस्तुओं के वितरण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। उनका

मूल उद्देश्य अंतिम उपभोक्ताओं की अधिकांश जरूरतों को एक ही स्थान पर पूरा करना होता है। वे एक ओर उत्पादकों एवं थोक व्यापारियों तथा दूसरी ओर उपभोक्ताओं के बीच बहुत ही उपयोगी कड़ी का काम करते हैं। फुटकर व्यापारियों द्वारा निष्पादित कार्य मुख्य रूप से इस प्रकार है- मांग करा पूर्वानुमान, माल को क्रय करना, माल की पैकिंग, ग्राहकों को विभिन्न सेवाएं व सुविधाएँ प्रदान करना थोक व्यापारियों के माध्यम से विनिर्माताओं को बाजार संबंधी जानकारी देना आदि। इस प्रकार फुटकर व्यापारी थोक व्यापारियों और उपभोक्ताओं को प्रत्यक्ष तथा उत्पादतों व विनिर्माताओं को अप्रत्यक्ष रूप से सहायता प्रदान करते हैं।

फुटकर व्यापारियों को दो मुख्य वर्गों में बांटा जा सकता है- चलते-फिरते या भ्रमणशील फुटकर व्यापारी तथा स्थायी दुकानों वाले फुटकर व्यापारी। चलते-फिरते व्यापारी घर-घर जाकर अथवा अपनी सुविधा के अनुसार स्थान बदलकर माल बेचते हैं। इनके अन्तर्गत फेरी वाले, पटरी वाले तथा हाटों के व्यापारी आते हैं। स्थायी दुकानों वाले फुटकर व्यापारी अपना व्यापार किसी ऐसे स्थान पर चलाते हैं, जहाँ ग्राहक आसानी से पहुँचकर अपनी आवश्यकतानुसार सामान खरीद सकता है। स्थायी फुटकर दुकानें भी दो प्रकार के होती है- लघु स्तरीय (स्टाल वाली दुकान, सामान्य वस्तुओं की दुकान, विशिष्ट वस्तुओं की दुकान, पुरानी वस्तुओं की दुकान आदि) और दीर्घ स्तरीय स्थायी दुकानों (विभागीय भंडार, सूपर मार्केट, सुपर बाजार, किराया क्रय व्यापार गृह, कटौती व्यापार गृह और स्वचालित विक्रय मशीन) जो नाना प्रकार की वस्तुओं को बड़ी मात्रा में क्रय करती है, उनका स्टाक रखती हैं और भारी संख्या में ग्राहकों की आवश्यकताओं की पूर्ति करती है।

NMDC-30

4.8 उपयोगी शब्दकोष :

सहायक भागीदार : वे व्यक्ति अथवा संस्थाऐं, जो विक्रय व लेन-देन संबंधी सौदों के निष्पादन तथा स्वामित्व-हस्तांतरण आदि कार्य नहीं करते, बल्कि वस्तुओं के वितरण मे लगे अन्य माध्यमों की सहायता करते हैं।

स्वतः विक्रय : सिक्कों से क्रियाशील होने वाली स्वचलित मशीनों द्वारा सामन्य उपभोक्ता वस्तुओं का भिन्न-भिन्न स्थानों पर विक्रय।

नीलामकर्ता : एक ऐसा मध्यस्थ एजेन्ट, जो अपने माल को बेचने हेतु नीलामी की प्रणाली अपनाता है।

दलाल : क्रेता और विक्रेता को एक दूसरे से मिलाने वाला मध्यस्थ एजेन्ट, जो इन दोनों में से किसी एक की ओर से विक्रय अथवा क्रय का सौदा करता है।

कमीशन एजेन्ट ; निर्माता अथवा उत्पादक की ओर से कमीशन पर माल बेचने वाला एक मध्यस्थ, जो माल का कब्जा ले सकता है, उसे बेच सकता है तथा उसकी सुपुर्दगी दे सकता है।

विभागीय भंडार : बड़े पैमाने पर फुटकर व्यापारिक संस्था, जिसमें एक ही भवन के अन्तर्गत बहुत से विभाग होते हैं और प्रत्येक विभाग एक विशेष प्रकार की वस्तु बेचता है तथा वह स्वयं में एक सम्पूर्ण इकाई होता है।

कटौती व्यापार गृह : टिकाऊ उपभोक्ता वस्तुओं का नियमित रूप से छूट पर बेचने वाले व्यापारी ।

आढ़तिया : एक व्यापारिक एजेन्ट जो दूसरों का माल अपने पास बेचने हेतु रखता है। वह प्रधान के माल को अपने नाम से बेच सकता है, उसे गिरवी रख सकता है और वे सभी कार्य कर सकता है जो प्रधान कर सकता है।

किराया क्रय व्यापार : टिकाउ वस्तुओं के किराया क्रय की पद्धति, जिसमें वस्तुओं के मूल्य का भुगतान सामायिक किश्तों द्वारा किया जाता है तथा अंतिम किश्त के भुगतान के समय तक प्रत्येक भुगतान को किराया माना जाता है और माल का स्वामित्व क्रेता को तभी मिलता है, जब वह सभी किश्तों का भुगतान कर देता है।

चलते फिरते फुटकर व्यापारी : घर घर जाकर या कार्य स्थल बदल-बदल कर अपनी वस्तुएं बेचने वाले फुटकर व्यापारी।

डाक आदेश गृह : बड़े पैमाने पर फुटकर व्यापार की एक संस्था जो डाकघर को अपनी वस्तुओं के वितरण का माध्याम बनाती है और वी0पी0सी0 द्वारा माल बेचती है।

NMDC-13

व्यापारिक मध्यस्थ : व्यापारिक एजेन्ट से भिन्न एक मध्यस्थ (जैसे थोक या फुटकर व्यापारी) जो अपने नाम से क्रय विक्रय करता है और कारोबार का जोखिम भी उठाता है।

मध्यस्थ : उत्पादकों एवं उपभोक्ताओं के बीच एक बिचौलिया, जो विपणन कार्य के निष्पादन द्वारा माल के वितरण जो सहज एवं सुगम बनाता है।

बहुसंख्यक दुकाने/श्रृंखलाबद्ध स्टोर : एक ही स्वामित्व तथा प्रबन्ध के अन्तर्गत चलने वाली फुटकर दुकानें जो देश के नगरों के विभिन्न स्थानों पर विकेन्द्रित होती है और एक ही प्रकार की वस्तुओं का एक समान मूल्य पर विक्रय करती है।

विशिष्ट वस्तुओं की दुकानें : छोटी छोटी फुटकर दुकाने जो एक अथवा दो विशेष प्रकार की वस्तुओं का विक्रय करती है।

सुपर मार्केट : स्वयं सेवा के सिद्धान्त पर अनेक प्रकार की सामान्य उपभोक्ता वस्तुओं का एक ही स्थान पर कम मूल्य पर नकद विक्रय करने वाली फुटकर व्यापारिक संस्था।

थोक व्यापारी : पुनः विक्रय एवं लाभ कमाने के उद्देश्य से थोक व्यापार में लगे व्यक्ति अथवा संस्थाऐं।

4.9 महत्वपूर्ण प्रश्नावली :

प्रश्न-1 वस्तुओं/उत्पादों के वितरण में मध्यस्थों की क्या भूमिका होती है? क्या मध्यस्थों का बहिष्कार संभव है।

प्रश्न-2 फुटकर व्यापार से क्या अभिप्राय है? वस्तुओं के वितरण में फुटकर व्यापारियों की भूमिका की व्याख्या कीजिए।

प्रश्न-3 थोक व्यापार से क्या अभिप्राय है? यह फुटकर व्यापार से किस प्रकार भिन्न होता है?

प्रश्न-4 विभागीय भंडारों तथा श्रृंखला बद्ध स्टोरों के लाभों एवं हानियों का वितरण दीजिए।

प्रश्न-5 निम्नलिखित पर टिप्पणी लिखिए :

i. चलते फिरते फुटकर व्यापारी।

ii. सहायक भागीदार

iii. उपभोक्ता सहकारी भंडार

iv. व्यापारिक एजेन्ट

प्रश्न-6 समाज के विभिन्न वर्गों को, थोक एवं फुटकर व्यापारियों द्वारा प्रदत्त सेवाओं की व्याख्या कीजिए।

प्रश्न-7 विभिन्न प्रकार के मध्यस्थों की विवेचना कीजिए।

इकाई 5 : ई-व्यापार और विपणन प्रबन्धन

इकाई रूपरेखा

5.0 उद्देश्य

5.1 प्रस्तावना

5.2 ई-व्यापार के आधारभूत तत्व

5.3 विपणन व्यवस्था में इन्टरनेट की भूमिका तथा लाभ

5.4 ई-विपणन युक्ति का विकास

5.5 ई-विपणन सम्बन्धी सामान्य नियम

5.6 ई-विपणन वर्तमान और भविष्य

5.7 सारांश

5.8 उपयोगी शब्द कोष

5.9 महत्वपूर्ण प्रश्नावली

5.0 उद्देश्य

NMC-130

इस इकाई के अध्ययनोपरान्त आप छात्रगण -

- ई-व्यापार तथा विपणन प्रबान्धन को समझ सकेंगे तथा इनके आधारभूत तत्वों की विवेचना कर सकेंगे।
- ई-विपणन के महत्व को वर्तमान प्रतिस्पर्धात्मक युग में समझा सकेंगे।
- ई-पोर्टल के विकास के साथ-साथ ई-विपणन के महत्व का विश्लेषण कर सकेंगे।
- ई-पोर्टल में एक ब्राण्ड के निर्माण को समझ सकेंगे, तथा
- इन्टरनेट पर यातायात के प्रबन्धन को आत्मसात कर सकेंगे।

5.1 प्रस्तावना

प्रस्तुत इकाई वर्तमान प्रतिस्पर्धात्मक युग में सबसे आकर्षण दुनिया इन्टरनेट के विविध आयोमों के सम्बन्ध में विषय प्रवर्तन करेगी। जिसमें सर्वप्रथम आप को यह समझाने का प्रयास किया जाएगा कि क्यों आज इन्टरनेट को विपणन का एक महत्वपूर्ण उपकरण माना जाता है तथा कैसे उत्पादनकर्ता इन्टरनेट और विपणन के आधारभूत तत्वों के संयोजन से एक आकर्षण, बहुआयामी तथा प्रभावी ई-विपणन युक्ति का निर्माण कर सकता है। प्रस्तुत इकाई यह बताने का प्रयास करेगी कि कैसी ई-विपणन युक्ति को और

प्रभावी बनाया जा सकता है, इसके समझने में किस प्रकार की चुनौतियाँ हैं तथा ई-विपणन का भविष्य क्या है।

5.2 ई-व्यापार के आधारभूत तत्व

जिस प्रकार विपणन के आधारभूत तत्वों में उत्पाद, मूल्य, स्थान तथा संवर्द्धन को सम्मिलित किया जाता है ठीक उसी प्रकार ई-व्यापार के आधारभूत तत्वों में उपरोक्त के साथ-साथ निम्नलिखित आधारभूत आवश्यक तत्वों को सम्मिलित किया जाता है।

(क) इन्टरनेट- इन्टरनेट को दूसरे शब्दों में इलेक्ट्रानिक जाल के नाम से भी जानते हैं। यह इस्तेमाल करने वालों का अन्तर्राष्ट्रीय मंच हैं जिसमें सभी एक दूसरे से कम्प्यूटर और आधुनिक दूर संचार उपकरणों के माध्यम से जुड़े रहते हैं। यह एक ऐसा मंच है जो प्रत्येक सूचना ग्राही व्यक्ति को कम समय तथा कम खर्च में सुव्यवस्थित तथा तत्काल, पूर्ण सूचना प्रदान करता है। इसकी इसी विवेचना के कारण आज आधुनिक व्यापारिक संस्थाएँ इसका भरपूर उपयोग कर अपने उत्पादों को इन्टरनेट उपयोग करने वाले ग्राहकों के समक्ष प्रस्तुत कर रही है।

(ख) डब्लू0 डब्लू0 डब्लू0: इसे 3 डब्लू के नाम से जाना जाता है। इसे आंग्लभाषा में वर्ल्ड वाइड वेब के नाम से सम्बोधित किया जाता है अर्थात एक ऐसा जाल जो सम्पूर्ण दुनिया को अपने साथ जोड़ने की क्षमता रखता है। यह 3 डब्लू ही इन्टरनेट उपयोग करने वाली व्यापारिक संस्थाओं तथा उनको उपभोक्ता का पता बताने में उपयोगी होता है। जैसे किसी विद्यार्थी को अगर उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन का इन्टरनेट पता जानना हो तो उसके लिए विश्वविद्यालय ने अपना पता बनाया है www.uprtouallahabad.org.in विश्वविद्यालय के इस ई-पते पर जाकर कोई भी विद्यार्थी विश्वविद्यालय में होने वाली अद्यतन गतिविथियों को जान सकता है। इसी प्रकार व्यापारिक संस्थाएँ अपना ई-पता बनाकर ई-उपभोक्ताओं को आकर्षित करने का प्रयास करती है।

MDC-30

(ग) ई-विपणन - विपणन की ऐसी कोई भी गतिविधि या प्रयास जिसमें इन्टरनेट का व्यापक प्रयोग किया जाता है। ई-विपणन कहलाता है। दूसरे शब्दों में उपभोक्ताओं तक अपने उत्पाद, मूल्य, स्थान तथा संचार के प्रयोगों में इन्टरनेट का उपयोग ही ई-विपणन कहलाता है।

(घ) ई-वाणिज्य: जब एक उत्पादनकर्ता या प्रबन्धक ग्राहकों को साथ अथवा अपने मध्यस्थों के साथ अपना व्यापारिक लेन-देन इन्टरनेट के माध्यम से करते हैं तब इस व्यापारिक लेन-देन को ई-वाणिज्य की संज्ञा दी जाती है। मूलरूप से ई-विपणन का क्षेत्र व्यापाक है तथा उसके मूल में अधिक बिक्री छुपी हुई होती है।

5.3 विपणन व्यवस्था में इन्टरनेट की भूमिका तथा लाभ :

आज के प्रतिस्पर्धा युग में इन्टरनेट की दुनिया एक जादू के समान है जिसमें एक क्लिक करते ही लाखों करोड़ों लोगों का एक जाल हमारे सामने खुल जाता है जो हमें

व्यापार का एक नया रास्ता दिखाता है।

प्रायः इन्टरनेट के जाल से जुड़े व्यक्ति केवल खरीदारी के लिए ही इन्टरनेट पर खोज नहीं करते अपितु वे मनोरंजन खेल, दुनिया और देश की ताजा तरीन खबरों के लिए भी इसको प्रयोग करते हैं किन्तु इसके साथ-साथ वे अपने जीवनचर्या जरूरत और पसन्द के अनुसार नवीन उत्पादों के खोज भी इसी जाल में करते हैं। जिसके अन्तर्गत वे उत्पादों को लेकर अपने दोस्तों को ई-मेल द्वारा उत्पाद की जानकारी देते हैं, उनकी सलाह माँगते हैं तथा उस उत्पाद से जुड़ी हुई कम्पनी को भी इसी इन्टरनेट के जाल के माध्यम से सम्पर्क करने की कोशिश करते हैं। एक सर्वे के अनुसार केवल भारत में प्रतिदिन 1.5 बिलियन ई-मेल इस इन्टरनेट के जाल का प्रयोग करते हुए किये जाते हैं।

दूसरी ओर कम्पनी के प्रतिनिधि भी इन्टरनेट के जाल का उपयोग करते हुए नये-नये उपभोक्ता समूहों में सेंध लगाते हैं, सम्पर्क करते हैं, संवाद करते हैं, और उनको अपनी कम्पनी के उत्पादों के बारे में सूचनायें देते हैं, इसी प्रकार वे अपने मध्यस्थों, अपने कच्चे माल आपूर्तिकर्त्ता और अन्य कर्मचारियों से भी इसी ई-जाल के माध्यम से सुव्यवस्थित रूप से जुड़े रहते हैं।

भारत में आज मारूति उद्योग लिमिटेड जैसी तमाम ऐसी बड़ी कम्पनियाँ हैं जो प्रतिदिन इन्टरनेट के इस जाल द्वारा अपने उपभोक्ताओं के सम्पर्क रहती है, उनसे उनके क्रय पश्चात् अनुभवों की जानकारी लेती हैं, नयी कारों की बुकिंग करती है और उनकी समस्याओं का निपटारा द्रुतगति से करती है। इसी प्रकार यह कम्पनी अपने मध्यस्थों को जोड़े रखने और पलक झपकते ही उनके साथ संचार करने में भी इसी विधि का उपयोग करती है। वास्तव में इस जाल से उसे अपने मध्यस्थों से यह पता चलता रहता है कि प्रतिदिन की कुल बिक्री क्या रही है जिससे यह अगले दिन, हफ्ते, तथा माह के लिए कुछ निश्चित पूर्वानुमान कर उद्देश्यों के मूल्यों को हम अग्रलिखित बिन्दुओं के माध्यम से गहराई से जान सकते हैं। आइये इन्हें क्रमशः विश्लेषित करने का प्रयास करें-

1. संचार में सुविधा - इन्टरनेट का जाल लाखों, करोड़ों उपभोक्ताओं को अपने में समाहित रखता है केवल एक क्लिक द्वारा उत्पादनकर्ता अपनी बातों को इस बिधा द्वारा अकेले उपभोक्ताओं तक सुगमता से पहुँचा सकता है। जैसा कि हम जानते हैं कि व्यापार में उपभोक्ता, आपूर्तिकर्ता, मध्यस्थ तथा कर्मचारियों के मध्य एक सुदृढ़ संचार माध्यम एक आवश्यकता है और इसी आवश्यकता का नाम इन्टरनेट है।

2. केन्द्र बिन्दु - व्यापार में एक प्रबन्धक के सामने कई केन्द्र बिन्दु होते हैं। जिनके पास उन्हें सदैव पहुँचना होता है जिससे व्यापार की निरन्तरता को बनाये रखा जा सके। इस केन्द्र बिन्दु का वास्तविक आधार उपभोक्ता ही होते हैं। अतः इन्टरनेट के माध्यम से केन्द्र बिन्दु का निर्धारण कर उस तक पहुँचा जा सकता है।

3. सूचना - सफल व्यापार का दृढ़ आधार सूचना किसी सूचना का आधार

ही होता है। अतः वर्तमान परिप्रेक्ष्य में गतिमान और तीव्रतम सूचना का स्रोत इन्टरनेट है जिसके माध्यम से लाघों अक्षरों की सूचनायें पलक झपकते ही इधर से उधर की जा सकती है।

4. समयबद्धता - इन्टरनेट के उपयोग से एक प्रबंधक अपने सभी क्रिया कलापों में समयबद्धता का सदैव ध्यान रखता है या यूँ कहें कि इन्टरनेट का उपयोग उसे समय का प्रबन्धन सिखा देता है क्योंकि उसे मालूम होता है कि कब किस केन्द्र बिन्दु से किस समय सम्पर्क होगा। अतः इन्टरनेट समयबद्धता का एक सशक्त माध्यम बनकर उभरा है।

5. लागत उपयोगी - जब लाखों करोड़ों अक्षरों को एक क्लिक के माध्यम से जाल के सभी सदस्यों तक पलक झपकते ही पहुँचाने का माध्यम उपलब्ध हो तो कोई प्रबन्धक इसके लिये पोस्टल या यातायात के अन्य साधनों का उपयोग क्यों करें? यूँ तो सम्भवतः इन्टरनेट को स्थापित करने की लागत अधिक हो सकती है किन्तु इसका अधिकतम उपयोग समयबद्धता के साथ निरन्तर लागत उपयोगी बनता जाता है। अतः लागतों को कम करने का प्रभावी उपकरण भी इन्टरनेट बन चुका है।

6. गतिशीलता/लोचशीलता - इन्टरनेट एक अत्यन्त गतिशील तथा लोचशील माध्यम है। यह एक व्यावसायिक संगठन को अपने अनूकूलतम विपणन मिश्रण को सन्तुलित करने की पूरी ताकत एवं आधार प्रदान है। उदाहरण के रूप में हम कह सकते हैं कि एक इन्टरनेट उपयोगी व्यापारिक संस्था को यह आभास होता है कि उसका अमुख अत्यधिक तीव्र गति से बाजार में नहीं फैल रहा है तो वे तत्काल इन्टरनेट के माध्यम से दिखायें जो रहे अपने विज्ञापन में परिवर्तन कर उसके आने वाले परिणामों का सुव्यवस्थित मूल्यांकन कर सकते हैं जबकि अन्य साधनों में ऐसी सुविधा उपलब्ध नहीं है।

7. अन्तर्राष्ट्रीय पहुँच - इन्टरनेट की सहायता से एक व्यापारिक संस्था सम्पूर्ण विश्व को अपने जाल के माध्यम से अपने उत्पाद तथा अपने व्यापार के माध्यम से उसे कम खर्च में ही सूचित कर ध्यानाकर्षण कर सकती है। जो एराउन्ड द बर्ल्ड इन ऐट डालर की कहावत को चरितार्थ करती है।

8. मल्टीमीडिया सुविधायें - इन्टरनेट के माध्यम से एक कम्पनी को मल्टीमीडिया सम्बन्धी सभी सुविधायें एकल खिड़की प्रणाली के रूप में उपलब्ध रहती हैं। चाहे वे एनीमेशन हो, रंगों का, आवाजों का, स्पेशल प्रकार के प्रभावों का विविधीकरण हो या फिर वो उन्हीं उत्पाद का प्रस्तुतीकरण हो। यह एक प्रशिक्षण प्रबन्धक की कुशलता है कि वे कितने प्रभावी रूप से इन मल्टीमीडिया सुविधाओं का प्रयोग कर सकता है। दूसरी ओर उपभोक्ता भी इन्हीं आकर्षक सामन्जस्यो को देख-रेख कर कम्पनी विशेष के उत्पादों के प्रति आकर्षित होता है।

9. अन्तर्क्रियात्मक गुल - प्रायः लगभग सभी माध्यम एकतरफा होते हैं जिसमें एक उत्पादनकर्ता केवल अपनी ही बात कहता नजर आता है किन्तु इन्टरनेट एक ऐसा माध्यम है जो की दूसरे तरफ के व्यक्ति को भी अन्तःक्रिया कर अपनी बात को कहने का मौका है जिसके अन्तर्गत उपभोक्ता और प्रबन्धक साथ-साथ कार्य करने की कोशिश करते हैं।

10. विक्रय क्रिया - ऊपरवर्जित लाभों की श्रृंखला में सबसे अन्तिम लाभ इसकी विक्रय क्षमता है जो कि अन्य माध्यमों से इसे बिलकुल अलग खड़ा करती है। सभी क्रिया होने ने पश्चात् लगभग सभी व्यापारिक संस्थानों का उद्देश्य अपने उत्पाद का विक्रय ही होता है। अतः इन्टरनेट एक ऐसा मंच है जो दिखाता है, समझाता है, मनोरंजन करता है, सन्तुष्ट करता है और अन्त में विक्रय करता है। अतः इस विद्या से जुड़े उपभोक्ता अधिक प्रतिबद्ध और लम्बे समय तक संख्या से जुड़े रहते हैं।

5.4 ई-विपणन युक्ति का विकास :

विपणन में इन्टरनेट के जाल का प्रभावी उपयोग करने हेतु एक विपणन रणनीतिकार को एक सुव्यवस्थित, संगठित तथा प्रभावी युक्ति की आवश्यकता होती है। जिसे वे कुछ इस प्रकार से निर्मित कर सकते हैं। आगामी चित्र इसके विभिन्न चरणों को प्रदर्शित करने का प्रयास करेगा-

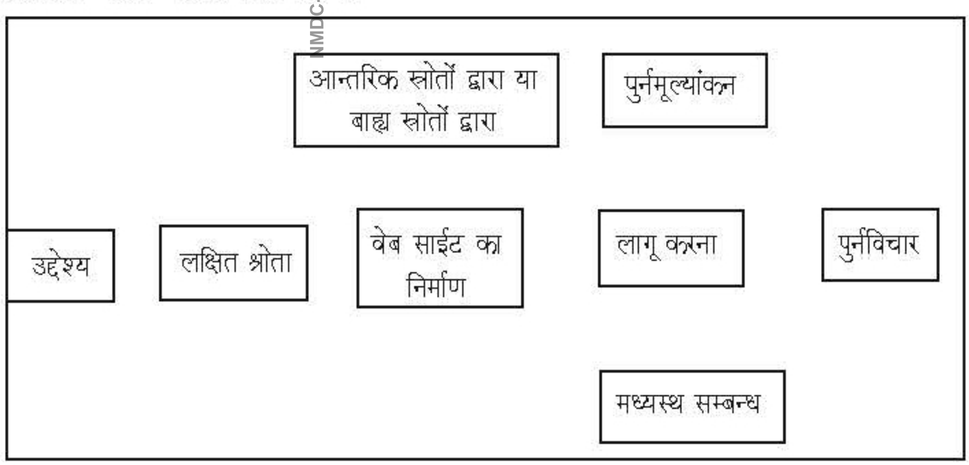

इन्टरनेट विपणन युक्ति

आईये अब इन चरणों को क्रमबद्ध रूप से समझने का प्रयास करें :-

1. **उद्देश्य निर्धारण** - इन्टरनेट विपणन युक्ति निर्धारण का प्रथम चरण में गुणात्मक तथा संख्यात्मक उद्देश्यों को निर्धारित किया जाता है अगर नवीन शोध अध्ययनों पर दृष्टि डाले तो पता चलता है कि 67% व्यापारिक प्रतिष्ठान उपभोक्ताओं को आकर्षित करने के लिये इन्टरनेट का उपयोग करते हैं, 62% उपभोक्ताओं के बीच अपनी प्रतिष्ठ स्थापित करने के लिये, 48% व्यवस्थाओं को सुव्यवस्थित करने के लिए, 47% बाजार में हिस्सेदारी बढ़ाने के लिये,

45% उपभोक्ताओं से संचार व्यवस्था सुद्रण करने के लिए तथा, 41% व्यापारिक प्रतिष्ठान अपने कर्मचारियों से सम्पर्क बढ़ाने के लिए इन्टरनेट का प्रयोग करती है इस प्रकार किसी व्यापारिक प्रतिष्ठान का उद्देश्य ही युक्ति निर्धारण का प्रथम सोपान होता है।

2. **लक्षित उपयोक्ता श्रोता का चयन** - सम्पूर्ण व्यापारिक क्रियाओं का केन्द्र बिन्दु लक्षित उपभोक्ता ही होता है। सही उपभोक्ता तक संदेश पहुँचाना ही सबसे बड़ी विजय है। आइए इन्टरनेट उपयोगकर्ताओं के सम्बन्ध में कुछ नवीन अध्ययनों को जानने का प्रयास करें।

1. शोध अध्ययन बताते हैं कि ऑन लाइन इन्टरनेट द्वारा उत्पाद क्रय करने वाले उपभोक्ता प्रायः अपने घर पर ही इन्टरनेट द्वारा उत्पादों को क्रम करते हैं न कि अपने कार्य स्थल से। प्रायः इन्टरनेट द्वारा उत्पाद क्रय करने में कामकाजी लोगों की संख्या अधिक होती है।

2. इन्हीं शोधों के अनुसार 6 प्रकार के इन्टरनेट उपभोक्ताओं की पहचान की गयी है-

   i. **नये खरीददार** - ये वे लोग होत हैं जो पहली बार इन्टरनेट उपयोग करते हैं और त्वरित क्रय में विश्वास करते हैं।

   ii. **तर्कशील खरीददार** - ये ऐसे खरीददार होते हैं जो इन्टरनेट द्वारा क्रय करने के लिये प्रोत्साहित तो होते हैं किन्तु इनके मन में भ्रम की स्थिति बनी रहती है।

   iii. **खोजी खरीददार** - ये ऐसे खरीददार होते हैं जो नित नये उत्पाद की खोज कर उसे कम मूल्यों पर पाना चाहते हैं।

   iv. **रणनैतिक खरीददार** - ये ऐसे खरीददार होते हैं जो उपलब्ध उत्पादों के मध्या विभिन्न आधारों पर तथा अपने पूर्व क्रम निर्णयों का विश्लेषण कर खरीदारी करने में विश्वास करते हैं।

   v. **उत्साही खरीददार** - ये ऐसे खरीददार होते हैं जो उत्साह में औरों की देखादेखी इन्टरनेट पर प्रायोगिक रूप से क्रय करने का अनुभव करते हैं।

   vi. **नियमित खरीददार** - ये ऐसे खरीददार होते हैं जो अपने जीवन में उपयोग होने वाले अधिकांश उत्पादों को इंटरनेट के माध्यम से खरीदना पसन्द करते हैं।

(3) **आकर्षक एवं गुणी व्यवसायी** - इंटरनेट विपणन युक्ति का सबसे प्रभारी चरण एक आकर्षक तथा गुणों से भरपूर वेबसाइट का निर्माण होता है जो कि व्यापारिक प्रतिष्ठान का प्रवेश द्वार होता है। इस प्रकार एक

आकर्षण वेबसाइट का निर्माण व्यापारिक प्रतिष्ठान अपने तकनीकी विशेषज्ञों द्वारा या फिर वाह्य तकनीकी विशेषज्ञों द्वारा करा सकता है। यह व्यापारिक प्रतिष्ठान के वित्तीय स्थिति एवं उसके क्रियात्मक पक्ष पर निर्भर करती है।

(4) **इंटरनेट आधारित विपणन मिश्रण** - जिस प्रकार एक व्यापारिक सामान्य दिनों के लिये विपणन मिश्रण का निर्धारण करती है ठीक उसी प्रकार इन्टरनेट के माध्यम से व्यापार करने वाली संस्थाओं को इंटरनेट आधारित विपणन मिश्रण के विभिन्न तथ्यों के प्रति रणनीति बनानी होती है। इन्हें प्रायः उत्पाद, मूल्य, वितरण, संवर्द्धन आदि से सम्बन्धित रणनीतियाँ शामिल होती है।

(5) **इंटरनेट आधारित विपणन रणनीति का उपयोग** - यह बिन्दु विपणन रणनीति का अन्तिम सोपान है जिसके अन्तर्गत बनायी गयी इंटरनेट आधारित विपणन रणनीति को लागू करने का प्रयास किया जाता है इस समय दो प्रमुख कारक होते हैं जिनका ध्यान एक कुशल रणनीति कार को रखना चाहिये।

(i) लक्षित उपभोक्ता

(ii) समय

रणनीति के अंतिम चरण में लागू की गयी रणनीति का मूल्यांकन किया जाता है। जिसमें उससे होने वाले फायदे या नुकसान का अन्दाजा लगाकर इसमें मूलचूल परिवर्तन किये जाते हैं यह मूल्यांकन कम्पनी को उद्देश्यों उसके लक्षित ग्राहक उसके मध्यस्थ आन्तरिक तथा बाह्य वातावरण आदि को ध्यान में रखकर किये जाते हैं।

5.5 ई-विपणन सम्बन्धी सामान्य नियम

विपणन के महान विद्वान एवं सलाहकार प्रो0 जॉन ग्राहम के अनुसार इंटरनेट सम्बन्धी विपणन युक्ति निर्धारण के पूर्व कुछ सामान्य नियमों को सदैव ध्यान में रखना चाहिए आइये इन नियमों का समझने का प्रयास करें-

1. इन्टरनेट द्वारा व्यापार करने की कोशिश उन्हीं व्यापारी के संस्थानों को करनी चाहिए जिनके पास इससे सम्बन्धित न्यायोचित कारक हो क्योंकि इन्टरनेट सभी के लिए नहीं है।

2. इन्टरनेट अकेला नहीं होता बल्कि यह एक जाल है जिसमें सम्पूर्ण विश्व को उपभोक्ता एक कड़ी में बंधे रहते हैं। अतः हमारी विपणन युक्ति सभी को ध्यान में केन्द्रित कर होनी चाहिए किसी एक के लिए नहीं।

3. इन्टरनेट के उपयोग का यह आशय कदापि नहीं होना चाहिए कि हम अपने पुराने विपणन मिश्र को भूल जायें अर्थात् इन्टरनेट तथा इससे अलग दोनों प्रकार के विपणन मिश्र का साथ-साथ उपयोग किया जाये।

4. इन्टरनेट के माध्यम से व्यापार करने वाली कम्पनियों को भी योजना के अभिन्न चरन आकस्मिक योजना पर विशेष रूप से ध्यान रखना चाहिए क्योंकि इन्टरनेट पर सभी कुछ पूर्व योजना बद्ध ढंग से चलता रहे या तो सम्भव हो भी सकता है और नहीं भी।

5. इन्टरनेट के द्वारा बेची गयी प्रत्येक उत्पाद से कुछ न कुछ नई खोज करते रहना चाहिए। जिससे इन्टरनेट पर हो रहे परिवर्तनों को आधार बना कर पुराने ढंग से व्यापारिक पद्धति में सुधार किया जा सके।

6. व्यापारिक प्रतिष्ठान की वेबसाइट का उपयोग करने वाले प्रत्येक व्यक्ति को भविष्य का उपभोक्ता मानना चाहिए और उससे घनिष्ट और निरन्तर सम्बन्ध स्थापित करने की क्रिया करते रहना चाहिए।

7. यह बारह महीने सातो दिन और चौबीसों घण्टे चलने वाली दुकान है जिसको कोई संख्यात्मक सीमा नहीं होती है। अतः प्रबन्धक को सदैव परिवर्तनों और आकर्षकों के प्रति जागरूक रहना चाहिए।

8. इन्टरनेट उपयोग करने वाले उपभोक्ता अधिक दिमागी, तर्कशील सचनाग्राही तथा लगातार क्रय करने वाले होते हैं जो कि पुराने ढर्रे के उत्पाद निर्माताओं से कुछ अधिक सुव्यवस्थित सुसंगठित तथा गुणात्मक होने की आशा रखते हैं।

NMDC-130

5.6 ई-विपणन वर्तमान और भविष्य :

प्रत्येक विचार के दो पक्ष होते हैं चुनौतियाँ और सम्भावनायें ठीक उसी प्रकार ई-विपणन के समक्ष भी अनेकों चुनौतियों और सम्भावनायें उपस्थित होती रहती है।आइये इनको जानने का प्रयास करें।

1. एक व्यक्ति प्रतिष्ठान के स्वयं वर्ग सभ्यता उसके इन्टरनेट रूपी व्यापार के परिवर्तन में रूकावट पैदा करती है।

2. इन्टरनेट विपणन के लिए आधारभूत सुविधाएँ अति आवश्यक है। आधारभूत सुविधायें इन्टरनेट विपणन के विकास में सहायक है न कि इन्टरनेट विपणन आधारभूत सुविधाओं में।

3. इन्टरनेट विपणन के माध्यम से उत्पादों तथा व्यापार के समस्त विन्दुओं पर एक साथ प्रकाश नहीं डाला जा सकता।

4. इन्टरनेट उपभोक्ताओं को माँग अधिक गुणवत्ता परक और गहराई युक्त होती है।

5. इन्टरनेट के माध्यम से विपणन में प्रत्येक उपभोक्ता को व्यक्तिगत सममपर्क करना होता है।

6. मध्यस्थ इस विद्या में अपने को अलग-अलग महसूस करते हैं जो कि दीर्घकालिक

व्यापार के लिये अच्छा नहीं होता है।

7. इन्टरनेट माध्यम तथा बगैर इन्टरनेट माध्यम दोनों में सामंजस्य बनाना थोड़ा कठिन साबित होता है।

8. इन्टरनेट के माध्यम से विपणन में किन व्यवस्थाओं को आन्तरिक स्त्रोतों से प्राप्त किया जाये तथा किन व्यवस्थाओं को बाह्य स्त्रोतों से यह निर्णय सदैव से ही अत्यन्त कठिन रहा है।

9. नियोजित पूँजी और आधार भूत सुविधाओं में प्रारम्भिक अवस्था में अधिक विनियोजित होता है।

इसी प्रकार आइये ई-विपणन के भविष्य और सम्भावनाओं पर भी एक नजर डाले-

1. वर्तमान दौर में ई-विपणन ने सभी को आकर्षित किया है चाहे तो उत्पादनकर्ता हो, ग्राहक हो या फिर आपूर्तिकर्ता सभी इसके जादू का आनन्द ले रहे हैं और अपने व्यापार को ई-विपणन के जाल में बाँधते जा रहे हैं। अतः आने वाला भविष्य ई-विपणन को और प्रतिस्पर्धात्मक बनायेगा।

2. नये - नये आधुनिक उपकरणों के आ जाने से सम्पूर्ण विश्व में तथा छोटे बड़े शहरों में इन्टरनेट का जाल आसानी से पहुँचाया जा रहा है तथा सूचना के आदान प्रदान के लिए भावी माध्यम के रूप इसे स्थापित कर सभी प्रमुख क्षेत्रों के इसके उपयोग में सम्बन्ध में प्रशिक्षित तथा प्रहोत्साहित किया जा रहा है। इस प्रकार आने वाला समय ई-समाज का होगा जहाँ ई-विपणन का बोल बाला होगा।

3. जिस प्रकार व्यापारी और व्यापारी, व्यापारी और उपभोक्ता, व्यापारी और आपूर्तिकर्ता तथा व्यापारी और मध्यस्थ आपस में एक दूसरे की उद्देश्यपूर्ति के लिए निरन्तर इन्टरनेट के माध्यम से प्रयासरत है भविष्य में इनका गठजोड इन्टरनेट के माध्यम से घर-घर में पहुँच जायेगा और ज्ञान आधारित समाज का निर्माण सम्भव होगा

5.6 सारांश :

व्यापार के नवीन माध्यम के रूप में आज के प्रतिस्पर्धात्मक दौर में ई-विपणन ने अपनी जादुई ताकत से सम्पूर्ण विश्व के उपभोक्ताओं और उत्पादनकर्ताओं का एक दूसरे के सामने केवल एक क्लिक की दूरी पर लाकर खड़ा कर दिया है। अब यह हम पर निर्भर करता है कि कैसे हम एक दूसरे को प्रभावित कर खरीदारी और गुणवत्ता युक्त उत्पादों को प्रत्यक घर तक पलक झपकते ही पहुँचा सकते हैं।

यह सर्वाविदित है कि यह व्यापार की अत्यान्त कम खर्चीला माध्यम है किन्तु

इसके लिये बेहतर आधारभूत संरचना उपकरण तथा तकनीकि विशेषज्ञों की आवश्यकता पड़ती रहेगी। यह जिम्मा हमारी राज्य और केन्द्र सरकारों का भी है कि वो कैसे ई-व्यापार और ई-समाज में परिवर्तन करने का कार्य करती है। निश्चित ही आगे आने वाला समय ई-प्रबन्धकों का होगा जो ई-विपणन के माध्यम से अपने लक्षित उपभोक्ताओं को सन्तुष्ट कर अधिक से अधिक लाभ कमाने की कोशिश कर अपने संगठन के पूर्व निर्धारित उद्देश्यों को पाने का प्रयास करेंगे।

5.7 उपयोगी शब्द कोष :

(क) **इन्टरनेट** - इन्टरनेट को इलेक्ट्रानिक जाल के नाम से भी जानते हैं। यह इस्तेमाल करने वालों का अन्तर्राष्ट्रीय मंच है जिससे सभी एक दूसरे से कम्प्यूटर और आधुनिक फोन के माध्यम से जुड़े रहते हैं।

(ख) **डब्लू0 डब्लू0 डब्लू0** - एक ऐसा जाल जो सम्पूर्ण दुनिया को अपने साथ जोड़ने की क्षमता रखता है। यह 3 डब्लू ही इन्टरनेट उपयोग करने वाली व्यापारिक संस्थाओं तथा उनके उपभोक्ता का पता बताने में उपयोगी होता है।

(ग) **ई-विपणन** - उपभोक्ताओं तक अपने उत्पाद, मूल्य स्थान तथा संचार के प्रयोगों में इन्टरनेट का उपयोग ही ई-विपणन कहलाता है।

(घ) **ई-वाणिज्य** — जब उत्पादनकर्ता ग्राहकों के साथ अथवा अपने मध्यस्थों के साथ व्यापारिक लेनदेन इन्टरनेट के माध्यम से करते हैं। तब इस व्यापारिक लेन-देन को ई-वाणिज्य की संज्ञा दी जाती है।

5.8 महत्वपूर्ण प्रश्नावली :

प्रश्न-1 ई-व्यापार और ई-विपणन के मध्य अन्तर स्थापित करे?

प्रश्न-2 ई-व्यापार और ई-विपणन के मध्य अन्तर स्थापित करें ?

प्रश्न-3 ई-व्यावार तथा पारम्परिक व्यापार को विभिन्न आधारों पर परिभाषित करें ?

प्रश्न-4 ई-व्यापार से सम्बन्धित विपणन युक्ति निर्धारण की प्रक्रिया को सविस्तार समझाइये?

प्रश्न-5 ई-व्यापार के आधारभूत तत्वों का विश्लेषण करें ?

प्रश्न-6 आज के दौर में ई-विपणन के समक्ष आने वाली चुनौतियों को समझाइये ?